अभिनव कृषि

वर्ष-3 अंक-1 मार्च-2021

विशेषांक

● सब्जी उत्पादन ● जायद खेती ● संरक्षित खेती ● मृदा प्रबन्धन ● चारा उत्पादन ● बीज उत्पादन

प्रसार शिक्षा निदेशालय

कृषि विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)-324001

FORTUNE 500
1967
से भारतीय किसान के सच्चे साथी
मिट्टी की जान, किसान की शान.
IFFCO
पूर्णतः सहकारी स्वामित्व
Wholly owned by Cooperatives
POTASSIUM NITRATE
MONO-POTASSIUM PHOSPHATE
MONO AMMONIUM PHOSPHATE
सागरिका
SAGARIKA
ZINC SULPHATE MONOHYDRATE
N P K
नए उत्पाद
पानी में घुलनशील व
विशेष उर्वरक
उत्तम खाद, उचित दाम
FOLLOW US:
INDIAN FARMERS FERTILISER COOPERATIVE LIMITED
IFFCO Sadan, C-1 District Centre, Saket Place, New Delhi - 110017, INDIA
Phones : 91-11-26510001, 91-11-42592626. Website : www.iffco.coop
इण्डियन फारमर्स फर्टिलाइजर कोआपरेटिव लिमिटेड
जयपुर तृतीय तल, नेहरू सहकार भवन, जयपुर, राजस्थान, राजस्थान 302001
दूरभाष : 0141-2740660, 2740307, 2740307

ललित पाटीदार
(M.Sc. Horticulture)
मो. 9413023482, 9887437524
अम्बिका मॉर्डन एग्रीकल्चर
अम्बिका
मॉर्डन एग्रीकल्चर
KRISHAJ
SUMITOMO CHEMICAL
Ramadey
DUPONT
BAYER
BASF
We create chemistry
नर्सरी टूल्स, मल्च, स्प्रे पम्प, खाद, बीज, कीटनाशक, वर्मी कम्पोस्ट, ऑर्गेनिक खाद एवं दवाई के लिए सम्पर्क करें।
चन्द्रभागा रोड़, झालरापाटन, जिला-झालावाड़ (राज.) 326023

कृषि प्रौद्योगिकी प्रबन्धन एवं गुणवत्ता सुधार केन्द्र

(Agriculture Technology Management and Quality Improvement Centre -ATMQIC)

प्रसार शिक्षा निदेशालय

कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

स्थापना के उद्देश्य

- नवोन्मेषी कृषि प्रौद्योगिकी का प्रभावी हस्तानान्तरण
- किसान कॉल सेन्टर की स्थापना
- कृषि तकनीकी संग्रहालय की स्थापना
- कृषि संसाधन केन्द्रों की स्थापना
- कृषि आदान व उत्पाद बिक्री केन्द्र की स्थापना
- कृषक उपयोगी साहित्य प्रकाशन
- विश्वविद्यालय द्वारा विकसित विभिन्न तकनीकियों का संकलन एवं प्रदर्शन

स्वामी प्रकाशक : डॉ. एस.के. जैन, निदेशक, प्रसार शिक्षा निदेशालय
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
Website : https://aukota.org
Email: abhinavkrishi.aukota@gmail.com
दूरभाष : **0744- 2326727**

पुस्त प्रेष्य _____

मैसर्स डायमण्ड प्रिन्टर्स, शॉप नं. 2, काली मस्जिद के पास, नई धानमण्डी, कोटा-324007 (राज.) द्वारा मुद्रित तथा
निदेशक, प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)-324001 से प्रकाशित। प्रधान संपादक डॉ. एस.के. जैन ।

अभिनव कृषि

वर्ष–3 अंक–1 मार्च–2021 पृष्ठ संख्या : 51

संरक्षक

प्रोफेसर डी.सी. जोशी
कुलपति, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

सम्पादक मण्डल

डॉ. एस.के. जैन
निदेशक प्रसार शिक्षा
प्रधान संपादक एवं प्रकाशक

डॉ. के.सी.मीना
सहा. आचार्य (प्रसार शिक्षा)
संपादक एवं समन्वयक

डॉ.राकेश कुमार बैरवा
सहा. आचार्य (शस्य विज्ञान)
संपादक

डॉ. डी.के. सिंह
आचार्य (उद्यान विज्ञान)
सह–संपादक

डॉ. महेन्द्र सिंह
आचार्य (पशुपालन)
सह–संपादक

डॉ. सेवाराम रूण्डला
विषय विशेषज्ञ (मृदा विज्ञान)
सह–संपादक

श्रीमती गुंजन सनाढ्य
विषय विशेषज्ञ (गृह विज्ञान)
सह–संपादक

सुश्री सरिता
तकनीकी सहायक
सह–संपादक

मनोनीत सलाहकार मण्डल

डॉ.प्रताप सिंह
निदेशक, अनुसंधान

डॉ. आई.बी. मौर्य
अधिष्ठाता, उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़

डॉ. एम.सी. जैन
अधिष्ठाता, कृषि महाविद्यालय, कोटा

डॉ. मुकेश चन्द गोयल
निदेशक, पी.एम.एण्ड.ई.

सदस्यता शुल्क

- ☞ त्रैमासिक (प्रति अंक) 30 रू.
- ☞ वार्षिक (चार अंक) 100 रू
- ☞ आजीवन (15 वर्ष)1000 रू.

विज्ञापन दरें

(i)	अन्तिम सम्पूर्ण (रंगीन)	रू. 10,000/-
(ii)	प्रथम एवं अन्तिम पृष्ठ के पीछे (रंगीन)	रू. 6,000/-
(iii)	अन्तिम आधा पृष्ठ (रंगीन)	रू. 5,000/-
(iv)	प्रथम एवं अन्तिम पृष्ठ के पीछे आधा पृष्ठ (रंगीन)	रू. 3,000/-
(v)	अन्दर का सम्पूर्ण पृष्ठ (श्याम–श्वेत)	रू. 4,000/-
(vi)	अन्दर का आधा पृष्ठ (श्याम–श्वेत)	रू. 2,000/-

नोट : यदि विज्ञापन वर्ष के सभी चार अंकों के लिए दिया जाता है तो उपरोक्त दरों में 25 प्रतिशत की कमी की जायेगी।

सदस्यता एवं नवीनीकरण हेतु

खाता धारक : DEE, Agriculture University, Kota
बैंक : ICICI BANK, Nayapura, Kota
खाता संख्या : 687801700345
IFSC : ICIC0006878

लेख एवं सुझाव भेजने का पता

"अभिनव कृषि"
प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
बोरखेड़ा, बारां रोड़ कोटा (राजस्थान) – 324001
Email: abhinavkrishi.aukota@gmail.com दूरभाष : 0744- 2326727

प्रकाशक: प्रसार शिक्षा निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
मुद्रक : डामयण्ड प्रिन्टर्स, नई धानमण्डी, कोटा (राज.) मो. 9414231079

नोट–"अभिनव कृषि" में प्रकाशित आलेख में दी गई जानकारी स्वयं लेखकों की है। किसी भी प्रकार के विवाद के लिए प्रकाशक एवं सम्पादक मण्डल जिम्मेदार नहीं होगा। तथा इसमें प्रकाशन हेतु लेखकों का सदस्य होना अनिवार्य है।

अभिनव कृषि

वर्ष–3 अंक–1 मार्च–2021

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	गर्मी के मौसम में सब्जी उत्पादन शिल्पा देवी, अरविन्द नागर, राजेन्द्र कुमार यादव, निर्मल कुमार मीणा एवं राजेश शर्मा	1-4
2.	सब्जियों में जैविक व अजैविक समस्याओं के निवारण हेतु कलम प्रवंधन (ग्राफ्टिंग) की उपयोगिता संजीव कुमार, एस. एन. सरवैया एवं मित्तल दुधात	5-8
3.	आलू की खुदाई, पैकिंग एवं भंडारण करते समय ध्यान रखने योग्य बातें डी.एल. यादव, राजेंद्र कुमार यादव, हरफूल मीणा, प्रताप सिंह एवं बी. एल. नागर	9-10
4.	अनाजों एवं बीजों का सही रख रखाव व भण्डारण राजेश कुमार, एस. सी. शर्मा, वर्षा गुप्ता एवं संध्या	11-12
5.	जायद में दालों की खेती कर लाभ कमायें खजान सिंह, वर्षा गुप्ता एवं के.सी. मीना	13-14
6.	जायद ऋतु में लाभकारी खीरे की खेती दीपक मीना एवं मोनिका मीना	15-16
7.	हाडौती में गेहूँ की नौलाई जलाने की समस्या एवं समाधान सुभाष असवाल, सुनिल कुमार, पप्पू खटीक, के.सी. मीना, टी.सी. वर्मा एवं डी.के. सिंह	17-19
8.	बीज उत्पादन और प्रसंस्करण के दौरान गुणवत्ता नियंत्रण संदीप कुमार बांगड़वा, आर.बी. दूबे, भावना गोस्वामी एवं सुनिल कुमार	20
9.	मिट्टी एवं जल परीक्षण की आवश्यकता एवं नमूना लेने की विधि अनिल कुमार शर्मा, भैरुलाल कुम्हार, आकाश तंवर एवं राजेन्द्र कुमार नागर	21-24
10.	लवणीय एवं क्षारीय मृदा का सुधार बृजेश यादव एवं पी.के. गुप्ता	25-26
11.	उधमीयता विकास में विपणन दक्षता के.सी. मीना एवं लोकेश कुमार मीना	27-29
12.	राजस्थान के झालावाड़ जिले में सागौन की खेती/रोपण दोगुनी आय का स्त्रोत रवि यादव एवं एस.बी.एस. पांडेय	30-31
13.	औषधीय पौधों की खेती : किसानो की आमदनी बढ़ाने का एक तरीका चन्द्र प्रकाश मीना, रमेशी मीना एवं के.सी. मीना	32-33
14.	सरंक्षण खेती किसान के लिए वरदान सत्यनारायण रेगर एवं मोनिका मीना	34-36
15.	बायोचार से मृदा एवं पर्यावरण स्वास्थय विनोद कुमार यादव, आर. के. यादव, चिराग गौतम एवं यामिनी टॉक	37-38
16.	मृदा में कार्बनिक पदार्थ और सूक्ष्म जीवों का महत्व केशव प्रसाद कुर्मी, प्रवेश सिंह चौहान, एन. आर. मीणा एवं एस. एन. राहुल	39-42
17.	अधिक चारा उत्पादन हेतु चारा फसलों का फसल चक्र प्रबन्धन भैरु लाल कुम्हार, विजय बहादूर सिंह, कृति स्वर्णकार, नरेन्द्र नटवाडीया एवं विजय कुमार	43-44
18.	फसल उत्पादन के लिए मृदा सूक्ष्मजीव समुदायों की संरचना एवं विविधता का आंकलन डूंगर आर. चौधरी, अविनाश मिश्रा एवं मंगल सिंह राठौड़	45-48
19.	जैविक खेती : स्वस्थ जीवन एवं टिकाऊ उत्पादन का आधार पप्पू खटीक, सुभाष असवाल, सुनिल कुमार, डी.के. सिंह,टी.सी. वर्मा व के.सी. मीना	49-50
20.	पशुपालन से करें आय दौगुनी घनश्याम मीना, राकेश कुमार बैरवा एवं कमला महाजनी	51

डॉ. एस.के. जैन
निदेशक (प्रसार शिक्षा)

Directorate of Extension Education
प्रसार शिक्षा निदेशालय
AGRICULTURE UNIVERSITY, KOTA
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा
Borkhera, Baran Road, Kota 324 001 (Raj.)
बोरखेडा, बारां रोड, कोटा 324001 (राज.)

प्रधान संपादक की कलम से.....

सभी पाठकों को आगामी नव वर्ष विक्रम संवत् 2078 की हार्दिक शुभकामनाऐं। मैं आप सभी से कोरोना संक्रमण से बचने एवं सुरक्षित रहने के लिए सरकार द्वारा जारी आवश्यक दिशा निर्देशनों का पालन करने की अपेक्षा रखता हूँ। हम सभी परिस्थितियों में कृषि कार्यों को सतत् रूप से संपादित करते रहें है। पूर्व में महामारी से बेरोजगार हुऐ अनेकों नवयुवकों ने कृषि नवाचारों से नई इबारत लिखी है, कृषि एक महान कार्य है एवं कृषकों की आय बढ़ाने हेतु कृषि वैज्ञानिक, उद्यमी एवं कृषक हमेशा प्रयासरत् है।

इस समय हमें 2022 तक प्रधानमंत्री के किसान आय को दौगुना करने के दृष्टिकोण को साकार करने के लिए रोड़ मैप में विभिन्न कृषि नवाचारों, वैज्ञानिक कृषि उत्पादन, प्रसंस्करण एवं प्रबंधन तकनीकियों का खेती में भरपूर समावेश करने की जरूरत है। इसी क्रम में पत्रिका के इस अंक में वैज्ञानिकों एवं शोध विद्यार्थियों से प्राप्त कृषि समसामायिक एवं विभिन्न कृषि तकनीक विषयों को सम्मिलित किया गया है। विशेष रूप से गर्मी के मौसम में सब्जी उत्पादन, गेंहूँ की नौलाईयों को जलाने से नुकसान एवं समाधान, कृषि उत्पादों का कटाई एवं भण्डारण, जायद फसलों की खेती, मिट्ठी जांच, उद्यमियता विकास में विपणन दक्षता, संरक्षित खेती, मृदा सुक्ष्म जीवों की कृषि में उपयोगिता एवं चारा फसल उत्पादन आदि विषयों पर वैज्ञानिक लेख सम्मिलित किये गये है। आशा है कि आप को निःसंदेह यह लाभकारी सिद्ध होगें।

मैं पत्रिका के सभी पाठकों, संपादक मंडल के सभी सदस्यों, लेखकों, कृषि शोध विद्यार्थियों एवं कृषकों को उनके सराहनीय कार्यों एवं सहयोग हेतु शुभकामनाऐं देता हूं।

(एस.के. जैन)

गर्मी के मौसम में सब्जी उत्पादन

शिल्पा देवी, अरविन्द नागर, राजेन्द्र कुमार यादव, निर्मल कुमार मीणा एवं राजेश शर्मा
रिसर्च स्कोलर, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा नई दिल्ली एवं कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

चीन के बाद भारत का सब्जी उत्पादन में दूसरा स्थान है। राष्ट्रीय बागवानी मंडल, गुरुग्राम (2013–14) के अनुसार भारत में सब्जी फसले लगभग 9.4 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में होती है। इनका कुल उत्पादन 162.90 मी. टन है, तथा सब्जियों की उत्पादकता 17.4 मिलियन टन प्रति हेक्टेयर है। भारत में गर्मी के मौसम में उगाई जाने वाली महत्वपूर्ण एवं प्रमुख सब्जियां कद्दूवर्गीय (खीरा, तरबूज, खरबूज, लौकी, करेला, तोरई एवं कद्दू), टमाटर वर्गीय फसले (टमाटर, बैंगन एवं मिर्च), फलीदार सब्जियां (ग्वार एवं लोबिया), पत्तेदार सब्जियां (चौलाई, पालक एवं धनिया) एवं भिन्डी आदि शामिल है। इन सभी सब्जियों का स्वस्थ जीवन यापन में महत्वपूर्ण योगदान हैं। इन सब्जियों में कई पोषक तत्वों जैस प्रोटीन (ग्वार एवं लोबिया), विटामिन–ए (टमाटर, कद्दू एवं पालक), विटामिन–सी (टमाटर एवं मिर्च) फाइबर और फोलिक एसिड और भी बहुत से खनिज पदार्थ जैसे कैल्शियम एवं मैगनिशियम भी पर्याप्त मात्रा में होते हैं। टमाटर, कद्दू एवं पालक में पाये जाने वाला विटामिन–ए रतोंधी रोग से बचाता है जबकी विटामिन–सी, स्कर्वी रोग के प्रति रोधक क्षमता प्रदान करता है। करेले में पाये जाने वाला चेरेटीन नामक रासायनिक पदार्थ शुगर के रोगियों के लिए बहुत ही लाभदायक साबित होता है। खीरे का भी प्रयोग सलाद के रूप में किया जाता है जो गर्मियों में शरीर को ठंडक प्रदान करता है। टमाटर एवं तरबूज में पाये जाने वाला लाइकोपीन, आघात और हृदय रोगों के जोखिम को कम करने के साथ–साथ रक्तचाप को सामान्य बनाए रखने और रक्त कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करने में भी सहायक होता है। गर्मी के मौसम में बोई जाने वाली सब्जियों की पौधशाला वं बुआई की जाने वाली सब्जी फसलो में अधिक फसल उत्पादन के लिए इन फसलों को विभिन्न प्रकार के जैविक तनावों मुख्यतः इनमे लगने वाले हानिकारक कीटो वं बीमारियों के प्रकोप से बचाना अति आवश्यक होता है।

उन्नत बीज के स्त्रोत : गर्मी के मौसम में उगाई जाने वाली सब्जियों के बीज किसान भाई विभिन्न सरकारी संस्थानों जैसे भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के शाकीय विज्ञान संभाग एवं बीज उत्पादन इकाई तथा क्षेत्रीय इकाई कटराइ (हिमाचल प्रदेश), भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी, भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, हॉसरघटा, बेंगलुरु, राष्ट्रीय बीज निगम, नई दिल्ली, नजदीकी कृषि विज्ञान केंद्र, राज्यों के जिला कृषि अनुसंधान कार्यालय, राज्यों के राज्य बीज निगम, नजदीकी कृषि विश्वविद्यालयों आदि से प्राप्त कर सकते है।

कब व कैसे करे खेत की तैयारी : गर्मी के मौसम में उगाई जाने वाली सब्जियों को विभिन्न प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है परंतु इनकी सफल खेती के लिए भूमि उच्च कार्बनिक पदार्थ युक्त अच्छी तरह से सुखी हुई एवं उपजाऊ होनी चाहिए। उच्च कार्बनिक पदार्थ युक्त खेत उत्पादन के साथ–साथ उत्पाद की गुणवत्ता बढ़ाने में भी सहायक रहता है। खेत में बुआई से पूर्व मिट्टी पलटने वाले हल से 3–4 बार गहरी जुताई करनी चाहिए तथा पाटा चलाकर भूमि को भूरभूरी व समतल कर लेना चाहिए। खेत की तैयारी से लगभग एक महीने पहले खेत में अच्छी प्रकार से सड़ी हुई 22–25 टन गोबर की खाद डालनी चाहिए। मृदा में पोषक तत्वों की कमी को जानने के लिए इसका परीक्षण कराये तथा वैज्ञानिक अनुसंशा के अनुसार सूक्ष्म तत्वों का चयन करे। कद्दूवर्गीय एवं टमाटर वर्गीय सब्जियों के लिए रेतीली दोमट मृदा जिसका पी. एच. 6.0–7.0 हो उपयुक्त रहती है। पालक की फसल को उन मृदाओ में भी उगाया जा सकता है जिनका पी. एच. मान 7.0 से अधिक हो या जहां सिंचाई के पानी में लवणों की अधिक मात्रा हो।

टमाटर, मिर्च और बैंगन की उन्नत तरीके से पौध तैयार कैसे करे?

गर्मी में उगाई जाने वाली सब्जी फसलो (टमाटर, बैंगन एवं मिर्च) की पौध तैयार करने के लिए पौधशाला में बीज की बुआई जनवरी–फरवरी के दौरान कर सकते है। बीज को बोने से पूर्व फफूँदनाशक रसायन कैप्टान या बाविस्टीन (2–3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज) से सूखा उपचार करें। मिट्टी का भी फफूँदनाशक रसायन से उपचार करें। पौधशाला में पौध उठी हुई क्यारियों पर तैयार करना चाहिए। इन क्यारियों की लंबाई कम से कम 3 मीटर व चौड़ाई 0.6 मीटर रखनी चाहिए। बीजो की बुआई पंक्तियों में करे तथा बुआई की गहराई 1.5–2.0 से.मी. रखे। बीजो को बोने के बाद गोबर की खाद व मिट्टी के मिश्रण से ढक कर हजारे की सहायता से हल्की सिंचाई करनी चाहिये। यदि संभव हो तो क्यारियों को पुवाल या सूखी घास से जमाव आने तक ढक देना चाहिये जिससे क्यारियों में नमी बनी रहती है तथा बीजो का एक समान जमाव होता है। गर्मी में उगाई जाने वाली सब्जी फसलो में पौध 35–40 दिन में रोपाई के लिए तैयार हो जाती है। प्लग ट्रे विधि से टमाटर, बैंगन व मिर्च की विषाणु रहित पौध तैयार की जा सकती है। टमाटर एवं बैंगन के लिए 18–20 घन से.मी. आकार के खानो वाली ट्रे का प्रयोग होता है जबकि शिमला मिर्च व मिर्च के लिए 8–10 घन से.मी. आकार के खानो वाली ट्रे उपयुक्त रहती है। कोकोपीट, वर्मीकुलाइट व परलाइट को 3:1:1 के अनुपात या मिट्टी, बालू व अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद 1:1:1 के अनुपात (आयतन के आधार पर) में मिश्रण बनाकर ट्रे के खानो को भर ले व बीजो की बुआई 1 से.मी. गहराई पर करे। पॉलीथीन विधि से भी इन फसलो की पौध तेयार की जा सकती है। इसके लिए 15 × 10 सें.मी. आकार की पॉलीथीन की थैलियों जिसमे जल निकास की व्यवस्था हेतु सूजे की सहायता से 5–6 स्थानों पर छेद हो उनमें 1:1:1 अनुपात में मिट्टी, बालू व सड़ी हुई गोबर की खाद भर ले। बीज की बुआई लगभग 1 सें.मी. की गहराई पर करके बालू की पतली परत बिछा लेते हैं तथा हजारे की सहायता से पानी लगाये। टमाटर की संकर किस्मों के लिए 250 ग्राम बीज तथा अन्य किस्मों के लिए 350–400 ग्राम बीज प्रति हैक्टर, मिर्च के लिए 1.0–1.2 कि. ग्रा. बीज प्रति हैक्टर तथा बैंगन की बुआई के लिए 500 ग्रा. बीज प्रति हैक्टर पर्याप्त होता है।

खाद व उर्वरक : खाद व उर्वरकों का प्रयोग मृदा की जाँच के अनुसार करना चाहिए। इसके लिए निकटतम कृषि विज्ञानं केंद्र या जिला कृषि विभाग की मृदा प्रयोगशाला से मिट्टी की जांच करवा लेनी चाहिए। कच्ची गोबर की खाद का प्रयोग सब्जी फसलो के लिए नहीं करना चाहिए क्यों की इनका प्रयोग करने से मृदा में दीमक का प्रकोप हो जाता है। खाद व उर्वरक का प्रयोग तालिका–1 में दी गयी मात्रा के अनुसार करना चाहिए।

सिंचाई कब व कैसे करें : जब भी मृदा मे नमी की कमी हो सिंचाई करनी चाहिये। खेत में पानी का भराव लम्बे समय तक नहीं होना चाहिए। यदि खेत मे ऐसा हो जाता है तो तुरंत जल निकास की व्यवस्था करनी चाहिये। सामान्यतः गर्मी के मौसम में उगाई जाने वाली सब्जियों में 5–7 दिनो के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिये। बूंद–बूंद सिंचाई विधि भी इन फसलों में इस्तेमाल की जाती है, जिससे न केवल 30–40 प्रतिशत पानी की बचत होती है बल्कि पानी में घुलनसील उर्वरक (एन. पी. के. 19:19:19) भी सिचाई के साथ अच्छी बढ़वार व अधिक उपज लेने के लिए दिये जा सकते है।

खरपतवार नियंत्रण : गर्मी के मौसम में सब्जी फसलो की अच्छी बढ़वार एवं अधिक उपज के लिए आरंभिक अवस्था में खरपतवारों का नियंत्रण करना अत्यधिक आवश्यक है। इस अवस्था में खरपतवार सब्जी फसलो से पानी, प्रकाश एवं पोषक तत्वों के लिए प्रतियोगिता करते है। इसके साथ ही साथ विभिन्न प्रकार के हानिकारक कीट व बीमारियों को भी शरण देते है जिससे इन फसलो की उपज में भारी गिरावट आ जाती है तथा उपज लगभग 20–80 प्रतिशत तक कम हो सकती है। ये खरपतवार फसलो में शुरूवाती 4–6 सप्ताह तक अधिक नुकसान करते है। पहली दो सिंचाई करने के बाद में हल्की निराई गुडाई करके इनको निकाला जा सकता है। रासायनिक खरपतवार नियन्त्रण के लिए पेन्डीमिथेलीन (30 ई.सी.) 400मि.ली. को 200 ली. पानी में घोलकर प्रति एकड रोपाई से पहले छिड़काव करे।

दलहनी सब्जी फसलों में टीकाकरण करके करे बुआई : दलहनी सब्जी फसलों जैसे लोबिया एवं ग्वार की बुआई से पूर्व बीजो को फफूंदनाशक, कीटनाशक एवं राइजोबियम कल्चर से उपचारित करें। राइजोबियम कल्चर (250 ग्रा. प्रति एकड) से उपचारित करना अत्यंत लाभप्रद होता है इससे पोधो की जड़ो में अधिक नत्रजन स्थायीकरण ग्रंथिकाए बनती है जिससे अधिक मात्रा में वायुमंडलीय नत्रजन का स्थायीकरण होता है जिससे इनकी उपज बढ़ने के साथ साथ गुणवत्ता में भी वृद्धि होती है व खेत में नाइट्रोजन की मात्रा भी बढ़ जाती है। गुड का 5 प्रतिशत (50 ग्रा. प्रति लिटर पानी में) के हिसाब से घोल बना कर राइजोबियम कल्चर को अच्छे से मिला ले। बीजों को सीमेंट के फर्श या पॉलीथीन शीट पर फैला लें तथा कल्चर के घोल को बीजों पर डाल कर समान रूप से लिप्त कर लें। उपचारित बीज को छायादार जगह पर सुखा के बुआई करें। अन्य सब्जी फसलो में बीज को बोने से पूर्व फफूँदनाशक रसायन कैप्टान या बाविस्टीन (2–3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज) से सूखा उपचार कर लेना चाहिए।

गर्मी के मौसम में सब्जी फसलो की विशेष क्रियाएं एवं ध्यान रखने योग्य बाते

- गर्मी के मौसम में उगाई जाने वाली सब्जी फसलो के लिए मृदा की गहरी जुताई करनी चाहिए जिससे हानिकारक कीटो के लार्वा भूमि की सतह पर आ जाये है। ऐसे कीटो को पक्षी अपने भोजन के रूप में खा जाते है जिनसे गर्मी में सब्जी फसलो में इनका प्रकोप भी कम हो जाता है।
- टमाटर की फसल को सहारा देने से इसके फल मृदा के सम्पर्क में नहीं आते है जिससे इनको सड़ने एवं गलने से बचाया जा सकता है।
- टमाटर की प्रत्येक 16 पंक्तियो के बाद एक पंक्ति हजारे की लगानी चाहिए जिससे इसमें लगने वाले फल छेदक का प्रकोप कम हो जाता है।
- टमाटर एवं कद्दूवर्गीय सब्जी फसलो में फल मक्खी के रोकथाम के लिए मीठे जहर, जो 50 मिली लीटर मैलाथियान का आधा कि.ग्रा. चीनी या गुड़ के साथ मिला कर 50 लीटर पानी में बनाये गए घोल का प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें। फल मक्खी के नरों को आकर्षित करने के लिए ''मिथाइल यूजीनोल'' गन्ध पाश का प्रयोग भी किया जा सकता है।
- पालक की पत्तियो की कटाई 15–20 दिन के अन्तराल पर करते रहना चाहिए। पालक की लगभग 6–8 कटाई की जा सकती है।
- अधिक खारे पानी का प्रयोग विशेषतः ड्रिप–सिंचाई के लिए नहीं करना चाहिए।
- अगर सिंचाई का पानी अधिक खारा हो तो इसको सहन करने वाली फसले जैसे पालक एवं विलायती पालक की खेती करना अधिक लाभप्रद रहता है।
- भूमि और जलवायु के अनुकूल ही किस्मों का चयन करना चाहिए।
- रासायनिक कीटनाशको, उर्वरको एवं खरपतवारनाशी आदि विश्वस्त स्रोत से ही खरीदें।
- गोबर की खाद या कम्पोस्ट, सुपर फॉस्फेट व म्युरेट ऑफ पोटाश खेत तैयार करते समय मिट्टी में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए।
- बीजाई से पूर्व बीज उपचार अवश्य करना चाहिए।
- रोगों और कीड़ों से ग्रसित पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें।
- नत्रजन खाद डालने के बाद सिंचाई अवश्य कर दें।
- खाद पौधे के पत्तों या अन्य भाग पर नहीं पड़नी चाहिए।
- कीटनाशी तथा फफूँदनाशी दवाइयों का घोल आवश्यकता होने पर ही बनायें।
- आपस में अनुकूलता के आधार पर ही दवाइयों को मिलायें।
- दवाई के घोल को प्लास्टिक या शीशे के बर्तन में ही घोलें।
- रसायनों के प्रयोग के उपरांत आवश्यक प्रतिक्षा अवधि के बाद ही तुड़ाई करें ताकि कटाई उपरांत उत्पादन में रसायन का अवशेष न रहे।
- रसायनों का कम से कम प्रयोग करें तथा जैविक विकल्पों पर बल दें।
- तुड़ाई सावधानी से एवं उचित समय पर करें तथा इस बात का ध्यान रखें कि न तो पौधे को और न ही उत्पादन को हानि पहुंचे।

तालिका : 1 गर्मी मौसम में उगाई जाने वाली महत्वपूर्ण सब्जियों की कृषि क्रियाये

फसल	आवश्यक तापमान	आवश्यक मृदा	बीज दर प्रति हैक्टर	पौधे लगाने का समय	बुवाई का समय	फसल अंतरण	उर्वरकों की निर्धारित मात्रा (प्रति हैक्टर)	कटाई
खीरा	18-24°C	दोमट या बलुई दोमट पी. एच. 5.5–6.8	2.5–3.5 कि.ग्रा.	सीधी खेत में बुआई	फरवरी–मार्च	पंक्ति से पंक्ति– 1.5 मी. पौधे से पौधे–30–45 सें.मी.	15–20 टन सड़ी हुई गोबर की खाद 40–50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 40–60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 100 कि.ग्रा. पोटाश	फल जब 15–25 सें.मी. तथा कोमल अवस्था में हो
खरबूज	20-25°C	बलुई दोमट पी. एच. 6.5–7	2.5–3.5 कि.ग्रा.	सीधी खेत में बुआई	फरवरी–मार्च	पंक्ति से पंक्ति– 2.5 मी. पौधे से पौधे–0.5 सें.मी.	15–20 टन सड़ी हुई गोबर की खाद 50–100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 40–80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 20–40 कि.ग्रा. पोटाश	फल लता के डंठल से आसानी से अलग होने पर एवं जालीदार किस्मों में जाली का भाग हरा तथा जाली का रंग मटमैला सफेद होने पर
तरबूज	24-27°C	बलुई दोमट पी. एच. 6.5–7	4.5 कि.ग्रा.	सीधी खेत में बुआई	फरवरी–मार्च	पंक्ति से पंक्ति– 2.5 मी. पौधे से पौधे–0.5 सें.मी.	15–20 टन सड़ी हुई गोबर की खाद 50–100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 50–80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 50–100 कि.ग्रा. पोटाश	फलों को थपथपाने पर मन्द आवाज के आने पर, फल के सबसे निकटतम स्तम्भ संजनी के सूख जाने पर
लौकी	24-27°C	दोमट या बलुई दोमट पी. एच. 5.5–6.8	3–5 कि.ग्रा.	सीधी खेत में बुआई	फरवरी–मार्च	पंक्ति से पंक्ति– 3 मी. पौधे से पौधे–0.5 सें.मी.	15–20 टन सड़ी हुई गोबर की खाद 40–50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 40–60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 20–40 कि.ग्रा. पोटाश	बुआई के 60–70 दिनों के बाद जब फल कोमल अवस्था में हो तथा त्वचा मुलायम एवं चमकीली हरी हो
करेला	25-30°C	दोमट या बलुई दोमट पी. एच. 6–7	4–6 कि.ग्रा.	सीधी खेत में बुआई	फरवरी–मार्च	पंक्ति से पंक्ति–1.5–2.5 मी. पौधे से पौधे–0.5 सें.मी.	15–20 टन सड़ी हुई गोबर की खाद 100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 50 कि.ग्रा. पोटाश	बुआई के 50–60 दिनों के बाद जब फल कोमल अवस्था में हो
कद्दू	18-30°C	दोमट या बलुई दोमट पी. एच. 6.5–7.5	6–8 कि.ग्रा.	सीधी खेत में बुआई	फरवरी–मार्च	पंक्ति से पंक्ति–2–3 मी. पौधे से पौधे–0.6–1.5 मी.	15–20 टन सड़ी हुई गोबर की खाद 60–100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 50–60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 60–80 कि.ग्रा. पोटाश	बुआई के 75–180 दिनों के बाद जब फल पूरी तरह पक जाए तथा फल का डंठल सूख जाए एवं फल का रंग पीला या नारंगी हो जाए
तोरई	24-27°C	दोमट या बलुई दोमट पी. एच. 6–7	4–5.5 कि.ग्रा.	सीधी खेत में बुआई	फरवरी–मार्च	पंक्ति से पंक्ति–2.5 मी. पौधे से पौधे–0.4–0.5 मी.	15–20 टन सड़ी हुई गोबर की खाद 100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 50 कि.ग्रा. फश्वस्फोरस 50 कि.ग्रा. पोटाश	बुआई के 60–90 दिनों के बाद जब फल कोमल अवस्था में हो
पेठा	24-30°C	दोमट या बलुई दोमट पी. एच. 6–7.5	5–7 कि.ग्रा.	सीधी खेत में बुआई	फरवरी–मार्च	पंक्ति से पंक्ति–1.5–2.5 मी. पौधे से पौधे–0.6–1.2 मी.	15–20 टन सड़ी हुई गोबर की खाद 40–60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 50–60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 60–80 कि.ग्रा. पोटाश	बुआई के 90–100 दिनों के बाद जब फल पूरी तरह पक जाए तथा फलों से राख या मोमी सतह हटना शुरु हो जाये

फसल	आवश्यक तापमान	आवश्यक मृदा	बीज दर प्रति हेक्टर	पौधे लगाने का समय	बुवाई का समय	फसल अंतरण	उर्वरकों की निर्धारित मात्रा (प्रति हेक्टर)	कटाई
टमाटर	18-27°C	दोमट पी. एच. 6–7	संकर किस्मों– 250 ग्रा. तथा अन्य किस्मों– 350–400 ग्रा.	जनवरी–फरवरी	जब पौध 35–40 दिन की हो तथा 12–15 सें.मी. ऊँची हो जाये	पंक्ति से पंक्ति– 60–75 सें.मी. पौधे से पौधे– 30–45 से. मी.	20–25 टन सड़ी हुई गोबर की खाद 100–150 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 60 कि.ग्रा. पोटाश	बुआई के 75–100 दिनों के बाद तथा दूरस्थ बाजार के लिए फलों का रंग लाल होने से पहले एवं स्थानीय बाजार के लिए फलों का रंग लाल होने पर तुड़ाई करे
बैंगन	25-30°C	दोमट पी. एच. 5.5–6.8	400–500 ग्राम	जनवरी–फरवरी	जब पौध 35–40 दिन की हो तथा 12–15 सें.मी. ऊँची हो जाये	पंक्ति से पंक्ति– 60–75 सें.मी. पौधे से पौधे– 75 से. मी.	20–25 टन सड़ी हुई गोबर की खाद 100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 50 कि.ग्रा. पोटाश	रोपाई के 50–60 दिनों के बाद
मिर्च	20-30°C	दोमट पी. एच. 6.0–6.8	1.0–1.5 कि.ग्रा.	जनवरी–फरवरी	जब पौध 35–40 दिन की हो तथा 12–15 सें.मी. ऊँची हो जाये	पंक्ति से पंक्ति– 45–60 सें.मी. पौधे से पौधे– 30–45 से. मी.	20–25 टन सड़ी हुई गोबर की खाद 120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 60 कि.ग्रा. फश्वस्फोरस 30 कि.ग्रा. पोटाश	रोपाई के 60–90 दिनों के बाद
भिण्डी	25-30°C	दोमट पी. एच. 6.0–6.8	15–20 कि.ग्रा.	सीधी खेत में बुवाई	जनवरी– फरवरी	पंक्ति से पंक्ति– 60 सें.मी. पौधे से पौधे– 20 से. मी.	20–25 टन सड़ी हुई गोबर की खाद 100–125 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 60–75 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 40–60 कि.ग्रा. पोटाश	रोपाई के 40–60 दिनों के बाद या फूल खिलने के 3–4 दिन बाद हरे एवं नरम रेशे रहित फलों की तुड़ाई करे
चौलाई	25-30°C	दोमट या बलुई दोमट पी. एच. 6–7.5	2–2.5 कि.ग्रा.	सीधी खेत में बुवाई	फरवरी–मार्च	पंक्ति से पंक्ति– 30 सें.मी. पौधे से पौधे– 8–10 से. मी.	20–25 टन सड़ी हुई गोबर की खाद 50–60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 20–25 कि.ग्रा. पोटाश	बुआई के 20–25 दिन बाद इसकी पहली कटाई कर लेनी चाहिए
पालक	20-25°C	दोमट या बलुई दोमट पी. एच. 6–7.5	25–30 कि.ग्रा.	सीधी खेत में बुवाई	जनवरी– फरवरी	पंक्ति से पंक्ति– 30 सें.मी. पौधे से पौधे– 5–10 से. मी.	20–25 टन सड़ी हुई गोबर की खाद 90–100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 25–30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 20–25 कि.ग्रा. पोटाश	बुआई के 20–25 दिन बाद इसकी पहली कटाई कर लेनी चाहिए
लोबिया	20-35°C	दोमट या बलुई दोमट पी. एच. 6–7.5	20–25 कि.ग्रा.	सीधी खेत में बुवाई	फरवरी–मार्च	पंक्ति से पंक्ति– 45–60 सें.मी. पौधे से पौधे– 10–15 से. मी.	15–20 टन सड़ी हुई गोबर की खाद 20–25 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 50–70 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 50–70 कि.ग्रा. पोटाश	बुआई के 40–60 दिन बाद फलियों की पहली तुड़ाई कर लेनी चाहिए
ग्वार	20-35°C	दोमट या बलुई दोमट पी. एच. 6–7.5	20–25 कि.ग्रा.	सीधी खेत में बुवाई	फरवरी–मार्च	पंक्ति से पंक्ति–60 सें.मी. पौधे से पौधे– 20 से. मी.	15–20 टन सड़ी हुई गोबर की खाद 10–20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 50–70 कि.ग्रा. फॉस्फोरस 50–70 कि.ग्रा. पोटाश	हरी एवं नर्म फलियों की बुआई के 40–60 दिन बाद पहली तुड़ाई कर लेनी चाहिए

सब्जियों में जैविक व अजैविक समस्याओं के निवारण हेतु कलम प्रबंधन (ग्राफ्टिंग) की उपयोगिता

संजीव कुमार, एस. एन. सरवैया एवं मित्तल दुधात
सब्जी विज्ञान विभाग, ASPEE बागवानी व वानीकी महाविद्यालय, नवसारी कृषि विश्वविद्यालय, नवसारी (गुजरात)

प्रायः सब्जियाँ पोषक तत्वों से समृद्ध होती है इसलिए उन्हे रक्षात्मक भोजन की श्रेणी में रखा गया है, इसके साथ सब्जियाँ खेती विविधता में एक महत्वपूर्ण योगदान दे सकती हैं। परन्तु, जलवायु की अनियतमिता के प्रति सब्जियों की संवेदनशीलता किसी भी विकास अवस्था जैसे कि सामान्य विकास, फल–फूल, उपज इत्यादि को प्रभावित कर सकती है। रक्षित खेती (पॉलीहाउस खेती) ने सब्जियों में विपरीत मौसम में उच्च उत्पादकता एवं अधिक गुणवत्ता प्राप्त करने का विकल्प सुनिश्चित किया हैं। यह तकनीक ग्रामीण, बेरोजगार नवयुवकों को स्वरोजगार प्रदान में सक्षम हैं। रक्षित खेती सब्जियों को अनुकूल पर्यावरण प्रदान करने की क्षमता रखती हैं। मिट्टी जनित बीमारियों के सन्दर्भ में कलम प्रवर्धन एक बहुत सुदृढ़ तकनीक है जो अपेक्षाकृत धीमी पारम्परिक प्रजनन तरीकों के सामने एक उत्तम विकल्प के रूप में उभर रही है। सब्जियों में कलम प्रवर्धन की तकनीक एशिया में कुछ वर्षो से फसल सम्वंधित समस्याओं का निराकरण करने के लिए एक अनन्य बागवानी तकनीक हैं। इस तकनीक में विशिष्ट और संभावित रूटस्टॉक (मूलकांड) के ऊपर अपनी पसंद की जाति या प्रजाति का जोडाण सायन (उपरोप) के रूप में करने से विभिन्न प्रकार के मिट्टी जनित फफूँद और जड़गाठ सूत्रकृमि के प्रति प्रतिरोधक क्षमता बढ़ जाती है। इसके साथ कई अध्ययनों में यह भी दर्शाया गया है कि कलम प्रवर्धन की तकनीक से उत्पादकता और गुणवत्ता को भी बढ़ाया जा सकता है।

कलम (ग्रॉफ्टिं) पद्धति

सब्जियों में कलम पद्धति एक कलात्मक तकनीक है, जिसमें विविध पौधों के दो जीवन भागो जैसे कि रूटस्टॉक (मूलकांड) और सायन (उपरोप) का जोडाण करके एक संयुक्त पौधे के रूप में विकसित होते है। इस तकनीक का उपयोग सब्जियों में उत्पादकता और गुणवत्ता बढ़ाने के साथ–साथ पर्यावरणीय परिवर्तन के प्रतिकुल प्रभाव को घटाने, अजैविक तनाव जैसे कि सूखा, बाढ़, खारापन, अम्लीयता, उच्च व कम तापमान, भारी धातु इत्यादि तथा रोग व कीटो के प्रति सहिष्णुता अथवा प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए हो रहा है।

कलम पद्धति के उद्देश्य

- मिट्टी जनित रोगो एवं जड़ गाठ सूत्रकृमियों के प्रति सहिष्णुता अथवा प्रतिरोधकता।
- पॉलीहाउस में मिट्टी के निर्जीवीकरण के सामने एक नया विकल्प।
- उपज में बढ़ोत्तरी।
- गुणवत्तात्मक मापदडों में सुधार।
- पर्यावरण बदलाव के सामने सहिष्णुता।
- फसल चक्र को बढ़ाने की क्षमता।
- रासायनिक खादों और रसायनो के उपयोग में कटौती।

फसलानुसार कलम पद्धति के उद्देश्य

जैविक तथा अजैविक तनाव में फसलों को सफलतापूर्वक उगाने के लिए कलम पद्धति के उपयोग को निम्नलिखित तालिका में दर्शाया गया है।

तालिका : 1. सब्जियानुसार कलम पद्धति के उद्देश्य

क्र.सं.	सब्जियों के नाम	उद्देश्य
1	करेला	फ्यूजेरियम मुरझान रोग के प्रति सहिष्णुता।
2	खीरा	फ्यूजेरियम मुरझान रोग, फायटोफ्थोरा और ठण्ड के प्रति सहिष्णुता, नर–मादा का अनुपात अनुकूल करने में सक्षम।
3	बैंगन	बैक्टीरियल, वर्टिसिलियम, फ्यूजेरियम मुरझान रोग तथा कम तापमान, सूत्रकृमि के प्रति सहिष्णुता, पौधों की शक्ति और उपज बढ़ाने में सक्षम।
4	खरबूजा	फ्यूजेरियन मुरझान रोग, पौधों के विकार, फायटोफ्थोरा रोग और ठण्ड के प्रति सहिष्णुता।
5	टमाटर	बैक्टीरियल, फ्यूजेरियम मुरझान रोग, ठण्ड के प्रति प्रतिरोधकता। लाइकोपिन तत्व में बढ़ोत्तरी करने में सक्षम।
6	तरबूज	फ्यूजेरियम मुरझान रोग और ठण्ड के प्रति सहिष्णुता। सूखे के प्रति प्रतिरोधकता।

सब्जियों में कलम बनाने के लिए मूलभूत आवश्यकताएँ

- संभावित मूलकाण्ड (Rootstock)
- प्रचलित परन्तु रोगो के प्रति संवेदनशील किस्मों के सायन।
- रूटस्टॉक और सायन (उपरोप) के बीच में संगतता।
- कलम बनाने के साधन जैसे कि ट्यूब, क्लिप, पिन इत्यादि।
- कलम बनाने से पूर्व रूटस्टॉक और सायन की पौध तैयार करने के लिए ग्रीन हाउस का प्रयोग किया जाता है। ग्रीन हाउस को ढकने के लिए पराबैंगनी किरण स्थायीकृत शीट का उपयोग करना चाहिए और इस हाउस में जाने के लिए दो द्वारों का प्रबंधन होना जरूरी है।
- हीलिंग चैम्बर (जोड़ाण घर) का मुख्य उद्देश्य कलम जोड़ाण की

प्रकिया को उत्तम वातावरण प्रदान करना है। हीलिंग चैम्बर एक ढकी हुए संरचना है जिसमे नमी और कम प्रकाश जैसे घटको का विधिवत प्रावधान किया जाता है। सामान्यतः प्लास्टिक के टनल के अंदर भी जोड़ाण प्रक्रिया को सुनिश्चित कर सकते है। आमतौर पर पच्चीस से तीस (25-30°C) डिग्री सेंटीग्रेड तापमान, 85-90% आर्द्रता, कम रोशनी जैसे घटको को नियंत्रित करके कलम जोड़ाण प्रक्रिया सफल बना सकते है।

- अनुकूलन चैम्बर का उपयोग कलमी पौधे को रोपणी के लिए तैयार करना है। अनुकूलन प्रकिया मुख्यतः कलमी पौधे के पत्तो को जलने और सूखने से बचाती है और 7–10 दिन में रोपणी के लिए तैयार करती है।

सब्जियों में कलम बनाने के दौरान ध्यान देने योग्य महत्वपूर्ण बाते

- सायन का चयन करते समय पौध में कम से कम दो सच्ची पत्तियों का होना जरुरी है।
- रूटस्टॉक का चयन करते समय पहली सच्ची पत्तियों की उपस्थिति के साथ पौध की लम्बाई 7–9 से.मी. होनी चाहिए।
- कलम करने की प्रक्रिया को सामान्य ब्लेड से भी किया जा सकता है परन्तु हेन्डल वाले पेंसिल चाकू से कलम करने से अच्छे परिणाम मिलने की सम्भावना रहती है।
- अच्छी नमी संग्रह करने वाले मिट्टी या कोकोपिट का उपयोग करना चाहिए।
- कलम बनाने की प्रक्रिया से पहले मूलकांड और सायन को 2–3 दिनों के लिए सूर्य प्रकाश में रखना चाहिए।
- कलम प्रक्रिया के दौरान समान व्यास वाले मूलकांड और उपरोप का चयन करना चाहिए।
- कलम प्रवर्धन में जोड़ाण प्रक्रिया को सुनिश्चित करने के लिए मूलकांड और उपरोप के संवहनी बंडलों का संपर्क ग्राफ्टिंग क्लिप जैसे साधनो से करना चाहिए।
- मूलकांड और उपरोप के कटे हुए भाग को सूखने से बचाना चाहिए जिसके लिए तैयार कलमी पौधे को तुरंत छायादार जगह या नमी नियंत्रण घर में रखना चाहिए।
- अवांछित विकास से बचने के लिए कलमी पौधों को आवश्यकतानुसार पानी देना चाहिए।

ग्रॉफ्टि़ के साधन : ग्रॉफ्टिंग क्लिप, ट्यूब, पिन

ग्रॉफ्टिंग क्लिप

स्क्रीन हाउस

ग्रॉफ्टिंग ट्यूब

हीलिंग चैम्बर (जोड़ाण घर)

अनुकूलन चैम्बर

हीलिंग प्रक्रिया

कलम जोड़ाण

रोपण के लिए तैयार कलम

कलम के प्रकार : कलम बनाने के विविध तरीके जैसे कि क्लेफ्ट ग्रॉफ्टिंग, ट्यूब ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग, स्लांट कट ग्राफ्टिंग, हॉल इन्सर्शन ग्रॉफ्टिंग, यंत्रीकृत ग्राफ्टिंग, सूक्ष्म ग्राफ्टिंग इत्यादि हैं जिनका संक्षिप्त में वर्णन नीचे दर्शाया गया है।

1. क्लेफ्ट ग्रॉफ्टिंग : टमाटर वर्गीय फसलों में इस कलम पद्धति का उपयोग सफलता पूर्वक किया जा सकता है। इस विधि के अन्तर्गत मूलकांड के बीज की बुआई उपरोप से 5–6 दिन पहले की जाती है। मूलकांड में 1–2 पत्तियाँ रखकर भूमध्यवर्ती काट देने के उपरांत संवहनी बंडलों के मध्य 1.5–2.0 से.मी. उर्ध्वाधर (वर्टीकल) कट लगाया जाता है। वहीं सायन को जड़ से अलग करने के बाद दोनों तरफ से छाल निकाल दी जाती है और इसके उपरांत सायन को मूलकांड की T आकार की नोच में फिट कर के ग्रॉफ्टिंग क्लिप की मदद से संवहिनी बंडलों के जोड़ाण को मजबूत किया जाता है।

तैयार करने की प्रक्रिया

सायन तैयार करने की प्रक्रिया

क्लेफ्ट ग्रॉफ्टिंग पद्धति

2. ट्यूब ग्रॉफ्टिंग : ट्यूब ग्रॉफ्टिंग को पौध की शुरुआती अवस्था में भी किया जा सकता है, जिसके लिए छोटे व्यास वाले ट्यूब की जरुरत रहती है। इस विधि में चाकू की सहायता से मूलकांड में तिरछा कट दिया जाता है तथा उपरोप में भी ऐसी ही प्रकिया को अपनाया जाता है। तदोपरांत, मूलकांड और उपरोप के कटे हुए भागो को ट्यूब की मदद से जोड़ाण की स्थिति में लाने के बाद तुरंत नमी नियंत्रण घर में रखा जाता है।

ट्यूब ग्रॉफ्टिंग पद्धति

3. टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग : सामान्यतः इस विधि का उपयोग खीरा, तरबूज, खरबूजा जैसी सब्जियों में किया जाता है। इस विधि में मूलकांड और उपरोप के बीजो की बुआई में अंतराल रखा जाता है ताकि कलम बनाते समय दोनों के बीजपत्रक के निचे के भाग (हाइपोकोटाइल) का व्यास एक सामान हो। मूलकांड के प्रकांड का अग्रभाग काटकर सिर्फ एक या दो पत्तियाँ रखी जाती हैं। मूलकांड और उपरोप के हाइपोकोटाइल को जीवा के समान कट लगाने के उपरांत दोनों जिभाओं को ग्रॉफ्टिंग क्लिप की मदद से जोड़ दिया जाता हैं। कलमी पौधे में जोड़ाण की प्रकिया पूर्ण होने की स्थिति में उपरोप के हाइपोकोटाइल को ब्लेड की सहायता से काट दिया है। इस प्रकार कलमी पौधा 12–15 दिनों में रोपाई के लिए तैयार हो जाता है।

टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग

4. स्लांट कट ग्राफ्टिंग : यह विधि यांत्रिक (रोबोट) कलम बनाने के लिए विकसित की गयी है। इस विधि को अपनाते समय मूलकांड के पहले पत्ते व कली को तिरछे कट से दूर किया जाता है तथा उपरोप के हाइपोकोटाइल में भी तिरछा कट लगाया जाता है। इसी तरह से तैयार दोनों कटे हुए भागों को ग्राफ्टिंग क्लिप की मदद से जोड़ दिया जाता है। इस विधि का उपयोग सभी प्रकार की सब्जियों में किया जा सकता है।

स्लांट कट ग्राफ्टिंग

5. हॉल इन्सर्शन ग्रॉफ्टिंग: यह कलम पद्धति कद्दू वर्गीय सब्जियों में सबसे लोकप्रिय है। इस विधि का उपयोग करते समय मूलकांड दो बीज पत्रों की अवस्था वाला होना चाहिए तथा उपरोप में कम से कम दो सच्चे पत्ते होना जरूरी है। इस पद्धति में एक पिन की मदद से मूलकांड की हाइपोकोटाइल में हॉल (छिद्र) किया जाता है और उपरोप के पतले हाइपोकोटाइल को इस हॉल में डालकर क्लिप की मदद से जोड़ा जाता है।

हॉल इन्सर्शन ग्रॉफ्टिंग

6. यंत्रीकृत ग्राफ्टिंग : यांत्रिक कलम पद्धति की सफलता पौधों की आकार, चीरे के स्थान तथा विधि व उपकरण के चयन पर निर्भर करती है। यांत्रिक कलम पद्धति के माध्यम से सफलता का दर बढ़ जाता है। एक अर्ध संचालित ग्राफ्टिंग मशीन दो ऑपरेटरों की मदद से प्रति घंटे 600 से 800 कलम बना सकती है जबकि संपूर्ण स्वयं संचालित रोबोट इतने ही समय में 90 से 93 सफलता के साथ 1000 से 1200 कलम बना सकता है। यांत्रिक पद्धति का उपयोग व्यापारिक दृष्टि से बहुत संख्याओं में कलम बनाने के लिए किया जाता है।

यंत्रीकृत ग्राफ्टिंग

7. सूक्ष्म ग्राफ्टिंग पद्धति: इस विधि में मेरिस्टमैटिक ऊतकों से बहुत ही छोटे अथवा सूक्ष्म आकार के एक्सप्लांट का उपयोग बहुत ही नियंत्रित वातावरण में किया जाता है। इस प्रकार की कलम पद्धति विषाणु रोग को दूर करने के लिए किया जाता है क्योंकि मेरिस्टम के अग्रभाग में विषाणु की मौजूदगी नहीं होती। परंतु यह पद्धति बहुत ही महंगी होती है।

सफलतापूर्वक कलम बनाने के लिए महत्वपूर्ण बातें

- संभावित मूलकांड का चयन।
- मूलकांड और उपरोप के बीच में अनुकूलता।
- सही कलम पद्धति का चुनाव।

तालिका : 2 कलम पद्धति के साथ जुड़ी कुछ कारक एवं समस्याऐं

कारक	समस्या
श्रमिक	कलम बनाने तथा देखभाल के लिए कुशल श्रमिकों की कमी
तकनीक	मूलकांड और कलम पद्धति के चयन की प्रक्रिया
व्यवस्थापन	तापमान, नमी व खाद आदि घटकों को नियंत्रित करने की प्रक्रिया
मूलकांड और उपरोप में अनुकूलता	अनियमित परिपक्वता, जोड़ाण प्रक्रिया में देरी, पर्यावरणीय घटकों के अनियंत्रण के कारण मूलकांड और उपरोप में प्रतिकूलता
वृद्धि एवं विकास	अनियन्त्रिक वनस्पति वृद्धि और कलमी पौधों में विकार की उपस्थिति
फल गुणवत्ता	फल का आकार, स्वाद, आंतरिक सड़न के कारण फल गुणवत्ता में कमी
खर्चा	कुशल श्रमिकों की मजदूरी और मूलकांड के बीज की कीमत, व्यापारिक कलम उत्पादन के लिए मशीन अथवा रोबोट हेतु पूंजी
उपरोप में जड़ विकास	अन्तः व बाहय जड़ वृद्धि, जोडाण के स्थान पर जड़ विकास तथा उपरोप की पत्तियों में विकृति
मूल कांड में वायरस	अनापेक्षित बीमारी का प्रकोप जैसे कि वायरस

संभावित रूटस्टॉक (मूलकांड)

मूलकांड में विविध जैविक व अजैविक तनाव की स्थिति में पौधे को सहिष्णुता अथवा प्रतिरोधकता प्रदान करने की क्षमता होती है। विभिन्न सब्जियों में इस प्रकार के प्रतिरोधी अथवा सहिष्णु मूलकांड उपलब्ध हैं, जिनका वर्णन निम्न तालिका में योग्य व प्रचलित कलम पद्धति के साथ दर्शाए गए हैं।

तालिका : 3 सब्जियों में योग्य एवं प्रचलित कलम पद्धतियां

क्र.सं.	सब्जियाँ	जाति, प्रजाति	सही कलम प्रक्रिया	विशेषताएं
1.	टमाटर	सोलानम पेन्नेल्ली	हॉल इन्सर्शन ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग	सूखे के प्रति सहिष्णुता
2.	टमाटर	सोलानम चिस्मानी	हॉल इन्सर्शन ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग	क्षार के लिए प्रतिरोधी
3.	टमाटर	सोलानम गैलापागेंस	हॉल इन्सर्शन ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग	क्षार के लिए प्रतिरोधी
4.	टमाटर	सोलानम हैब्रोकैतेस	हॉल इन्सर्शन ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग	ठंड, कीड़ों और बीमारियों (टोबेको मोजेक वायरस) के लिए प्रतिरोधी
5.	टमाटर	सोलानम चाईलेन्स	हॉल इन्सर्शन ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग	सूखा एवं पी.एम.वी., टी.एम.वी. जैसे रोगों के लिए प्रतिरोधी
6.	टमाटर	सोलानम नीओरिकी	हॉल इन्सर्शन ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग	जीवाणु जनित रोगों के सामने प्रतिरोधी
7.	टमाटर	सोलानम पिंपिनेलिफोलियम	हॉल इन्सर्शन ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग	रंग गुणवत्ता वाले तत्वों से भरपूर एवं रोगों के सामने प्रतिरोधी
8.	टमाटर	सोलानम लाइकोपर्सिकम वार सरासिफोर्म	हॉल इन्सर्शन ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग	अधिक नमी के सामने सहिष्णुता, फफूँद और जड़ रोगों के सामने प्रतिरोधी
9.	टमाटर	सोलानम पेरूविअनम	हॉल इन्सर्शन ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग	वायरस जनित रोगों एवं सूत्र कृमि के सामने प्रतिरोधी
10.	बैंगन	सोलानम मेकरोकार्पम एवं सोलानम गिलो	क्लेफ्ट ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग	सूखे के प्रति सहिष्णुता
11.	बैंगन	सोलानम टॉरवम	क्लेफ्ट ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग, स्लांट कट ग्रॉफ्टिंग	बैक्टीरियल, फ्यूजेरियम मुरझान रोग एवं जड़ गाठ कृमि के सामने प्रतिरोधी। अजैविक तनावों के प्रति सहिष्णुता
12.	बैंगन	सोलानम खासिआनम, सोलानम वायरस	क्लेफ्ट ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग, स्लांट कट ग्रॉफ्टिंग	तना व फूल छेदक कीट के सामने प्रतिरोधी
13.	बैंगन	सोलानम झेन्थोकार्पम	क्लेफ्ट ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग, स्लांट कट ग्रॉफ्टिंग	फोमोसिस झुलसा रोग के सामने प्रतिरोधी
14.	बैंगन	सोलानम सिस्मब्रिफोलियम	क्लेफ्ट ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग, स्लांट कट ग्रॉफ्टिंग	बैंगन के छोटे पर्ण वाले रोग (Little leaf of brinjal) के सामने प्रतिरोधी
15.	बैंगन	सोलानम ओरिक्युलेटम	क्लेफ्ट ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग, स्लांट कट ग्रॉफ्टिंग	बैंगन के छोटे पर्ण वाले रोग (Little leaf of brinjal) के सामने प्रतिरोधी
16.	बैंगन	सोलानम सिस्मब्रिफोलियम और सोलानम इंडिकम	क्लेफ्ट ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग, स्लांट कट ग्रॉफ्टिंग	जड़ गाठ कृमि के सामने प्रतिरोधी
17.	मिर्च	केप्सीकम चाइनेंसिस, केप्सीकम बकाटम	क्लेफ्ट ग्रॉफ्टिंग, स्लांट कट ग्रॉफ्टिंग	एन्थ्रेक्नोज बीमारी के सामने प्रतिरोधी
18.	मिर्च	केप्सीकम प्युवेसेंस, केप्सीकम माइक्रोकार्पम	क्लेफ्ट ग्रॉफ्टिंग, स्लांट कट ग्रॉफ्टिंग	चूर्णित आसिता (च्वूकमतल उपसकमू) के सामने प्रतिरोधी
19.	खीरा	कुकुमिस हिस्ट्रिक्स	टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग, स्लांट कट ग्रॉफ्टिंग	मृदुरोमिल आसिता (Downy mildew) वायरस, जड़ गाठ कृमि के सामने प्रतिरोधी
20.	खरबूजा	कुकुमिस मेलो वार, मोमोर्डिका	टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग, स्लांट कट ग्रॉफ्टिंग	चूर्णिल आसिता एवं मृदुरोमिल आसिता के सामने प्रतिरोधी
21.	खरबूजा	कुकुमिस ट्राईगोनस	टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग, स्लांट कट ग्रॉफ्टिंग	फल मक्खी के सामने प्रतिरोधी
22.	खरबूजा	कुकुमिस अंगुरिया, कुकुमिस फिसिफोलिया, कुकुमिस मेनुलिफेरौस	टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग, स्लांट कट ग्रॉफ्टिंग	सूत्र कृमि के सामने प्रतिरोधी
23.	खरबूजा	कुकुरबिटा मोस्चाटा	टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग, स्लांट कट ग्रॉफ्टिंग	फ्यूजेरियम मुरझान रोग के सामने प्रतिरोधी, कम तापमान के सामने सहिष्णुता और वृद्धि बढ़ाने में सहायक
24.	खरबूजा	बेनिनकासा हिसिपडा (पेठा)	टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग, स्लांट कट ग्रॉफ्टिंग	फ्यूजेरियम मुरझान रोग के सामने प्रतिरोधी और वृद्धि बढ़ाने में सहायक
25.	तरबूज	पेठा	हॉल इन्सर्शन ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग, स्प्लिस कट ग्रॉफ्टिंग	फ्यूजेरियम मुरझान रोग के सामने प्रतिरोधी
26.	तरबूज	कद्दू, छप्पन कद्दू	टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग, क्लेफ्ट ग्रॉफ्टिंग	फ्यूजेरियम मुरझान रोग के सामने प्रतिरोधी, कम तापमान के सामने सहिष्णुता और वृद्धि बढ़ाने में सहायक
27.	कद्दू	कुकुरबीटा लुन्दिलियाना	हॉल इन्सर्शन ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग	चूर्णिल आसिता के सामने प्रतिरोधी
28.	पेठा	बेनिनकासा हिसिपड़ा (प्रतिरोधी जाति)	टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग, क्लेफ्ट ग्रॉफ्टिंग	फ्यूजेरियम मुरझान रोग के सामने प्रतिरोधी
29.	आलू	सोलानम डेस्मीसम	टयूब ग्रॉफ्टिंग, हॉल इन्सर्शन ग्रॉफ्टिंग, टंग अप्रोच ग्रॉफ्टिंग	पछेती झुलसा के सामने प्रतिरोधी

आलू की खुदाई, पैकिंग एवं भंडारण करते समय ध्यान रखने योग्य बातें

डी.एल. यादव, राजेंद्र कुमार यादव, हरफूल मीणा, प्रताप सिंह एवं बी. एल. नागर
कृषि अनुसंधान केन्द्र, उम्मेदगंज, अनुसंधान निदेशालय, कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

सब्जियों में आलू की फसल एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है क्योंकि यह एक लोकप्रिय एवं पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्व प्रदान करने वाला खाद्य है। आलू की खेती देश के बड़े भाग पर की जाती है। हमारे देश में आलू की खेती मैदानी एवं पहाड़ी दोनों ही क्षेत्रों में की जाती है। आलू को सब्जियों का राजा कहा जाता है। वर्तमान में आलू के उत्पादन में भारत का दूसरा स्थान है। राजस्थान में आलू मुख्यतः कोटा, धौलपुर, भरतपुर, गंगानगर, सिरोही, अलवर, बूंदी, धौलपुर, हनुमानगढ एवं जालौर में उगाया जाता है। शायद ही कोई ऐसा रसोई घर होगा, जहाँ पर आलू ना दिखे। इसकी मसालेदार तरकारी, पकौड़ी, चॉट, पापड चिप्स जैसे स्वादिष्ट पकवानों के अलावा चिप्स, भुजिया और कुरकुरे भी हरजवां के मन को भा रहे हैं, प्रोटीन, स्टार्च, विटामिन C और K अलावा आलू में अमीनो अम्ल जैसे ट्रिप्टोफेन, ल्यूसीन, आइसोल्यूसीन आदि काफी मात्रा में पाये जाते है. आलू हल्की से लेकर भारी दोमट मिट्टी में अच्छा होता है। आलू वाले खेत में जल का निकास होना अति आवश्यक है। बीजाई के समय हल्की मिट्टी लगाएं व बीजाई के 25–30 दिन बाद मिट्टी चढ़ाएं। इससे हरे आलुओं की संख्या कम हो जाती है। अगर खेत में खरपतवार हो तो बीजाई के 25–30 दिन बाद पहली निराई करें व बाद में मिट्टी चढ़ाएं। खरपतवार नाशक दवा का प्रयोग करें। इसका प्रयोग करते समय भूमि में पर्याप्त नमी का होना आवश्यक है। उधर, आलू की खुदाई करते समय विशेष ध्यान रखना होगा। खुदाई के समय खेत में अधिक नमी नहीं होनी चाहिए। फसल पकने पर आलू खुदाई का उत्तम समय मध्य फरवरी से मार्च द्वितीय सप्ताह तक है। 30 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान आने से पूर्व ही खुदाई पूर्ण कर लेना चाहिए। आलू का भण्डारण आलू की सुषुप्ता अवधि भण्डारण को निर्धारित करती है। भिन्न–भिन्न प्रजातियों के आलू की सुषुप्ता अवधि भिन्न–भिन्न होती है, जो आलू खुदाई के बाद 6–10 सप्ताह तक होती है। यदि आलू को बाजार में शीघ्र भेजना है तो शीत गृह में भण्डारित करने की आवश्यकता नहीं है। इसके लिए कच्चे हवादार मकानों, छायादार स्थानों में आलू को स्टोर किया जा सकता है।

आलू की खुदाई

आलू की खुदाई बड़े पैमाने पर तो मशीनों से की जाती है, लेकिन यदि आप छोटे किसान हैं तो हल से खुदाई कर सकते हैं। बस इसमें ध्यान रहे कि आलू कटे फटे नहीं हो, क्योंकि ऐसा होने से आलू खराब हो जाता है। खेत में खुदाई के समय कटे और सड़े आलू के कंदों को अलग कर देना चाहिए, खुदाई छंटाई और बोरियों में भरते समय और बाजार भेजने के समय इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि आलू का छिलका न उतरे साथ ही उन्हें किसी प्रकार का क्षति नहीं होनी चाहिए तो बाजार भाव अच्छा रहता है। आलू की खुदाई उस समय करनी चाहिए जब आलू के कंदों के छिलके सख्त हो जाएं। हाथ से खुदाई करने में ज्यादा मजदूरों के साथ समय भी ज्यादा लगता है। उस की जगह बैल या ट्रैक्टर से चलने वाले डिगर से खुदाई करें तो आलू का छिलका भी कम छिलता है, जब कि हाथ या हल से आलू कट जाते हैं। आलू के कट या छिल जाने पर भंडारण के समय उस में बीमारी ज्यादा लगती है। खुदाई के समय खेत में ज्यादा नमी या सूखा नहीं होना चाहिए। इस के लिए खुदाई के 15 दिन पहले ही फसल में सिंचाई रोक देनी चाहिए। आलू की खुदाई से पहले यह जरूर देख लेना चाहिए कि कहीं आलू का छिलका अभी कच्चा तो नहीं है। कुछ आलुओं को खोदकर अंगूठे से रगड़ें, अगर छिलका उतर जाए तो खुदाई कुछ दिन तक नहीं करनी चाहिए।

खुदाई के बाद कटे सड़े आलू छांटकर निकाल दें। ऐसा न करने पर कटे सड़े आलू अच्छे आलुओं को भी सड़ा देते हैं। खुदाई के बाद कटे, छिले, फटे और बीमार आलुओं को निकालकर बचे हुए स्वस्थ आलुओं को 1 से डेढ़ मीटर ऊंचा और 4–5 मीटर चौड़ा ढेर बनाकर छाया में सुखाया जाता है। आलुओं को सुखाने से फालतू नमी सूख जाती है, जिससे आलुओं की क्वालिटी में सुधार होता है और वे सड़ने से बचते हैं. सूरज की सीधी रोशनी पड़ने से आलू हरापन या गहरा बैंगनी रंग ले लेता है, इस तरह का आलू खाने के लिए अच्छा नहीं होता है, परंतु बीज के लिए यह ठीक होता है।

आलू की ग्रेडिंग

आलू की खुदाई के बाद आलू की सही तरह से क्योरिंग करनी चाहिए ताकि आलू के छिलके पक जाएं और ढुलाई में उतरे नहीं.अच्छी तरह क्योरिंग के बाद सड़े गले व कटे फटे आलुओं को ढेर से बाहर निकाल कर साफ आलुओं की आकार के आधार पर ग्रेडिंग करनी चाहिए। ग्रेडिंग किए हुए बीज, खाने व प्रोसेसिंग के आलुओं का भाव बाजार में अच्छा मिलता है। ग्रेडिंग हाथ से, झन्ने से या ग्रेडर मशीन से की जाती है। आलू की ग्रेडिंग 3 हिस्सों में जैसे 80 ग्राम से बड़े (बड़ा), 40–80 ग्राम (मध्यम) और 25–40 ग्राम तक (छोटे) ढेर में की जातीहै।

पैकिंग व रखरखाव

आलुओं को उन के आकार के अनुसार अलग अलग बोरियों में भरकर रखें। बोरों में रखते समय इस बात का ध्यान रखें कि 50 किलो ग्राम आलू ही एक बोरी में भरा जाए। इससे बोरियों के रख रखाव में मजदूरों को आसानी होती है। ध्यान रखें कि उपचारित आलू का इस्तेमाल खाने के लिए न किया जाए। बाजार की मांग के अनुसार छोटे या बड़े पैकेट में पैकिंग कर उन पर अपने ब्रांड और आलू की प्रजाति का नाम भी लिखना चाहिए। ढुलाई के समय यह सावधानी बरतनी चाहिए कि आलू को ऊंचे से न पटका जाए, क्योंकि पटकने से आलू ऊपर से न भी टूटे तो अंदर से फट जाते हैं। आलू को पूरे साल उपलब्ध कराने के लिए इसे कोल्ड स्टोरेज में रखना पड़ता है जो काफी खर्चीला है। कोल्ड स्टोरेज से निकला आलू महंगा होता है और इस के कारण आलू का भाव बाजार में समय के साथ साथ नई फसल की खुदाई तक बढ़ता जाता है। मुख्य फसल को ढेर में भंडारण की घर पर सुविधा हो, तो उस का इस्तेमाल करना चाहिए ताकि फसल को लंबे समय तक बेचा जा सके। मुख्य फसल की कुछ मात्रा कोल्ड स्टोर में रखनी चाहिए और कुछ मात्रा ढेर के रूप में छायादार जगह पर स्टोर करनी चाहिए। बाजार की मांग को देखते हुए थोड़ा थोड़ा करके आलू को बाजार में बेचना चाहिए। कोल्ड स्टोर में रखे हुए आलू को बाजार भाव अच्छे होने पर बेचना चाहिए।

अनाजों एवं बीजों का सही रख रखाव व भण्डारण

राजेश कुमार, एस. सी. शर्मा, वर्षा गुप्ता एवं संध्या
यांत्रिक कृषि फार्म, उम्मेदगंज, कोटा एवं कृषि अनुसंधान केन्द्र, उम्मेदगंज, कोटा

भारत एक कृषि प्रधान देश है जिसकी अधिकांश जनसंख्या गांवों में रहती है और कृषि पर निर्भर है। उन्नत पैदावार तकनीक के प्रयोग से कुल खाद्यान्न उत्पादन बढा है लेकिन अवैज्ञानिक तरीके से भण्डारण के कारण अनाज की गुणवत्ता व मात्रा में कमी आती है। कीटों, रोडेन्टस, सूक्ष्म जीवों व अवैज्ञानिक तरीके से भण्डारण के कारण लगभग 10 प्रतिशत का कटाई उपरान्त नुकसान होता है भारत में हर साल लगभग 14 मिलियन टन का नुकसान भण्डारण के दौरान होता है जिसकी अनुमानित लागत 7,0000 करोड है जिसमें से अकेले कीडों द्वारा नुकसान लगभग 1300 करोड है। विश्व बैंक की रिर्पोट (1999) के अनुसार भारत में हर साल लगभग 12 से 16 मिलियन टन का पोस्ट हार्वेस्ट नुकसान होता है। भण्डारण के दौरान लगभग 2 से 4.2 प्रतिशत, रोडेन्टस, से 2.5 प्रतिशत, पक्षियों से 0.85 प्रतिशत व नमी के कारण 0.8 प्रतिशत नुकसान होता है।

अतः फसलों की कटाई के बाद उनके बीजों का रख रखाव व भण्डारण महत्वपूर्ण हैं क्योंकि देश की बढ़ती जनंसख्या, प्राकृतिक आपदायें, मौसम की अनिश्चितता तथा अच्छे बीजों की बढ़ती मांग के कारण फसल बुआई के लिए बीज की उपलब्धता को सुनिश्चित करना बहुत ही आवश्यक है। कटाई के बाद बीज के रख रखाव एवं भण्डारण पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है। यद्यपि फसल की कटाई से पहले भी ऐसे अनेक कारक है जो बीज की भण्डारण क्षमता पर अपना प्रभाव डालते है। इन कारकों में उत्पादन के समय वातावरण का तापमान, वर्षा, आर्द्रता, उर्वरकों का प्रयोग एवं सिंचाई आदि प्रमुख हैं जिसका प्रभाव बीज के विकास पर पड़ता हैं। और ये सभी कारक बीज की भण्डारण क्षमता एवं गुणवत्ता को प्रभावित करते है। अतः किसानों एवं बीज उत्पादन करने वाली संस्थाओं को उत्पादन के दौरान भी ध्यान देना बहुत आवश्यक होता है। फसल को पूर्ण रूप से पकने पर तथा सूखे मौसम की स्थिति में जब हवा में नमी कम रहती है काटना चाहिऐं। अन्यथा बीज मे नमी बने रहने की संभावना रहती है। जिसके कारण भण्डारण में कीटों के लगने की सम्भावनाऐं अधिक रहती है।

समुचित बीज भण्डारण से बीज की गुणवत्ता में किसी प्रकार का सुधार संभव नही हैं केवल गुणवत्ता को संरक्षित किया जा सकता हैं फसल की कटाई के बाद बीज की गुणवत्ता, उनकी अंकुरण क्षमता तथा उनके ओज पर जो भौतिक कारक प्रभाव डालते हैं उनमें मौसम की आर्द्रता, मौसम का तापमान, बीज की नमी का प्रतिशत व भण्डारगृह की दशा प्रमुख हैं। ये सभी भौतिक कारक, जैविक कारकों जैसे कीट, (चूहे आदि), पंछी, माइटस, फफूंद एवं बैक्टीरिया आदि प्रभावित करते है। अधिकतम कीटों की क्रियाशीलता 11–20 प्रतिशत बीज में नमी तथा 27–37 डिग्री सेल्सियस तापमान पर होती है। इनकी क्रियाशीलता को रोकने के लिए विशेष प्रबंधन की आवश्यकता होती हैं कीडों के द्वारा होने वाली विभिन्न प्रकार की हानियाँ निम्न प्रकार है।

1. गुणवत्ता का ह्रास
2. मात्रात्मक हानि
3. बीज जैविकता में कमी
4. भण्डारण संरचना को नुकसान

बीजों का प्रबंधन एवं प्रमुख सावधानियाँ

1. बीज के लिए उगाई गई फसल को काटने के बाद उसकी भली प्रकार सफाई करना तथा अच्छी तरह से सुखाना चाहिऐ। खाद्यान्नों के बीजों में 8–10 नमी होनी चाहिऐं। आमतौर पर 25^0 से. तापमान तथा 25–30 वायुमण्डलीय प्रतिशत एवं 8–10 प्रतिशत बीजों में नमी होने पर सभी प्रकार के बीजों को एक वर्ष तक सुरक्षित रखा जा सकता हैं बीजों को सुखाने के बाद ग्रेडिग करना अति आवश्यक होता हैं इन सभी क्रियाओं को करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिऐं कि किसी भी प्रकार का मिश्रण न हो।
2. बीज को ग्रेडिंग करने से पहले बीज प्रोसेसिंग प्लाट की सफाई अच्छी प्रकार से करनी चाहिएं तथा सफेदी भी कर देना चाहिऐ। ग्रेडिंग करने से बीज की भण्डारण क्षमता में सुधार होता हैं क्योंकि ग्रेडिंग के दौरान छोटे, कटे हुऐ हल्के दाने एवं खरपतवार आदि के बीज अलग कर दिये जायें। जिन पर कीटों का प्रकोप अपेक्षाकृत अधिक व शीघ्र होता है। बीज प्रोसेसिंग प्लाट में ग्रेडिंग से पुर्व मेलाथियान 50 ई.सी. एक लीटर दवा 25 लीटर पानी में घोलकर अथवा डेल्टा मेथ्रिन 30 ई.सी. एक लीटर दवा को 100 लीटर पानी में घोलकर फर्श तथा दीवारों पर छिड़काव करना चाहिये। 5 लीटर दवा का घोल 100 वर्गमीटर क्षेत्रफल के लिए पर्याप्त रहता है। आमतौर से कीटों का प्रकोप बीज ग्रेडिंग से पुर्व आंरभ हो जाता हैं। इसलिए बीज की ग्रेडिंग में देरी नही करना चाहिऐ।
3. यदि बीजों की शीघ्र ग्रेडिंग करना सभंव नही हो तो ग्रेडिंग से पहले बीज को एल्यूमिनियम फास्फाइड से घुमण अवश्य कर लेना चाहिऐ, बीजों को घुमण करने के लिए एल्यूमिनियम फास्फाइड 3 ग्राम की 2–3 गोली प्रति टन बीज के हिसाब से एक गोली प्रति घन मीटर क्षेत्रफल के हिसाब से बोरिया के ऊपर रखकर तुरंत पॉलिथीन की चादर से इस प्रकार ढक देना चाहिए ताकि वायु का आवागमन न हो तथा दरवाजों को भी जहां से हवा तथा कीट घुसने का आंदेशा हो मिट्टी आदि से बंद कर देना चाहिऐ। घुमण करते समय इस बात का ध्यान रहे की बीज में 10 प्रतिशत से अधिक नमी न हो अन्यथा बीज के अकुंरण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। सामान्यतः धुमण के कुछ दिन बाद ग्रेडिंग किया जा सकता हैं बीज की ग्रेडिंग एवं भण्डारण के दौरान दीमक का प्रभाव दिखाई देने पर दीवारों, छतों, एवं फर्श आदि पर क्लोरोपायरीफास 2 मिली प्रति लीटर की दर से घोल बनाकर समय–समय पर छिड़काव करते रहना चाहिऐ।

तालिका: 1 भण्डारण गृह में लंबी अवधि के लिए बीज के लिए तापमान व आर्द्रता

भण्डारण की अवधि	भण्डारण गृह का तापमान डिग्री सेल्सियस	आर्दता प्रतिशत
1 वर्ष	25-25	45-50
1–3 वर्ष	15	45-50
3–5 वर्ष	2-4	40-50
5 वर्ष से अधिक	10	40-50

तालिका : 2 भण्डार गृह में धान्य बीजो के लिये बीज नमी प्रतिशत

भण्डारण की अवधि (30 से 32 डिग्री तापमान पर)	बीज नमी प्रतिशत
4 वर्ष	8 से 10
2 वर्ष	9 से 11
1 वर्ष	10 से 12
0.5 वर्ष	11 से 13

4. ग्रेडिंग करने के बाद भण्डारण ग्रह में बीज को रखने से पुर्व बीज भण्डारण की अच्छी तरह सफाई आदि करनी चाहिऐ तथा भण्डारण गृह में मेलाथियान या डेल्टामेथ्रिन का छिड़काव अवश्य करना चाहिऐ। भण्डारण गृह इस प्रकार का होना चाहिऐ कि उसमें किसी प्रकार की खिड़की न हो तथा उसमे हवा का आवागमन रहित एक दरवाजा होना चाहिऐ। भण्डारण ग्रह में एक या दो कमरों के आकार के अनुसार एक्जास्ट पंखा होना चाहिऐ। एक्जास्ट पंखा का प्रयोग तभी करना चाहिऐ जब बीज गोदाम के बाहर का तापमान व आर्द्रता अंन्दर से कम हो।
5. बीज को ग्रेडिंग करने के बाद भण्डार गृह में रखने से पूर्व मैलाथियान 5 प्रतिशत 0.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. की दर से बीज को उपचारित करना चाहिए लेकिन इस बात का ध्यान रखे की उपचारित बीज किसी भी प्रकार खाने के उपयोग में न लायें।
6. भण्डारण करते समय बीज को हमेशा नई बोरिया मे ही भरना चाहिए। पुरानी बोरियों के बीज को भरने से कीटों के फैलाने की संम्भावना रहती है। तथा पुरानी बोरियों में पहले भरी गई फसल या प्रजाति के बीज चिपके रहते है। जिससे मिश्रण की संभावना भी बनी रहती है। यदि पुरानी बोरिया को प्रयोग करना आवश्यक हो तो बोरिया की अच्छी प्रकार सफाई करके मैलाथियान अथवा डेल्टमेथ्रिन में घोल के डुबोकर दो दिन तक तेज धुप में सुखाने के बाद ही इन बोरियों का प्रयोग करें। पुरानी बोरियों में एल्यूमिनियम फास्फाइड से धुमण करने के बाद भी प्रयोग किया जा सकता है।
7. भण्डारण गृह में ग्रेडिग किये हुए बीज के साथ बिना ग्रेडिंग बीजों के साथ नही रखना चाहिये। आमतौर पर एक फसल का बीज ही एक साथ रखना चाहिऐ। क्योंकि प्रत्येक फसलों कि बीजों की भण्डारण क्षमता अलग–अलग होती है। तिलहन वाली फसलों में वसा अधिक होने के कारण इनकी भण्डारण क्षमता सबसे अधिक होती है। तथा दलहन वाली फसलों मे प्रोटीन की मात्रा अधिक होने के कारण इनकी भण्डारण क्षमता सबसे कम होती है। गेहूँ, जौ, मक्का, ज्वार, बाजरा आदि बीजों में कार्बोहाइड्रेट अधिक होने के कारण इनकी भण्डारण क्षमता दलहन से अधिक एवं तिलहन से कम होती हैं। अतः कुशल प्रबंधन के लिए अनाज, दलहन एवं तिलहन के बीजों के लिए अलग–अलग भण्डार गृह होने चाहिऐ।
8. भण्डार गृह में बीज की बोरियों को जमीन पर न रखा जाए। बीज की बोरियों को रखते समय लकड़ी या प्लास्टिक के पैलेट के बीज गोदाम की दीवारों से 1 से 1.5 फुट की दूरी पर रखकर बीज की बोरियों को रखे। बोरियों रखते समय इस बात का भी ध्यान रखें कि ऊंचाई में 8–10 बोरियों ही रखे।
9. अनाज, दलहन, तिलहन वाली फसलों के बीजों को जूट बैग या कपडें के बैग में पैक करना चाहिऐ। बीज की पैंकिग से पहले किसी फफूंदीनाशक जैसे थायराम या कैप्टान आदि से 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके ही बिक्री करें।

इस तरह फसलों के उचित रखरखाव व भण्डारण के द्वारा पोस्ट हार्वेस्ट नुकसान को कम किया जा सकता है। तथा बाजार मे उत्पाद की सही कीमत प्राप्त की जा सकती है।

जायद में दालों की खेती कर लाभ कमायें

खजान सिंह, वर्षा गुप्ता एवं के.सी. मीना
कृषि अनुसंधान केन्द्र, उम्मेदगंज, कोटा एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, अन्ता (बारां)

भारत में जनसंख्या का बड़ा भाग शाकाहारी होने के कारण पोषण की दृष्टि से दालों का विशेष महत्त्व है । रबी की फसल की कटाई के उपरांत व खरीफ की बुवाई से पूर्व खेत खाली रहते हैं । दाल वाली फसलें यथा मूँग, उड़द व लोबिया कम समय में पकने के कारण जायद में आसानी से उगायी जा सकती हैं। दाल वाली फसलें पौष्टिक भोजन के साथ–साथ वायुमंडलीय नत्रजन का स्थिरीकरण कर भूमि की उर्वराशक्ति को बढ़ाते हैं। मूँग, उड़द व लोबिया जायद के लिए उपयुक्त किस्में उगाकर किसान अतिरिक्त आय प्राप्त कर सकते हैं तथा दालों के आयात में खर्च होंने वाली महत्त्वपूर्ण विदेशी मुद्रा की बचत में सहायक बन सकते हैं ।

उन्नत किस्में मूँग

आई पी एम 02–03 : यह किस्म 65 से 70 दिन में पककर 10–12 क्विन्टल प्रति हेक्टेयर उपज देती है । यह किस्म पीत चितकबरा रोग के लिए अवरोधी पाई गई है ।

विराट : यह किस्म शीघ्र पकने वाली (55–60 दिन) जायद फसल हेतु उपयुक्त पाई गई है । यह किस्म पीत चितकबरा रोग के लिए अवरोधी पाई गई है ।

सम्राट (पी डी एम 139) : यह किस्म 65 से 70 दिन में पककर 8–10 क्विन्टल प्रति हेक्टेयर उपज देती है । पीत चितकबरा रोग के लिए अवरोधी पाई गई है ।

पूसा बैसाखी : यह किस्म जायद फसल हेतु उपयुक्त है तथा60–80 दिन में पककर 8–9 क्विन्टल प्रति हेक्टेयर उपज देती है ।

शिखा (आई पी एम 410–3) : यह किस्म पीत चितकबरा रोग व छाछ्या रोग के लिए अति प्रतिरोधी पाई गई है । यह जायद में 62 से 65 दिन में पककर 11 से 13 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज देती है ।

उड़द :

मुकुन्दरा उड़द 2 : अर्ध फैलाव, फलियाँ रोंये रहित, दाना मोटा, काला व चमकदार होता है । 72 से 76 दिन में पककर 9–10 क्विन्टल प्रति हेक्टेयर उपज देती है । उत्तरी – पश्चिमी मैदानी खण्ड के लिए बसंत ऋतु में बुवाई हेतु संस्तुत की गई है ।

कोटा उड़द 3 : उड़द की समकालिक किस्म 72 दिनों में पककर 10 –12 क्विन्टल प्रति हेक्टेयर उपज देती है । फलियाँ मुख्य तने पर लगती हैं, दाना मोटा, काला व आकर्षक होता है । यह किस्म पीत चितकबरा, पत्ती धब्बा व कालवर्ण रोगों के लिए अवरोधी पाई गई है । यह किस्म राजस्थान राज्य हेतु संस्तुत की गई है ।

कोटा उड़द 4 : मोटे भूरे काले दाने, शीघ्र बढ़ने वाली किस्म पत्ती धब्बा रोग एवं पीत चितकबरा रोग के लिए मध्यम प्रतिरोधी तथा फली छेदक व मारुका कीट का प्रकोप कम होता है । यह किस्म 70–75 दिन में पककर 10–12 क्विन्टल प्रति हेक्टेयर उपज देती है । उत्तरी पूर्वी मैदानी क्षेत्रों के लिए बसंतकालीन बुवाई हेतु संस्तुत की गई है ।

लोबिया

आर सी 101 : अति शीघ्र पकने वाली (60–64 दिन), सूखा सहनशील, सफेद दानों वाली, बेल रहित, निर्धारित प्रकार की किस्म कम पानी वाले क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है तथा 7.5 से 8.5 क्विन्टल प्रति हेक्टेयर उपज देती है ।

आर सी 19 : शीघ्र व समकालिक परिपक्वता वाली किस्म 65 से 70 दिन में पककर 9 से 10 क्विन्टल प्रति हेक्टेयर उपज देती है तथा पीत चितकबरा रोग के लिए मध्यम प्रतिरोधी पाई गई है ।

पंत लोबिया 4 : शीघ्र पकने वाली (60 –65 दिन) व सूखा सहन करने वाली किस्म जायद के लिए उपयुक्त है । यह मुख्य जीवाणु जनित व वायरस जनित पीत चितकबरा रोग के लिए सहनशील, प्रकाश असंवेदनशील किस्म है तथा 14 से 15 क्विन्टल प्रति हेक्टेयर उपज देती है ।

पंत लोबिया 3 : झाड़ीनुमा किस्म के पौधों की लम्बाई 50–55 सेमी होती है । पीत चितकबरा रोग व जीवाणु अंगमारी के लिए प्रतिरोधी किस्म के दाने वृक्काकार से अंडाकार भूरे रंग के होते हैं । इसमें प्रोटीन 27 प्रतिशत पाई गई है। यह किस्म 65 से 70 दिन में पककर 14 से 18 क्विन्टल प्रति हेक्टेयर उपज देती है ।

खेत की तैयारी : रबी की फसल की कटाई के तुरंत बाद खेत की सिंचाई कर दें व ओट आने पर जुताई कर पाटा लगाकर खेत तैयार कर लेना चाहिये। यदि खेत में दीमक आदि भूमिगत कीटों का प्रकोप हो तो क्यूनॉलफॉस 15 प्रतिशत चूर्ण 25 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में अंतिम जुताई के समय मिला दें।

बुवाई : बुवाई हेतु उन्नत किस्म का 20–25 किलो निरोगी बीज काम में लेवें। बुवाई से पूर्व 3 ग्राम थाइरम या 2 ग्राम कार्बनडेजिम 50 डब्ल्यू पी प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करें, तत्पश्चात राइजोबियम एवं फॉस्फोरस घोलक जीवाणु (पी एस बी) प्रत्येक का 600 ग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से उपचारित करें। जायद मूँग, उड़द व लोबिया की

मार्च माह के प्रथम पखवाड़े में कतार से कतार की दूरी 30 से.मी. एवं पौधे से पौधे की दूरी 10 से.मी. रखते हुए बुवाई करें। बुवाई देरी से करने पर फसल के पकाव के समय वर्षा होने से हानि होंने की सम्भावना रहती है।

उर्वरक प्रबंधन : मूँग, उड़द व लोबिया हेतु 20 किलो नत्रजन व 40 किलो फॉस्फोरस प्रति हेक्टेयर बुवाई से पूर्व कूंडों में ऊर कर देवें । जस्ते की कमी वाले खेतों में 25 किलो जिंक सल्फेट अंतिम जुताई के समय देवें या 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट घोल का बुवाई के 30 से 45 दिन बाद छिड़काव करें । जलीय घुलनशील उर्वरक एन पी के (18 : 18) की 0.5 प्रतिशत फूल शुरू होने की अवस्था पर पर्णीय छिड़काव करने से उपज में बढ़ोतरी होती है।

खरपतवार नियंत्रण : मूँग, उड़द व लोबिया में बुवाई के 20–25 दिन बाद निराई गुड़ाई करके खरपतवार निकाल देने चाहिए। रासायनिक नियंत्रण हेतु बुवाई के पश्चात् एवं अंकुरण से पूर्व पेंडीमिथलीन 30 ई सी 1 किलो सक्रिय तत्व (व्यावसायिक दर 3.3 लीटर) प्रति हेक्टेयर या पेंडीमिथलीन 30 ई सी इमिजीथापायर 2 ई सी (मिश्रण उत्पाद) 0.75 किलो सक्रिय तत्व (व्यावसायिक दर 2.3 लीटर) प्रति हेक्टेयर का छिड़काव करके खरपतवारों की प्रभावी रोकथाम की जा सकती है या अंकुरण पूर्व पेंडीमिथलीन 30 ई सी 1 किलो सक्रिय तत्व (व्यावसायिक दर 3.3 लीटर) प्रति हेक्टेयर, इसके उपरांत बुवाई के 15–20 दिन बाद भूमि में पर्याप्त नमी की अवस्था में ईमिजीथापायर 10 प्रतिशत एस एल 55 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर का छिड़काव कर खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण किया जा सकता है ।

सिंचाई प्रबंधन : जायद में दलहनी फसल बुवाई के लिए रबी फसल की कटाई के तुरंत बाद पलेवा करके खेत तैयार कर लेना चाहिए बुवाई के 15–20 दिन प्रथम सिंचाई करें तदुपरांत आवश्यकतानुसार 10–12 दिन इ अन्तराल से सिंचाई करें। कुल 4 से 5 सिंचाई की आवश्यकता होती है।

फसल संरक्षण : समय पर फसल संरक्षण उपाय अपनाकर रोग व कीटों से होने वाली हानि से बचाया जा सकता है । प्रमुख कीट व बीमारियां निम्नानुसार है :

पीत चितकबरा रोग : यह उड़द, मूँग व लोबिया की भयंकर बीमारी है। पौधों की पत्तियां पीली चितकबरी हो जाती हैं। रोग के लक्षण दिखाई देते ही डाइमिथोएट 30 ई सी एक लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

छाछ्या रोग : शुरू में पत्तियों पर सफेद गोलाकार पाउडर जैसे धब्बे हो जाते हैं, बाद में पाउडर तने व पत्तियों पर फैल जाता है । इसकी रोकथाम हेतु 2.5 किलो घुलनशील गंधक अथवा डाइनेकेप 400 मिलीलीटर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें। दूसरा छिड़काव 15 दिन बाद करें या 25 किलो गंधक चूर्ण का भुरकाव करें।

पत्ती क्रिंकल विषाणु रोग : इस रोग में पत्तियां विलुप्त हो जाती हैं व फलन बहुत कम या बिल्कुल नहीं होता है । इसके नियंत्रण हेतु डाइमिथोएट 0.1 प्रतिशत के दो छिड़काव बुवाई के 14 एवं 30 दिन बाद करने चाहिए।

चित्ती जीवाणु रोग : यह रोग जैंथोमोनास नामक जीवाणु द्वारा फैलता है। पत्तियों पर छोटे गहरे भूरे रंग के धब्बे तथा प्रकोप बढ़ने पर तने एवं फलियों पर भी दिखाई देते हैं व पौधे मुरझा जाते हैं । रोग के लक्षण दिखाई देते ही 20 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लीन या दो किलो ताम्रयुक्त कवकनाशी प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

पीलिया रोग : लौह तत्व की कमी से फसल में पीलापन आ जाता है। रोग के लक्षण दिखाई देते ही 0.1 प्रतिशत गंधक के तेजाब या 0.5 प्रतिशत फैरस सल्फेट (हरा कसीस) का छिड़काव करें ।

फली छेदक : कीट का प्रकोप होंने पर मोनोक्रोटोफॉस 36 एस एल या मेलाथियान 50 ई सी क्यूनॉलफॉस 25 ई सी एक लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से फूल आते ही छिड़काव करें ।

मोयला, हरा तेला व मक्खी : इसके नियंत्रण हेतु डाइमिथोएट 30 ई सी या मेलाथियान 50 ई सी एक लीटर या मेलाथियान 5 प्रतिशत चूर्ण 25 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें।

फसल की कटाई : फलियों के पूरी तरह पकने के बाद एवं झड़ने से पहले फसल की कटाई कर लेवें । इसके बाद 8–10 दिन तक खलिहान में सुखाकर गहाई कर दाना निकाल लेवें ।

उपज : उपरोक्त शष्य क्रियाओं को ध्यान में रखकर खेती करके मूँग, उड़द व लोबिया की 8 से 12 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त कर सकते हैं ।

❋❋❋

जायद ऋतु में लाभकारी खीरे की खेती

दीपक मीना एवं मोनिका मीना
अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, राजस्थान कृषि महाविद्यालय उदयपुर एवं सस्य विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, कोटा

खीरे का वानस्पतिक नाम *कुकुमिस सैटाईवस* है खीरे का मूल स्थान भारत है खीरे की खेती पुरे भारत में की जाती है इसका उपयोग सलाद, सब्जी, रायता और अचार के लिये किया जाता है खीरे का फल ठंडा होने के कारण इसका उपयोग पीलिया, कब्ज आदि बीमारियों में किया जाता है इसके बीज का प्रयोग आयुर्वेदिक दवाओं एवं बीजों से प्राप्त तेल शरीर तथा मस्तिष्क के लिए उपयोगी होता है खीरे के सेवन से पानी एव पोषक तत्वों जेसे पोटेशियम, सोडियम, कैल्शियम, फॉस्फोरस, विटामिन सी, खनिज लवण एवं कार्बोहाइड्रेट की पूर्ति होती है खीरे की खेती जायद एवं ग्रीष्म (खरीफ) ऋतु में की जाती है।

मृदा एवं जलवायु

खीरे को बुलई दोमट से लेकर भारी मृदा जिसका पी.एच. 6 से 7 के मध्य हो एव उचित जल निकास की व्यवस्था हो, वहा आसानी से की जा सकती है। अच्छी पैदावार हेतु जीवांश प्रदार्थ युक्त दोमट मृदा सर्वोत्तम होती है। खीरा एक गर्म मौसम की फसल है अतः इसकी वृद्धि के लिए 27 से 35 डिग्री सेंटीग्रेट तापमान की आवश्यकता होती है यह अधिक ठण्ड एवं पाले के प्रति संवेदनशील होता है और अधिक तापमान तथा आर्द्रता होने से इसमें पाउडरी मिल्ड्यू रोग उत्पन्न होता है वही ग्रीन/पॉली हाउस में खीरे की खेती सालभर की जा सकती है। इसके अंकुरण के लिए 20 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त रहता है तथा पौधों की वृद्धि एवं विकास के लिए 22 से 30 डिग्री सेल्सियस तापमान अनुकूल रहता है। अपेक्षित आर्द्रता 70–80 प्रतिशत उपयुक्त रहती है।

खेत की तैयारी

खेत को तैयार करने के लिए पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा दूसरी, तीसरी जुताई कल्टीवेटर या देशी हल से करके खेत को भुरभुरा बनाना चाहिये, जुताई के समय सड़ी हुई गोबर की खाद (FYM) मिलाकर खेत की जुताई करे।

बुवाई का तरीका और जायद में बुवाई का समय

खीरे की बुवाई दो समय की जाती है पहला खरीफ में जून से जुलाई महीने तक की जाती है और दूसरी जायद में फरवरी से मार्च के महीने तक की जाती है बुवाई के समय खेत में क्यांरियां बना कर ही बोयें। बुवाई लाइन में ही करें लाइन से लाइन की दूरी 1.5 मीटर रखें और पौधे से पौधे की दुरी 1 मीटर रखे। बुवाई से पहले बीज की जाँच कर ले, बीज सही अंकुरित हो रहे है तभी बीज की बुवाई करे। बीज को 2 से 3 से.मी. की गहराई पर बो दे। पाली हाउस में सामान्यता पुरे वर्ष खीरे की खेती की जाती है।

खाद का प्रयोग

खीरे की उचित पैदावार हेतु जुताई के समय 20 से 25 टन प्रति हेक्टेयर गोबर की खाद (जैविक खाद) को मृदा में मिलाना चाहिये। रासायनिक खाद जेसे नत्रजन 55–60 कि.ग्रा., 50 कि.ग्रा., फॉस्फेट तथा 90 कि.ग्रा. पोटाश की मात्रा प्रति हेक्टर की दर से डालना चाहिए तथा नत्रजन की आधी मात्रा फॉस्फेट व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई से पहले तैयारी के समय मिट्टी में मिला देनी चाहिए। शेष नत्रजन की मात्रा बुवाई के 30–45 दिन के बीच पौधों में छिटकना चाहिए।

उन्नतशील किस्में

पोइन्सेट, स्ट्रीट ,इट, जापानी लॉन्ग ग्रीन, पूसा बरखा, पूसा उदय, पंजाब खीरा–1, पंजाब नवीन हिमांगी, जोवईट सेट, पूना खीरा, पूसा संयोग, शीतल, फाईन सेट, स्टेट 8 , खीरा 90, खीरा 75, हाईब्रिड 1 व हाईब्रिड2, कल्यानपुर हरा खीरा अदि खीरे की प्रचलित उन्नतशील किस्मे है।

बीज दर

जायद के लिये शुद्ध बीज की मात्रा 3–4 किलो प्रति हेक्टर तथा खरीफ की फसल के लिये 6–7 किलो प्रति हेक्टर की दर से आवश्यकता होती है। ग्रीष्म ऋतु की फसल के लिये अधिक बीज की जरूरत होती है क्योंकि तापमान व मौसम के कारण अंकुरण शत–प्रतिशत नहीं हो पाता इसलिये अधिक बीज की मात्रा की आवश्यकता होती है। बीजो को बोने से पहले इनका उपचार कैप्टान के साथ 2 ग्राम प्रति किलो बीजो की दर से करें।

सिंचाई

सिंचाई की आवश्यकता अधिकतर जायद व खरीफ दोनों के लिए अधिक करनी चाहिए जिससे भूमि में नमी बनी रहनी चाहिए। ग्रीष्म ऋतु की फसल के लिये 5–6 दिन के बाद सिंचाई करते रहना चाहिए। वर्षा ऋतु में वर्षा के आधार पर पानी देना चाहिए। पहली सिंचाई बोने से 10–15 दिन के बाद करनी चाहिए।

पौधे को सहारा देना

खीरा एक लता वाली फसल है, अगर पोलीहाउस में खीरा लगाया है तो फसल को सहारा देना भी आवश्यक है जिसमें फसल को सहारा देने हेतु मचान बनाते हैं जिसमें प्लास्टिक सुतली द्वारा पौधे को ऊपर की ओर सहारा देते हैं सहारा देने में पौधे को बांधते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि पौधे सुतली के दबाव से कटने न पाये, पौधे की ऊँचाई बढ़ने के साथ सुतली को ढीला कर पौधे के फलन क्षेत्र को नीचा किया जाता है, जिससे तुड़ाई में आसानी हो।

तुड़ाई

खीरे के फल बुवाई के बाद सामान्तया 45–50 दिनों में तोड़ने योग्य हो

जाते है फलो को पकने से पहले ही तोड़ लेना चाहिये कच्चे फलो का मूल्य बाजार में अधिक मिलता है कटाई के लिए किसी नुकीली चीज या तेज चाकू का प्रयोग करे कटाई के समय फल हरे एवं बीज नर्म होने चाहिये जिससे फलो का मूल्य बाजार में अच्छा मिल पाए यदि फल अधिक पक जाये तो उन्हें अगली फसल की बुवाई हेतु बीज के उपयोग के लिए उपयोग में लेना चाहिये।

उपज

जायद में खीरे की फसल का उत्पादन 100–120 क्विंटल प्रति हेक्टर प्राप्त होता है।

भण्डारण

खीरे को लगभग सभी जगह भंडारित किया जाता है। फलों का प्रयोग अधिकतर सलाद के रूप में बड़े–बड़े होटलों में किया जाता हैं। इसलिए, इन फलों को लम्बे समय तक भंडारित करना पड़ता है। अतः यह गर्मी की फसल होने के कारण फलों को औसत 10 डिग्री तापमान पर भंडारित किया जा सकता है। स्टोर के लिये अच्छे, हरे, आकर में बड़े व कच्चे फलों को ही स्टोर करना चाहिए।

खीरे की मुख्य बीमारियाँ

चूर्णिल आसिता

रोग लक्षण : सर्वप्रथम रोगी पौधे की पत्तियों पर दिखाई देता है तथा बाद में पौधें के दूसरे भाग पर भी फैल जाता है। आरम्भ में पत्तियों की दोनों सतह पर सफेद चूर्णी धब्बें बनते है जो बाद में फल एवं तने इत्यादि के ऊपर भी बन जाते है जिससे पूरा पौधा मुरझा जाता है। रोग की गम्भीर अवस्था में सम्पूर्ण पौधे की सतह सफेद चूर्ण जैसे पदार्थ से ढक जाती है रोगी पौधों में वाष्पोत्सर्जन व श्वसन क्रिया बढ़ जाती है और प्रकाश संश्लेषण की क्रिया कम हो जाती है।

रोग नियन्त्रण : रोगी पौधों के अवशेषों को एकत्र करके जला देना चाहिये तथा खरपतवारों को नष्ट कर देना चाहिये। क्षेत्र विशेष के लिए फसल की रोग प्रतिरोधी किस्मों की बुवाई करनी चाहिये। रोग से रक्षा हेतु टेबूकोनाजोल का 500 ग्राम. प्रति हेक्टर 12–15 दिनो के अन्तराल पर छिड़कना चाहिये। रोग का गंभीर अवस्था में होने पर यह अन्तराल घटाया जा सकता है।

चूर्णिल आसिता

मृदुरोमिल आसिता

मृदुरोमिल आसिता

रोग लक्षण : इस रोग से पौधों की पत्तियों पर पीले व भूरे रंग के स्पोट बन जाते हैं तथा पत्तियों की निचली सतह पर भी धब्बे बन जाते हैं। नयी पत्ती अथवा बीजपत्रक पीले पड़ने के बाद गिर जाते हैं। पुरानी पत्तिया सामान्यतः थमी रहती है और संक्रमित भाग धीरे–धीरे चमकीला और पीला–भूरा व कागज के समान हो जाता है।

रोग नियन्त्रण : स्वच्छ खेती का प्रयोग और रोग ग्रसित फसल अवशेष और खरपतवारों को नष्ट कर देना चाहिये। 2–3 वर्ष का फसल चक्र अपनाया जाए, तो भूमि में पड़े निषिक्तांड़ निष्क्रिय हो जाते है। फसल पर डाएथेन एम–45 अथवा डाएथेन जेड–78 का 1.0–1.2 कि.ग्रा. प्रति हेक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिये।

मोजेक : यह रोग वायरस द्वारा लगता है। रोगी पौधों की वृद्धि रुक जाती है तथा बाद में पत्तिया पीली व मुड़ना शुरू हो जाती हैं। रोगी पौधों को उखाड़ देना चाहिए, यदि अधिक आक्रमण होने लगे तो खेत मे रोग–अवरोधी किस्म ही बोनी चाहिए।

एन्थेकनोज : इस रोग में पत्तियो ,एवं फलों पर लाल, धब्बे हो जाते है। नियन्त्रण हेतु जिनेब या मैंकोजेब 2 ग्राम. प्रति लीटर पानी के घोल के 2 से 3 छिड़काव 15 दिन के अन्तराल से करें।

कीट नियन्त्रण

फल मक्खी

यह मक्खी की तरह होती है। पौधों पर लगे फलो व फूलों को क्षति होती है। नियन्त्रण के लिये अण्डे आदि को नष्ट करना चाहिए। कीट की प्रारम्भिक अवस्था में नीम तेल 5 मिली–प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। कीट के अत्यधिक प्रकोप की अवस्था मे 15 ग्राम. एसीफेट या इमीडाक्लोप्रिड 18.5 एस. एल. की 5 मिली. मात्रा 15 लीटर पानी मे घोलकर छिड़काव करें।

लाल कीड़ा

यह कीट पौधों की मुलायम पत्तियों, फलों तथा फूलों को खाता है जिससे पैदावार कम हो जाती है। नियन्त्रण के लिये डायमिथिएट 30 ईसी. या ट्राइजोफस 40 ईसी. की 30 मिली. मात्रा 15 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करे।

कट वार्मस

यह कीट फसल के लिये हानिकारक होते हैं जो कि दिन में भूमि में छिप जाते हैं तथा रात को फसल पर आक्रमण करते हैं। रोकथाम के लिये नीम तेल 5 मिली. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करे।

एफिडस (चौंपा)

ये कीट बहुत छोटे होते हैं। जो कि पौधों के रस को चूसते हैं। यह पत्तियों की निचली सतह पर मिलता है। नियन्त्रण के फेनप्रोपाथ्रिन 0.5 मिली. मात्रा को प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

हाडौती में गेहूँ की नौलाई जलाने की समस्या एवं समाधान

सुभाष असवाल, सुनिल कुमार, पप्पू खटीक, के.सी. मीना, टी.सी. वर्मा एवं डी.के. सिंह
कृषि विज्ञान केन्द्र अन्ता–बारां

भारत में प्रतिवर्ष 500 मिलियन टन से अधिक फसल अवशेष पैदा होता है। लगभग 140 मिलियन टन (28 प्रतिशत) फसल अवशेष को खेतों में ही जला दिया जाता है। जिसमें गेंहू एवं चावल के भूसे को जलाना मुख्य रूप से शामिल है। गौरतलब है कि राजस्थान जैसे कम वर्षा एवं हमेशा अकाल पीडित रहने वाले राज्य में भी 18.35 प्रतिशत भूसे को जला दिया जाता है। राजस्थान में 29.32 मिलियन टन फसल अवशेष उत्पादित होते हैं, जिसमें से 8.52 मि.टन भूसा अधिशेष बचता है। जिसमें से 5.38 मिलियन टन भूसा प्रतिवर्ष जला दिया जाता है जिसमें हाडौती अंचल भूसे में आग लगाने में अग्रणी है। हाडौती में करीबन 5 लाख हेक्टर में गेंहू की खेती की जाती है, जिसमें लगभग 300 से 350 लाख क्विन्टल भूसा की पैदावार होती है। जिसमें से 60 से 70 प्रतिशत फसल की हार्वेस्टर मशीन से कटाई कर आग के हवाले करने से लगभग 200 लाख क्विन्टल से अधिक भूसा नष्ट होता है। यह व्यर्थ जलाया गया भूसा 6 लाख जानवरों का वर्षभर पेट भर सकता है। यहां पैदा होने वाले लगभग 60 प्रतिशत गेंहू के भूसे को आग लगा दी जाती है। जबकि इस क्षेत्र में वर्ष में यहां एक–दो महिने ऐसे भी देखे गये है, जबकि गेंहू का भूसा 5–8 रूपये प्रति किलो बिकता है। जलाने के अतिरिक्त इन अवशेषों का पशुओं के चारे, घरोंदा बनाने, घरेलू व उद्योगों के ईंधन के रूप में काम में लिया जाता है। इन अवशेषों का बहुत बड़ा भाग खेतों को जल्दी खाली करने के लिए कटाई के उपरान्त जला दिया जाता है। मजदूरों की कमी, अवशेषों को हटाने की अधिक कीमत तथा कम्बाईन हार्वेस्टर का कटाई में उपयोग आग लगाने के मुख्य कारण माने जा रहे है। इनकों जलाने से पर्यावरण प्रदूषण होना मानव स्वास्थ्य के लिए खतरनाक होता है। हरितगृह की गैसों से ग्लोबल वार्मिंग तथा पादप पौषक तत्वों जैसे नत्रजन, फॉस्फोरस, पोटाश, गंधक का नुकसान होता है। अतः इनकों जलाने की बजाय निस्तारण का प्रभावी तरीका अपनाया जाना चाहिए।

क्या किसान फसल अवशेष को जला सकता है?

अनाज, तिलहनी, दलहनी फसलों के अवशेषों को किसान नहीं जला सकते हैं। यह कानूनी रूप से दण्डनीय है। केवल अनुसंधान व शिक्षा तथा किसी हानिकारक कीट–बीमारी का प्रकोप होने पर समस्या समाधान हेतु जलाया जा सकता है। आग लगाने से 24 घण्टे पूर्व प्रशासन, फायर ब्रिगेड, वन विभाग, आसपास के खेतों के मालिकों एवं निवासियों, एयरोड्राम तथा पर्यावरण विभाग को लिखित सूचना देनी चाहिए। निम्न बिन्दुओं को ध्यान में रखकर अवशेषों को जलाने अथवा ना जलाने का निर्णय लिया जा सकता है–

- शनिवार, रविवार, सूर्यास्त के बाद आग ना लगावें।
- पेड़ों की कतार, बगीचों, जैविक बाड़, टेलीफोन, बिजली के खम्भों से कम से कम 15 मीटर की दूरी होनी चाहिए।
- आवासीय क्षेत्रों, खड़ी फसलों, भण्ड़ार घरों, ऑयल व गैस ऐजेन्सी के आस–पास आग ना लगावें।
- सड़क एवं रेल्वे पटरी के आस–पास आग ना लगावें अन्यथा ज्वलनशील पदार्थों को ढ़ोने वाले वाहन आग की चपेट में आ सकते है।
- आग लगाते समय कम से कम दो व्यस्क एवं कुशल व्यक्तियों की उपस्थिति में जरूर हो।
- आस पास फायर ब्रिगेड स्टेशन/वाहन का होना जरूरी ।
- उस जगह के पास कम से कम 1000 लीटर पानी की व्यवस्था रखें।

किसान फसल अवशेष को क्यों जलाता है?

- कटाई के समय मजदूरों की कमी तथा अधिक मजदूरी का होना।
- खेती में बढ़ते मशीनीकरण विशेषतौर से कम्बाईन हार्वेस्टर से कटाई मे आसानी।
- मौसम की अनिश्चितता का भय।
- पशुओं की संख्या में आई कमी एवं पशुपालन में अरूचि।
- जलाने पर बिना खर्च अथवा कम खर्च में भूसे का आसानी से निस्तारण होना।
- निस्तारण की अन्य कोई तकनीकी का ज्ञान नहीं होना।
- कम्पोस्ट बनने में लगने वाला ज्यादा समय (4–6 माह)।
- खेत में अवशेषों को मिलाने पर कीटों प्रकोप की संभावना।
- अगली फसल में अंकुरण का कम होना।
- खेतों को तुरन्त खाली करने की जल्दी।
- अगली फसल की बुवाई हेतु कम समय होना।
- खरपतवार, कीड़ों तथा बीमारियों को तुरंत व जल्दी खेत में ही खत्म करना।

कम्बाईन हार्वेस्टर से ही कटाई क्यों?

कम्बाईन हार्वेस्टर से लगभग अस्सी प्रतिशत फसल अवशेष बचता हैं, जिसे अन्त में जला दिया जाता है। किसानों द्वारा कम्बाईन हार्वेस्टर से कटाई के निम्न कारण ज्ञात हुऐ–

- कटाई के समय मजदूरों की कमी।
- कटाई के समय मजदूरी भाव का अधिक होना।
- आसानी से कटाई व थ्रेसिंग का एक साथ होना।
- मौसम की अनिश्चितता होने से किसान असमय ओले व वर्षा से फसल नुकसान का डर।
- किसान जल्दी खेत खाली चाहता है।

फसल अवशेष जलाने के विपरित प्रभाव क्या होते है?

- **उत्पादन में कमी :** यदि गेंहू के भूसे में आग लगाते हैं तो उस खेत पर अगली फसल की वृद्धि एवं उत्पादन पर विपरित प्रभाव पडता है।
- **चारे की कमी व अधिक खर्च :** पशुपालकों को चारे की कमी व अधिक खर्च पर चारा खरीदने पर मजबूर होना। पशुओं के लिए उपलब्ध बहुमूल्य चारा समाप्त हो जाता है। कभी कभार किसानों को 5–8 रूपये प्रति किलों के भाव से चारा खरीदने को मजबूर होना पड़ता हैं।
- **पर्यावरण तापमान में बढ़ोत्तरी :** जमीन के लाभदायक सूक्ष्म जीव व अन्य तत्व आग की गर्मी से समाप्त हो जाते है। ग्रीनहाउस गैसे कार्बन

डाई ऑक्साइड, मिथेन, नाईट्रस ऑक्साइड से तापमान बढ़ जाता हैं जिससे ग्लोबल वार्मिंग की समस्या बढ़ती है।

- **पौषक तत्वों की हानि :** यद्यपि अवशेष जलाने से शुरू में मृदा उर्वरकता बढ़ती हैं, लेकिन मृदा उर्वरकता पर इसके अलग–अलग प्रभाव देखे गये है। कुछ समय के लिए पोटेशियम व फॉस्फोरस की उपलब्धता तो जरूर बढ़ती है, लेकिन मृदा अम्लता कम हो जाती है। परन्तु मृदा उर्वरकता का मुख्य अवयव नत्रजन, सल्फर तथा जैविक तत्वों का नुकसान होता है।
- **मृदा स्वास्थय एवं उर्वरकता की हानि :** हालांकि कई वर्षो में एक बार जलाना ज्यादा मृदा स्वास्थ्य नुकसान नहीं करता, लेकिन बार–बार भूसा जलाना हर प्रकार से हानिकारक हैं। भूमि की जैविक, रासायनिक एवं भौतिक दशाओं पर विपरित प्रभाव पड़ता हैं। प्रतिवर्ष भूसे को जलाने से भूमि में जैविक कार्बन की कमी से बहुत ही खराबी आई है। क्योंकि जैविक कार्बन दुबारा नहीं बनता है।

भूमि के जीवांश पदार्थो की कमी–प्राकृतिक पोषक तत्वों में कमी से निम्न हानियां होती है

- टिकाऊ खेती के लिए अभिशाप।
- उर्वरकों की अधिक मात्रा का खर्च में बढ़ोत्तरी।
- प्राकृतिक पादप पौषण में कमी।
- खेतों में जैविक तत्वों की कमी होने से खेतों की जलग्रहण क्षमता कम हो जाती है।
- वर्षाजल जमीन में कम मात्रा में पौषित होकर व्यर्थ बह जाता है। नतीजन भूजल स्तर नीचे जाता जा रहा है।
- मृदा के सूक्ष्म जीवों को भोजन नहीं मिलता नतीजन कम जीवांश मात्रा से अन्य पौषक तत्व भी पौधों को उपलब्ध नहीं हो पाते है।

जैविक ढकान (मल्चिंग) का खात्मा : जैविक अवशेषों को भूमि पर ढ़ककर रखने से पौषक तत्वों के साथ साथ भूमि की नमी में भी बढ़ोत्तरी होती है। साथ ही भूमि में जल रिसाव की क्षमता भी बढ़ती हैं। इसके अतिरिक्त मृदा सूक्ष्म जीवों की संख्या बढ़ने से पौषक तत्वों की उपलब्धता भी बढ़ती है।

आग लगने की बढ़ती संभावनाऐ : कृषकों के बगीचों अन्य फसलों व गांवों में आग लगने की संभावनाऐ बढ़ जाती है। कई बार किसान रात्रि को इन अवशेषों को जलता हुआ छोड़ देता है, जिससे आग के आगे फैलने का अंदेशा रहता है।

भूमि में कठोरपन (कॉम्पेक्सन) का होना : कोटा संभाग की काली कपासी मिट्टी पर लगातार भारी यंत्र एवं मशीने चलाने से भूमि में कोम्पेक्सन होता हैं, जिससे भूमि में जल रिसाव क्षमता कम हो जाती हैं।

देश पर उर्वरक पर दी जाने वाली छूट का करोड़ों का भार : किसानों द्वारा फसल अवशेष जलाने से आई पौषक तत्वों की कमी के कारण फसलों में उर्वरकों की अधिक मात्रा खर्च की जा रही हैं।

मिट्टी की दशा खराब : ऐसी अवस्था में फसलों में कृषकों ने रासायनिक उर्वरक (डीएपी एवं यूरिया) का मात्रा बढ़ा कर एवं गलत तरीकों से (बीज के साथ मिलाकर) उपयोग में लाने लगे, जिससे खेतों में मिट्टी की दशा खराब हो रही हैं।

मृदा अपरदन : गर्मी के मौसम में तेज हवाओं से भूमि का अपरदन होता है।

वायु प्रदूषण : भूसे को जलाने से गैसे उत्पन्न होकर वातावरण को दूषित करती है।

नमी की हानि : आग लगाने से भूमि की ऊपरी परत की नमी भाप बनकर उड़ जाती है। जिससे भूमि में होने वाले आवश्यक भौतिक, रासायनिक एवं जैविक बदलाव नहीं हो पाते है।

सूक्ष्म जीवों का नुकसान : मृदा की ऊपरी परत में पौधों को पौषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाने, कचरे एवं खाद को गलाने हेतु बहुत से सूक्ष्म जीव निवास करते हैं। भूसे को जलाने से इन जीवों का नुकसान भी होता हैं। ये सूक्ष्म जीव पौधों को जठिल पदार्थो को तौडकर सरल व प्राप्य अवस्था में पौधों को उपलब्ध कराते है।

फसल अवशेषों को न जलाने से लाभ

- पर्यावरण संतुलन एवं ग्लोबल वार्मिंग में रोकथाम में उपयोगी।
- मृदा उर्वरकता क्षमता में बढ़ोत्तरी अधिक पैदावार एवं उत्तम गुणवत्ता।
- भूमि में नमी की बचत एवं संरक्षण।
- प्रतिवर्ष लगभग 6–10 टन/हेक्टर की दर से जीवांश कम्पोस्ट की प्राप्ति से उर्वरकों पर निर्भरता में कमी, जिससे रासायनिक उर्वरकों के खर्च में कटौती होगी।
- सूक्ष्म जीवों (जैव उर्वरको, जैव फफूंदनाशको) की अधिकता से खर्च में कमी एवं पैदावार में बढोत्तरी।
- भूमि के जैविक, रासायनिक एवं भौतिक गुणों में बढ़ोत्तरी से कम खर्च में अधिक पैदावार।
- पशुओं के लिए वर्षभर कम खर्चे में भूसे एवं चारे की उपलब्धता बनी रहेगी।
- जैविक एवं संतुलित खेती को बढ़ावा।

किसानों हेतु सुझाव –अवशेषों के निस्तारण हेतु यह करें

1. चारा बनाये, अतिरिक्त आमदनी पायें : वर्षभर के लिए पशुओं की आवश्यकतानुसार चारा इकट्ठा करें अथवा बेचने हेतु चारा बनायें। कृषक लगभग 300 प्रति किवन्टल की दर से लगभग 18000 रूपये प्रति हेक्टर का भूसा जला देता है।

2. कम्पोस्ट बनाये, अधिक उपज पाये : खेत की कम होती जा रही जीवांश खाद की पूर्ति हेतु उपलब्ध तकनिकियों का सहारा लेकर कम्पोस्ट खाद तैयार करे ताकि खेती का खर्चा कम करके अधिक पैदावार पा सकें। आधुनिक कम्पोस्टिंग की तकनीकियों को काम मे लिया जा सकता हैं। फसल अवशेषों को जमीन में मिलाने से मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों पर कई प्रकार से सकारात्मक असर होता है।

3. मल्चिंग हेतु प्रयोग करें : जहां नमी एवं मृदा ह्रास होता है वहां मल्चिंग के रूप में बिछा देवें। अवशेषों के मल्चिंग करने के निम्न फायदे होते हैं–

- सर्दी में भूमि तापमान बढाती है, गर्मी में कम करती है। अर्थात मृदा तापमान का नियमन करती है।
- भूमि के जल को रोकता है।

- ढेले नहीं बनने देता।
- भूमि में जल रिसाव बढ़ता है।
- केंचुऐ एवं पादप जड़ों को भूमि में घुसने का स्थान बढ़ता है।
- वाष्प के रूप में नमी का उत्सर्जन कम करना।
- अच्छी नमी व मृदा स्वास्थ्य के कारण अच्छा उत्पादन।
- जल एवं वायु अपरदन से मिट्टी का संरक्षण।

4. मोरप्लॉव से गर्मी की जुताई करे : कटाई के पांच से सात दिन तक जानवरों को चरने देकर रोटावेटर व एमबी प्लाव से हकाई कर उपलब्ध जैविक तत्वों की खाद बना कर खेतों की उर्वरा शक्ति बढ़ाई जा सकती है। गर्मी की जुताई गेंहू कटाई के बाद 5–7 दिन में जरूर करें ताकि मृदा में उपलब्ध नमी का उपयोग हो सके। साथ ही इसमें 20–25 किलो/नत्रजन प्रति हेक्टर विखेर कर मोरप्लॉव चलाने से 6–10 टन/हेक्टर कम्पोस्ट खाद खेत में ही तैयार हो जाती है। जो खरीफ की फसलों तक लगभग पक जाती है।

5. मजदूरों से गेंहू कटाने में फायदा : पर्यावरण एवं उत्पादकता के नुकसान की कीमत का आंकलन नहीं किया जा सकता। यदि कीमत देखें, तो मजदूरों से कटिंग कराना फायदे का सौदा है।

- हार्वेस्टर मशीन से कृषक की 24000 रूपये तथा मजदूरों से कटाये गये गेंहू में 15000 प्रति हेक्टर की लागत आती है।
- प्रति हेक्टर 5000–6000रूपये कीमत का (300–400 कि. ग्रा.) गेंहू कम्बाईन हार्वेस्टर से हार्वेस्ट कराते समय खेत में बिखर जाता है।
- कृषक लगभग 300 प्रति किवन्टल की दर से 18000 रूपये प्रति हेक्टर का भूसा जला देता है।
- श्रमिकों से कटवाकर करीबन 20 श्रमिक प्रति हेक्टर की दर से श्रमिकों को रोजगार उपलब्ध कराया जा सकता।
- मजदूरी से समाज को लाखों–करोड़ों रूपये की अतिरिक्त आय हो सकती है।
- लाखों–करोड़ों पशुओं के लिए वर्षभर भूसे की व्यवस्था की जा सकती है।

6. ग्रेडर का उपयोग : यह मशीन कटाई को बाद फसल का छोटे छोटे टुकड़ों में काटने का कार्य करता है। जिसे बाद में मोर प्लॉव चलाकर जमीन में मिला देने से पूरे खेत में जीवांश खाद बन जाती है। जो तुलना में कम खर्चीला एवं प्रभावी कम्पोस्ट खाद है।

7. रीपर का उपयोग कटाई में करें : हार्वेस्टर मशीन से कटाई से रिपर अथवा श्रमिकों के द्वारा काटी गई फसल की तुलना में डेढ से तीन किवन्टल प्रति हेक्टर कम पैदावार प्राप्त होती है। जो कि श्रमिकों की कटाई की मजदूरी 70 से 90 किलो प्रति बीघा का लगभग 50 प्रतिशत है।

8. भूसे को इकट्टा करें : हार्वेस्टिंग अथवा बाद में चाप कट्र एवं चाफ कलेक्टर मशीन चलाकर भूसे को इकट्टा करें। मजदूरों की अनुपलब्धता में फसल को हार्वेस्टर मशीन से कटवाकर भूसा बनाने वाली मशीन से भूसा बनाकर बेचकर लाभ कमाया जा सकता है तथा छोटे–छोटे चारा स्टोर बनायें।

संरक्षित खेती को बढ़ावा देने हेतु क्या होना चाहिए

- कम्बाईन हार्वेस्टर में बदलाव कर इसमें अवशेष इकट्ठा करने व खेत से बाहर रखने का इंतजाम भी होना चाहिए।
- मशीनों में अवशेष को जमीन में मिलाने के साथ साथ अगली फसल की सफलतापूर्वक बुवाई का प्रावधान होना चाहिए।
- ऐसी मशीने अथवा तकनीकियां विकसित की जावें, जिससे भूसे का आकार कम करके आसानी से परिवहन किया जा सके।
- फसलवार, क्षेत्रवार फसल अवशेषों का सर्वोत्तम उपयोग होना चाहिए।
- अगली फसल के लिऐ खेत में रासायनिक एवं जैविक संतुलन बिगाडे बिना ही खेत में अमुख फसल अवशेष की अमुख मात्रा को, अमुख विधि से, अमुख समय पर किये जाने का निर्धारित सिफारिशी मापदण्ड़ तैयार किये जाने चाहिए।

नीतिगत सुझाव

फसल अवशेषो को जलाने से बचाने की आवश्यकता है। क्या हो सकते है विकल्प? हमारे पास बहुत सारे अन्य सकारात्मक विकल्प उपलब्ध है, जिन्हें काम में किया जा सकता हैं–

- जनचेतना व क्षमता विकास
- मनरेगा से मजदूरी
- मशीनों पर अनुदान
- भूसा का न्यूनतम समर्थन मूल्य
- भूसा भण्डारण योजना
- जलाने पर प्रतिबंध
- अन्य वैकल्पिक उपयोगों पर ध्यान दें
- ऊर्जा उत्पादन
- एल्कोहल उत्पादन
- बायोगैस बनाना
- गैसीकरण कर बिजली उत्पादन
- बायो तेल का निर्माण
- बायोचार बनाना

हाडौती में किसान गर्मी में अपने खेत के गेंहू के बचे हुऐ पादप भाग (भूसे) को जलाते हैं, ताकि अवांछित पौधों (खरपतवारो), कीटों तथा कुछ बीमारियों की रोकथाम हो सके। माना कि यह बहुत ही कम खर्च व आसानी से हो जाता है। लेकिन किसान भाईयों को इसका वास्तविक ज्ञान होना आज बहुत जरूरी हो गया है। अतः इनकों जलाने की बजाय निस्तारण का प्रभावी तरीका अपनाया जाना चाहिए। हम फसल अवशेषों का उचित प्रबंधन न कर इनका दुरूपयोग कर रहें है। जबकि यदि इन अवशेषों का सही ढंग से खेती में उपयोग करें, पशुओं को खिलाये, ऊर्जा उत्पादन करे, बायोगैस बनाये, खेत में मिला देवे तो फसल उत्पादन के साथ साथ हम पशुपालन, सुरक्षित पर्यावरण एवं मृदा को निरन्तरतर उत्पादन देने लायक बनाकर देश की बढ़ती जनसंख्या को खाद्य सुरक्षा एवं देश को आर्थिक लाभ पहुंचा सकते है।

❋❋❋

बीज उत्पादन और प्रसंस्करण के दौरान गुणवत्ता नियंत्रण

संदीप कुमार बांगड़वा, आर.बी. दूबे, भावना गोस्वामी एवं सुनिल कुमार
आनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, राजस्थान कृषि महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, बारां (राजस्थान)

बीज गुणवत्ता ह्रास अपरिवर्तनीय क्रिया है। बीज यदि खराब हो जाता है, तो उसे सुधारा नहीं जा सकता। बीज गुणवत्ता ह्रास को पूरी तरह रोका भी नहीं जा सकता। बीज उत्पादन की विभिन्न अवस्थाओं जैसे कटाई, गहाई, संसाधन, भंडारण एवं वितरण के दौरान बीज को संदूषण के विभिन्न स्त्रोतों से बचाकर इसे कम किया जा सकता है। साथ ही बीज को ठीक से सुखाई–सफाई एवं कम नमी व ताप अवस्था में भंडारण करके बीज की जीवन क्षमता व ओज को काफी हद तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

बीज उत्पादन के दौरान गुणवत्ता नियंत्रण

1. बीज स्त्रोत का नियंत्रण : उच्च गुणता सम्पन्न बीज प्राप्ति के लिए बीज किसी मान्य स्त्रोत से लिया जाता है, जिससे शुद्धता के साथ–साथ, उसकी वंशावली (Pedigree) व वर्ग भी ज्ञात रहे। बुवाई से पूर्व बीज की शुद्धता की पुष्टि बीज थैलों पर लगे लेबिल एवं सील से कर ली जाती है। बीज किसी प्रमाणीकरण संस्था की देख रेख में तैयार किया जाता है।

2. खेत का चयन : यदि खेत में पिछले वर्ष वही फसल उगाई गई थी और फसल में रोगों और कीड़ों का संक्रमण स्तर से अधिक हुआ था तो ऐसे खेत का चयन, नहीं किया जा सकता, क्योंकि ऐसी स्थिति में मृदा–जन्य रोग व कीड़ें तथा स्वैच्छिक उगे पौधे समस्या उत्पन्न कर सकते हैं। अतः जहाँ आवश्यक हो पिछली फसल आवश्यकता लागू की जाती है।

3. संदूषण स्त्रोतों से पृथक्करण : बीज फसल को पर–परागण द्वारा होने वाले संदूषण तथा कटाई व गहाई के समय अन्य बीजों के मिश्रण तथा रोगों के फैलाव की रोकथाम के लिए निश्चित पृथक्करण दूरी की आवश्यकता होती है।

4. फसल सुरक्षा : बीज फसल को खरपतवार, रोग व कीड़ों से मुक्त रखने के लिए आवश्यकतानुसार निराई–गुड़ाई व कवकनाशकों तथा कीटनाशकों का छिड़काव भी करना चाहिए, अन्यथा उसकी उपज व गुणता में कमी होगी।

5. अवांछित पौधा निष्कासन : बीज फसल से पुष्पन से पूर्व अन्य किस्मों के पौधों, रोगी पौधों व खरपतवारों को निकाल देना चाहिए, जिससे पर–परागण व रोगों के प्रसार से बीज खराब न होने पाए। शेष बचे अवांछनीय पौधों को बीज मिश्रण रोकने के लिए कटाई से पूर्व निकाल देना चाहिए।

6. कटाई व गहाई : सर्वोच्च अंकुरण व गुणवत्ता प्राप्त करने के लिए सही परिवपक्ता पर बीज फसल की कटाई की जाती है, क्योंकि इसके तुरन्त पश्चात् बीज गुणवतत्ता में ह्रास होना शुरू हो जाता है। कटाई में देरी होने पर धूप, वर्षा, चिड़ियों, जंगली जानवरों, बीज बिखरने (Shattering) व चटकने से बीज गुणवत्ता में ह्रास होता है और कटाई शीघ्र करने से अधिक नमी के कारण कटाई, गहाई व सफाई करने में बीज क्षति होती है तथा कवकों व कीड़ों का आक्रमण शीघ्र होता है। कटाई व गहाई के समय यह विशेष ध्यान रखा जाता है कि अन्य फसलों से बीज मिश्रण न होने पाएँ। इसके लिए गहाई–दूसरी फसलों व किस्मों के बीजों से पर्याप्त दूरी पर की जाती है तथा गहाई के फर्श व मशीनों की उचित सफाई की जानी चाहिए।

बीज प्रसंस्करण के दौरान गुणता नियंत्रण

1. बीज सुखाई : कटाई के समय बीज में नमी की मात्रा बहुत अधिक होती है। अतः बीज की जैविकता तथा ओज बनाए रखने के लिए बीज की नमी को जल्द से जल्द सुरक्षा स्तर तक घटाना होता है। बीज सुखाई के दौरान भी बीज ढ़ेर की पहचान बनाए रखी जाती है तथा बीज को संभावित मिश्रण से बचाया जाता है। बीज में नमी की अधिकता, बीज के अंकुरण तथा ओज में ह्रास का मुख्य कारण है।

2. बीज सफाई तथा श्रेणीकरण : कटाई के समय बीज में बहुत–सी अशुद्धियाँ मिली रहती हैं जैसे–दूसरी किस्मों व फसलों के बीज, खरपतवारों के बीज तथा अक्रिय पदार्थ जो विभिन्न मशीनों के द्वारा शुद्ध बीज से अलग किए जात हैं। अतः सफाई से पूर्व यह निश्चित कर लेना आवश्यक होता है कि मशीन में पहले से दूसरी फसलों अथवा किस्मों के बीज न हों और मशीन ठीक से काम कर रही हो, अन्यथा यांत्रिक बीज मिश्रण और बीजों की टूट–फूट की संभावना रहती है।

3. बीज उपचार : बीजों को बीज–जन्य एवं मृदा–जन्य रोगों व कीड़ों से बचाने के लिए उन्हें उपचारित किया जाता है। बीज उपचार के लिए सही कीट एवं रोगाणुनाशक व उसकी सही मात्रा प्रयोग में लानी चाहिए, अन्यथा बीज की जीवन–क्षमता तथा ओज पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। कुछ रसायनों से उपचार के बाद भंडारण करने में कुछ सावधानियां रखनी होती हैं और कुछ पारदीय रसायनों से उपचार बुवाई से थोड़े समय पहले ही किया जाता है। बीजोपचार एफ.आई.आर. नुस्खे से करना चाहिए। इसमें सर्वप्रथम कवकनाशी, कीटनाशी तथा अन्त में राईजोबियम या पीएसबी कल्चर से उपचारित करना चाहिए।

कल्चर से उपचार : बीजों को उपचारित करने के लिए एक लीटर पानी में 200–250 ग्राम गुड़ मिलाकर गर्म किया जाता है तथा घोल ठण्डा होने पर इसमें राईजोबियम 500–600 ग्राम तथा फॉस्फोरस घोलक जीवाणु 500–600 ग्राम मिलाकर बीजों पर एक समान परत चढ़ा कर छाया में सूखाकर प्रयोग में लाना चाहिए। कल्चर से बीजोपचार कर 10 किग्रा नत्रजन तथा 20 किग्रा फॉस्फोरस प्रति हेक्टर तक बचत की जा सकती है।

4. बोराबंदी एवं भंडारण : भंडारण के लिए प्रयुक्त बोरे साफ तथा नमीरोधी होने चाहिए, अन्यथा बीज मिश्रण व नमी से बीज गुणवत्ता में कमी आ सकती है। बीजों का कम नमी व कम तापमान की स्थितियों में भंडारण किया जाता है। उचित भंडारण से बीज की जैविकता, कटाई से उसकी बिक्री तक सुरक्षित रखी जा सकती है, लेकिन जिन बीजों की गुणवत्ता में कटाई से पूर्व खराब मौसम, अधिक नमी अथवा संसाधन के दौरान ह्रास आरम्भ हो चुका होता है, उनमें भंडारण के दौरान भी और कमी आती है।

मिट्टी एवं जल परीक्षण की आवश्यकता एवं नमूना लेने की विधि

अनिल कुमार शर्मा, भैरुलाल कुम्हार, आकाश तंवर एवं राजेन्द्र कुमार नागर
कृषि प्रौद्योगिकी प्रबन्धन एवं गुणवत्ता सुधार केन्द्र एवं कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा, (राजस्थान)

कृषि के बदलते परिवेश में मृदा परीक्षण के बिना किसान अपने वर्षों के अनुभव के बावजूद भी मृदा की भौतिक, रसायनिक एवं जैविक दशाओं का सही–सही अंदाज नहीं लगा सकता। मृदा परीक्षण के आधार पर हमें पता चलता है कि हमारी मिट्टी में कौन–कौन से पोषक तत्व की कमी है एवं उनकी पूर्ति के लिए कितनी मात्रा में खाद एवं उर्वरकों की आवश्यकता है। साथ ही वृक्षारोपण, बाग लगाने के लिए एवं समस्याग्रस्त मृदाओं में भी मृदा परीक्षण के आधार पर हम बता सकते हैं। मृदा लवणीयता, क्षारीयता एवं अम्लीयता की पहचान एवं उनके सुधार के लिए हम मृदा की विभिन्न गहराईयों से मृदा नमूना लेते हैं। मृदा परीक्षण से मृदा की उर्वरा शक्ति एवं मृदा के भौतिक, रसायनिक एवं जैविक दशाओं में सुधार एवं किसान की आर्थिक लागत में कमी एवं उपज में बढ़ोतरी होती है तथा खाद एवं उर्वरकों की अत्यावश्यक मात्रा एवं उनके विपरीत नकारात्मक प्रभाव से भी बचा जा सकता है।

मृदा परीक्षण के उद्देश्य

- मृदा उर्वरता का मूल्यांकन एवं उसके आधार पर
- खाद एवं उर्वरकों की उचित मात्रा की सिफारिश।
- वृक्षारोपण एवं बाग लगाने के लिए मृदा परीक्षण।
- समस्याग्रस्त मृदाओं की पहचान एवं उनका सुधार।

पौधा के आवश्यक पोषक तत्व

- पौधों को सामान्य वृद्धि एवं विकास हेतु कुल 17 पोषक तत्वों की आवशयकता होती है। इनमें से किसी भी एक पोषक तत्व की कमी होने पर पौधें सबसे पहले उस तत्व की कमी को दर्शाते हैं।
- कार्बन, हाईड्रोजन, ऑक्सीजन पौधे हवा एवं जल से प्राप्त करते है।
- नत्रजन, फॉस्फोरस एवं पोटेशियम को पोधे मिट्टी से अधिक मात्रा में प्राप्त करते है। इन्हें प्रमुख पोषक तत्व कहते है।
- कैल्शियम, मैगनिशियम एवं गंधक को पौधे अपेक्षाकृत कम मात्रा में मिट्टी से प्राप्त करते हैं। इन्हें गौण पोषक तत्व कहते है।
- लोहा, जस्ता मैगनीज, तांबा, बोरोन, मोलिब्डेनम, क्लोरीन एवं निकिल तत्वों की पोधों को काफी कम मात्रा में आवश्यकता पडती है, इन्हें सूक्ष्म पोषक तत्व कहते हैं।

मिट्टी परीक्षण की आवश्यकता

- मिट्टी से ग्रहण किए जाने वाले प्राथमिक, गौण एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्ध मात्रा ज्ञात करने के लिए।
- पोषक तत्वों के समुचित प्रबंधन एवं उर्वरकों के सही प्रयोग के लिए, क्योंकि एक पोषक तत्व दूसरे का विकल्प नहीं हो सकता है।
- मिट्टी के विभिन्न विकारों – अम्लीयता, क्षारीयता एवं लवणीयता को दूर करने के लिए।
- मिट्टी सुधारकों – चूना, जिप्सम आदि की मात्रा का निर्धारण।
- ऐसी फसलों एवं उनके प्रजातियों की सिफारिश करना जो अम्लीयता, क्षारीयता को सहन करने की क्षमता रखती है।

मिट्टी परीक्षण का सही समय

मृदा नमूना कभी–भी ले सकते हैं परन्तु गर्मियों में रबी फसल की कटाई के बाद से लेकर खरीफ की बुवाई से पहले तक मिट्टी का नमूना लें तथा जहाँ पूरे वर्ष फसलें ली जाती हैं वहाँ फसल कटाई के तुरन्त बाद फसल बोनें या रोपाई करने के एक माह पूर्व खेत से मिट्टी नमूना लें व जांच करवायें। इसके अलावा बहुवर्षीय या खड़ी फसल मे पौधों की कतार के बीच से मृदा नमूना लेना चाहिए तथा यदि खेत में कोई जैविक खाद एवं उर्वरक उपयोग कम से कम 25–30 दिन बाद मृदा नमूना लें अन्यथा परिणाम गलत हो सकते हैं। आमतौर पर तीन वर्ष में एक बार मृदा नमूना अवश्य लें।

मृदा नमूना लेते समय सावधानियाँ

- मृदा नमूना के लिए स्थान का चयन करते समय खेत की मेढ़, सिंचाई के नाले के नजदीक पेड़ के नीचे या पास वाले स्थान से तथा खाद के ढेर के नजदीक वाले स्थान से मृदा नमूना ना लेवें। समस्याग्रस्त मृदा में उसके किसी भाग का नमूना अलग से लें।
- जहाँ तक सम्भव हो गीली मृदा का नमूना न लें अन्यथा उसे छाया में सुखाकर प्रयोगशाला भेजें।
- उस स्थान से मृदा नमूना न ले जहाँ पर चूना, जिप्सम, खाद एवं उर्वरकों का उपयोग तत्काल किया गया हो।
- रंग, ढलान, उर्वरा शक्ति की दृष्टि से भिन्न लगने वाले स्थान से मृदा नमूना अलग लेवें।
- मृदा नमूना लेने के लिए काम आने वाले औजार एवं सामग्री बिल्कुल साफ होनी चाहिए।

मृदा नमूना लेते समय काम आने वाले प्रमुख सामग्री व औजार

- फावड़ा, खुरपी, कस्सी, स्केल, टैग, मार्कर आदि।
- मृदा की विभिन्न गहराईयों से /अधिक गहराई या गीली मिट्टी से नमूना लेने के लिए पोस्ट होल ऑगर औजार या सख्त मिट्टी से नमूना लेने के लिए बर्मा।
- नमूनों को एकत्र करने के लिए गमला, बाल्टी, ट्रे इत्यादि।
- गड्ढे खोदने के लिए कस्सी या बेलचा का प्रयोग करें।
- मृदा नमूना रखने के लिए मिट्टी को बिछाने एवं नियंत्रित करने के लिए तीरपाल या पॉलीथीन शीट।

- मृदा नमूना एकत्रित करने के लिए कपड़े का थैला या पॉलीथीन बैग।
- नोटशीट या पैपर शीट एवं टैग जिसमें नमूने से सम्बन्धित विस्तृत जानकारी लिखी जा सके।
- नमूना लेने वाले किसी भी औजार में जंग, खाद उर्वरक दवाईयाँ नही लगा होना चाहिए।

नमूना लेने का तरीका

- मृदा नमूना लेने का समय सुबह या शाम का समय उचित रहता है।
- मृदा परीक्षण के लिए किसी भी खेत से लिया गया नमूना इस तरह होना चाहिए कि उस सारे खेत का प्रतिनिधी नमूना हो। एक मात्र नमूना जिसके आधार पर पूरे खेत की उर्वरा शक्ति का सही–सही ज्ञान हो सके।
- एक खेत या एक भाग जिसका नमूना लेना है उसके आकार के अनुसार ही नमुने ले या नमूने कि सख्या निर्धारित करें। उसके 8–10 स्थानों का चयन कर निशान लगा लें। खेत ज्यादा बड़ा हो तो स्थान की संख्या ज्यादा भी कर सकते हैं।
- प्रत्येक स्थान की ऊपरी सतह से घास–फूंस, कंकड़–पत्थर आदि साफ कर लें।
- नमूना खेत की मेड से दो तीन फिट या एक मीटर जगह छोडकर ही नमूना लें नमूना खेत की चारों कोनों व खेत के बीच के भाग से जरूर लें।
- एक खेत या भाग से लिए गये सभी नमूनों को साफ सतह पर या पोलिथीन शीट पर रखकर खूब अच्छी तरह मिलायें ।
- पूरी मात्रा को छाया में फैला दें व सूखने दे तथा दिन में तीन चार बार हाथ घुमायें जिससे नमुनें कि नमी कम हो जाये या उड जाये।
- नमूना पूरी तरह सुखने के बाद नमूना तैयार करना।

नमूना तैयार करना

- खेत के सभी नमूनों को एक स्थान पर पोलिथिन की शीट बिछाकर उसके उपर डाल दें।
- सभी नमूनों को अच्छी तरह मिलायें।
- नमूने कों चार बराबर भागों में बराबर मात्रा में बॉट दें। फिर आमने सामने वाले दोनों भागों को हटा दें।
- शेष नमूने के भाग को फिर मिलाकर यह क्रिया दुबारा करें व जब तक यही किया दोहराते रहें। जब तक लगभग आधा किलों ग्राम मिट्टी शेष ना रह जायें।
- शेष भाग को फिर मिलाकर चार भागों मे तथा आमने सामने वालें भागो को हटा दें।
- नमूने कों खाद उर्वरक दवाईयाँ आदि के सर्म्पक में न आने दें।
- नमूने कों दो तीन दिन के अन्दर ही प्रयोगशाला में परीक्षण के लिये भेज दें।

निम्नलिखित जानकारियां एक कागज पर लिखकर थैली के अन्दर डाल दें

1. किसान का नाम.....,
2. किसान के पिता का नाम.....,
3. गांव.....,
4. तहसील.....,
5. खेत का खसरा नं.....,
6. सिंचित या असिंचित.....,
7. ली जाने वाली फसल का नाम.....,
8. खरीफ....., रबी....., जायद.....,

मिट्टी परीक्षण : मिट्टी प्रतिकिया पी.एच

मिट्टी की अम्लीयता, क्षारीयता, पौध पोषक तत्वों की उपलब्धता, मिट्टी की भौतिक अवस्था एवं सूक्ष्म जीवाणुओं की कियाशीलता का पता चलता है। जिससे उपयुक्त फसलों की सिफारिश की जाती है।

विद्युतचालकता : घुलनशील लवण मिट्टी में घुलनज्ञील लवणों की मात्रा ज्ञात की जाती है। घुलनशील लवणों की मात्रा के आधार पर सामान्य, लवण सहन शील एवं अर्द्ध लवण सहनशील फसलों की सिफारिश की जाती है।

तालिका : 1 मिट्टी का वर्गीकरण, पोषक तत्वों की उपलब्धता एवं फसल सिफारिश

मिट्टी का वर्गीकरण	पोषक तत्वों की उपलब्धता		फसलों की सिफारिश
	कम	अधिक	
अम्लीय	नत्रजन,फॉस्फोरस, गंधक, कैल्शियम	जस्ता, तांबा, मैगनिज, लोहा, पोटेशियम, बोरान	धान,गेहूँ,मक्का,गन्ना, टमाटर, प्याज
क्षारीय	नत्रजन,फॉस्फोरस, लोहा, मैगनिज, तांबा, बोरान, जस्ता ।	पोटाशियम, गंधक, कैल्शियम, मैगनिशियम, मोलिब्डेनम।	धान, गेहूँ, ज्वार, जौ, बाजरा, राई, सरसों
सामान्य	पोषक तत्वों की उपलब्धता की कोई समस्या नही		सभी फसलें
क्षारीय–लवणीय	पोषक तत्वों की उपलब्धता की समस्या रहती है		धान, गेहूँ, जो, बाजरा, सरसों

नोटः– क्षारीयता व लवणीयता वाली मिट्टी में फसलों की सहनशील किस्में ही लगाएं।

तालिका : 2 विद्युत चालकता के आधार पर मिट्टी का वर्गीकरण एवं फसलों पर प्रभाव

विद्युत चालकता मिली म्होज/से.मी.	लवणीयता	मुख्य फसलें
1.0 से कम	सामान्य	सभी फसलों के लिए उत्तम
1.0 से अधिक	लवणीय	धान,गेहूँ,जौ,कपास, सरसों, ज्वार,मक्का बरसीम, रिजका, पालक, गाजर, इत्यादि उगाएं।

प्रमुख पोषक तत्व

नत्रजन : मिट्टी में उपलब्ध नत्रजन की मात्रा ज्ञात करने हेतु शीघ्र ऑक्सीकृत होने वाले जैविक कार्बन को आधार मानकर विभिन्न नत्रजन युक्त उर्वरकों की मात्रा की सिफारिश की जाती है।

फॉस्फोरस : मिट्टी में उपलब्ध फास्फोरस के आधार पर उर्वरकों की मात्रा की फॉस्फोरस के आधार पर फॉस्फेटिक उर्वरकों की मात्रा की सिफारिश की जाती है।

पोटेशियम : मिट्टी में उपलब्ध पोटेशियम की मात्रा ज्ञात कर उपलब्ध पोटेशियम के आधार पर पोटेशियम उर्वरकों की मात्रा की सिफारिश की जाती है।

तालिका : 3 मिट्टी में उपलब्ध पोषक तत्वों का वर्ग निर्धारण

तत्व	निम्न	मध्यम	उच्च
जैविक कार्बन (%)	0.5 से कम	0.51–0.75	0.75 से अधिक
नत्रजन (कि.ग्रा./हेक्टर)	280 से कम	280–560	560 से अधिक
फॉस्फोरस (कि.ग्रा./हेक्टर)	23.0 से कम	23.0–56.0	56.0 से अधिक
पोटाश (कि.ग्रा./हेक्टर)	120 से कम	120–280	280 से अधिक

तालिका : 4 जाचं रिपोर्ट के आधार पर पोषक तत्वों की सिफारिशें कि.ग्रा/हेक्टर

फसलों के नाम	नाइटोजन			फॉस्फोरस			पोटाश		
	कम	मध्यम	अधिक	कम	मध्यम	अधिक	कम	मध्यम	अधिक
गेहूँ	140	120	100	72	60	52	36	30	24
धान	140	120	100	72	60	52	36	30	24
गन्ना	180	150	120	72	60	52	36	30	24
कपास	120	100	80	60	50	40	36	30	24
सरसों	70	60	50	48	40	32	20	10	0
मूंगफली	20	15	10	70	60	50	10	0	0
मक्का	108	90	72	54	45	36	30	20	0
ज्वार	96	80	64	48	40	32	30	20	0
सोयबीन	25	20	15	48	40	32	30	20	0
दालें	20	15	10	48	40	32	10	0	0

आप अपने मिट्टी नमूनों की जाचं रिपोर्ट की सिफारिशों को निम्न प्रकार से समझ सकते है। अगर मिट्टी जांच रिपोर्ट में जैविक कार्बन ,फास्फोरस एवं पोटेशियम निम्न वर्ग में दिखाया गया है तो गेहूँ के लिए 140 कि.ग्रा. नत्रजन (243 कि.ग्रा यूरिया) 72 किग्रा फास्फोरस (157 कि.ग्रा. डी.ए.पी.) एवं 36 कि.ग्रा पोटाश 60 कि.ग्रा म्यूरेट आफ पोटाश प्रति हेक्टर की आवशयकता होगी।

सूक्ष्म पौध पोषक तत्व : अच्छी फसल उत्पादन में सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे –जस्ता, लोहा, मैगनीज तांबा, बोरोन,क्लोरीन मोलिब्डिनम एवं निकिल का उतना ही महत्व है जितना कि वृद्धि एवं विकास में प्रत्येक पोषक तत्व एक निश्चित कार्य निष्पादन की भूमिका अदा करता है।इन तत्वों की कमी या अधिकता फसल उत्पादन पर विपरीत प्रभाव डालती है। अतः उनका उपयोग तभी करना चाहिए जब मिट्टी में इनकी कमी हों।

तालिका : 5 मिट्टी में उपलब्ध सूक्ष्म तत्वों की निर्णायक सीमा एवं सूक्ष्म तत्वों के मृदा मे उपयोग की उर्वरक सिफारिश

तत्व	उपलब्ध की क्रान्तिक सीमा पी.पी. एम.	सूक्ष्म तत्व उर्वरकों की सिफारिश मात्रा/हेक्टर
लौहा	4.5	फेरस सल्फेट (19%) 10 कि.ग्रा.
मैग्नीज	2.0	मैगनीज सल्फेट (30.5%) 10 कि.ग्रा.
जस्ता	0.6	जिंक सल्फेट (21%) 20 कि.ग्रा.
तांबा	0.2	फेरस सल्फेट (24%) 10 कि.ग्रा.

सिंचाई जल परीक्षण : सिचाई जल की लवणीयता एवं क्षारीयता का ज्ञात करने के लिए की जाती हैं क्योकि लवणीय व क्षारीय जल से सिचांई करने से बहुमूल्य मिट्टी लवणीय व क्षारीय बन सकती है।

सिंचाई जल का नमूना लेने की विधि : जल को साफ ग्लास या प्लास्टिक बोतल में लेना चाहिए। बोतल को उसी पानी से अच्छी तरह से 3–4 बार धो लेना चाहिए। बोतल को धोने के लिए या डिटरजेन्ट का प्रयोग नहीं करनी चाहिए। ट्यूबवैल को कम से कम आधा घंटा चलाने के बाद आधा लीटर पानी का नमूना लेना चाहिए। मीठा पानी भी जमीन तथा फसलों के लिए हानिकारक हो सकता है। अतः प्रत्येक बोर की जांच करवाकर नाम तथा सिफारिश पर ही पक्का करना चाहिए। बोतल पर नाम पता नमूने की पहचान आदि लिखकर 2–3 दिन के अन्दर प्रयोगशाला में पहुंचा देना चाहिए।

अपने नलकुप ट्यूबवैल के पानी की जांच वर्ष में 2 बार रबी और खरीफ में अवश्य करवाएं।

तालिका : 6 विद्युत चालकता के आधार पर पानी का वर्गीकरण

विद्युतचालकता (मि.म्होज/से.मी.)	पानी की गुणवत्ता	उपयुक्त फसलें
1.5 से कम	साफ अच्छी गुणवत्ता	सभी फसलें
1.5–3.0	हल्का लवणीय अच्छा	चवल, गेंहूँ, ज्वार, मक्का, प्याज इत्यादि
3.0–10.0	खारा, मध्यम लवणीय	गेंहूँ, गाजर, मटर, मक्का इत्यादि
5.0–10.0	लवणीय खराब, कम गुणवत्ता	जौ, चुकन्दर, कपास, बेर, गन्ना, पालक इत्यादि
10.00–15.00	अधिक लवणीय बहुत खराब	कोई फसल नहीं

सिंचाई जल की समस्याए एवं उनका निदान

1. यदि पानी में धुलनशील लवणों की मात्रा विद्युत चालकता अधिक हो तो:

- ऐसे जल का हल्का –हल्की सिचांई के रूपमें प्रयोग करें ।
- यदि अधिक मात्रा में लवण हो तब प्रयोग न करें।
- सदि कैल्शियम, मैगनिशियम की प्रचुर मात्रा में जल में हो तो कुछ हद तक रेतीली दोमट मिट्टी में प्रयोग कर सकते है।
- यदि अन्य कोई अच्छी गुणवत्ता वाला सिंचाई जल उपलब्ध हो तो दोनों को मिलाकर प्रयोग करना चाहिए।

2. यदि लवणीयता के साथ–साथ सोडियम अधिशोषण अनुपात अधिक हो तो ऐसे जल का प्रयोग किसी अन्य अच्छी गुणवत्ता वाले जल के साथ मिलाकर करना चाहिए।

3. यदि उपरोक्त तीनों समस्याए एक साथ हो तो वैज्ञानिक परामर्श लेनी चाहिए।

संतुलित उर्वरक उपयोग

- फसल उपयोग मिट्टी की उर्वरकतानुसार सभी जरूरी पोषक तत्वों की सही मात्रा में सही समय पर पूर्ति संतुलित उर्वरक उपयोग कहलाता है। इनके निम्नलिखित मुख्य लाभ हैं
- पोषक तत्वों की कमी दूर करता है।
- भूमि की उर्वराशक्ति बढाता है।
- उर्वरक उपयोग क्षमता बढाता है।
- फसल की उपज एवं गुणवत्ता बढाता है।

❋❋❋

''अभिनव कृषि'' अंकवार प्रकाशित होने वाली विषय सामग्री

अंक	प्रकाशन माह	विषय–विशेषांक
1	**जून**	खरीफ फसल विशेषांक, खरीफ फसलों में समन्वित कीट, रोग व खरपतवार, प्रबंधन, मृदा एवं जल संरक्षण
2	**सितम्बर**	रबी फसल विशेषांक, रबी फसलों में समन्वित कीट, रोग व खरपतवार प्रबंधन, फसल विविधीकरण
3	**दिसम्बर**	सिंचाई प्रबंधन, मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन, जैविक खेती, समन्वित कृषि प्रणाली, आधुनिक डेयरी, मधुमक्खीपालन, मशरूम उत्पादन, एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन
4	**मार्च**	जायद खेती, उन्नत कृषि उपकरण, संरक्षित खेती, हाई–टेक बागवानी, फल–फूल, सब्जी उत्पादन, मृदा प्रबंधन, पशुपालन प्रबंधन, फल सब्जी परिरक्षण एवं खाद्य प्रसंस्करण

लवणीय एवं क्षारीय मृदा का सुधार

बृजेश यादव एवं पी.के. गुप्ता
कृषि विज्ञान केन्द्र, उजवा, दिल्ली–110073

उन्नत खेती के लिए उपजाऊ मृदा का होना नितान्त आवश्यक है। वैसे तो सभी मृदाओं में थोड़े–बहुत घुलनशील लवण होते है। लेकिन जब इन घुलनशील लवणों की मात्रा सामान्य स्तर से अधिक हो जाती है तो ये पौधों के लिए हानिकारक सिद्ध होते है। भूमि लवणता एवं क्षारीयता विश्व की एक प्रमुख समस्या है। खाद्य एवं कृषि संगठन (एफ.ए.ओ. 2017) के अनुसार दुनिया भर में लगभग 800 मिलियन हैक्टर कृषि भूमि लवणीयता एवं क्षारियता से प्रभावित है। भारत में लवणीय एवं क्षारीय मृदाओं का क्षेत्रफल लगभग 67.3 लाख हे. है। इसमें 37.7 लाख है. क्षेत्र क्षारीय एवं शेष 29.6 लाख है. क्षेत्र में मृदा लवणीय है। इन लवण ग्रस्त मृदा क्षेत्रों के कृषक समुदाय की आजीविका सुरक्षा के लिए अति गंभीर खतरा है। क्षारीयता प्रभावित मृदा क्षेत्र का विस्तार देश के 11 प्रदेशों में है। उत्तर प्रदेश में क्षारीयता प्रभावित सर्वाधिक 13.5 लाख है. क्षेत्र है जो कि कुल प्रभावित क्षेत्र का 35.75 प्रतिशत है। इसके बाद गुजरात, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, हरियाणा एवं पंजाब में क्षारीय मृदा क्रमशः 14.3, 11.2, 9.4, 4.8 व 4.0 प्रतिशत क्षेत्र है । क्षारीयता प्रभावित कुल क्षेत्र का लगभग 80 प्रतिशत भूभाग इन 6 प्रदेशों में स्थित है। जहाँ पर फसलोत्पादन नही होता है। या उपज बहुत कम होती है। ऐसी विषम परिस्थितियों में किसान भाइयों को हताश न होकर लवणीय या क्षारीय मृदा का वैज्ञानिक तरीके से प्रबंधन कर उन्नत खेती करनी चाहिए। इस तरह की मृदाओं को सुधारने से पहले यह जानना आवश्यक हो जाता है कि यह किस प्रकार की समस्याग्रस्त मृदा है।

समस्याग्रस्त मृदाओं का वर्गीकरण : इस प्रकार की मृदाओं को मुख्य रूप से तीन भागों में बाटा जाता है।

लवणीय भूमि : इन भूमियों को रहे या लूनी भी कहते है। उपरी सतह पर सफेद रंग का नमक सा जमा हो जाता है। इन मिट्टियों की भौतिक दशा आमतौर पर ठीक होती है। जल पारगम्यता भी सामान्य रहती है। इन मृदाओं में जल निकास की उचित व्यवस्था कर दी जाती है तो घुलनशील लवण अधिकतर निक्षालित हो जाते है। ये भूमिया अगर भू–जल स्तर सिमित गहरायी से उपर नही आये फिर से सामान्य हो जाती है। इन भूमियों में कैल्शियम, मैग्नीशियम, सोडियम क्लोराइड तथा सल्फेट की मात्रा 0.1 प्रतिशत से अधिक होती है। जिसका फसलों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

1. पौधों में पानी की प्राप्यता का कम होना।
2. बीज जमाव में देरी लगना।
3. पौधो की बढ़वार धीरे–धीरे होना।
4. लवणों की अधिकता से पौधो को सूखे की स्थिति जैसा प्रभाव मालूम पड़ता है।
5. फास्फोरस, जस्ता, नाइट्रोजन, लोहा इत्यादि पोषक तत्वों की उपलब्धि में कमी।

क्षारीय भूमि : इन भूमियों को उसर भूमि भी कहते है। क्षारीय मृदाओं की दशा बहुत असंतोषजनक होती है। इसमें सोडियम कार्बोनेट/सोडियम बाई कार्बोनेट लवणों की प्रमुखता होती है तथा विनिमयशील कैल्शियम और मैग्नीशियम की मात्रा बहुत कम होती है। मिट्टी की भौतिक दशा बहुत ही खराब होती है। उपरी सतह पर काले रंग की पपड़ी जम जाती है तथा फसले प्रभावित होती है।

1. उपरी सतह पर पपड़ी सी होती है जो पानी को नीचे जाने तथा बीज को अंकुरित होने से रूकावट डालती है।
2. पानी देर तक नही सूखता, सूखने पर दरारे पड़ जाती है।
3. इस भूमि मे सोडियम की अधिकता होने से भूमि की संरचना को नष्ट कर देती है।
4. नाइट्रोजन, कैल्शियम, जस्ता, लोहा, मैग्नीशियम और ऑक्सीजन की कमी होती है।
5. पौधे में कुछ तत्व जैसे बोरान, फ्लोरिन इत्यादि की उपलब्धता अधिक बढ़ जाती है जो फसलो पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है।
6. नाइट्रोजन गैस रूप में अधिक होती है।
7. जीवांश पदार्थ न के बराबर होती है।

लवणीय क्षारीय भूमि : जो भूमि लवणता और क्षारीयता दोनों से ही प्रभावित हो उसे लवणीय क्षारीय भूमि कहते है। इन मृदाओं में संतृप्त घोल की विद्युत चालकता 4 मि. म्होज/सेमी. से अधिक तथा विनिमय योग्य सोडियम 15 प्रतिशत से अधिक होता है। परन्तु यह लवणो की मात्रा व प्रकार पर निर्भर करता है। उदासीन घुलनशील लवणों की मात्रा अगर अधिक है तो पी.एच. मान 8.5 से कम होती है। जब लवण निक्षालित होते है तो पी.एच. मान 8.5 से अधिक बढ़ जाता है। लेकिन अगर मृदा में जिप्सम अथवा कैल्शियम कार्बोनेट की मात्रा पर्याप्त हो तो लवणों के निक्षालन का पी.एच. मान भी घट जाता है।

लवण प्रभावित मृदाओं का फसल पर असर : जैसे–जैसे मृदा में लवणों की मात्रा बढ़ती है। वैसे–वैसे मृदा जल का परासरण दबाव भी बढ़ता है। परासरण दबाव बढ़ने से पौधे पानी को उतनी आसानी से अलवणीय अथवा सामान्य मृदाओं से खींच सकते है। जिसके फलस्वरूप पानी मृदा में विद्यमान होने के बावजूद पौधों की पहुंच से बाहर हो जाते है। लवणों की

तालिका : 1 लवण ग्रस्त मृदा का रासायनिक गुणों के आधार पर वर्गीकरण

क्र.सं.	रासायनिक गुण	लवणीय मृदा	क्षारीय मृदा	लवण व क्षारीय मृदा
1.	pH	<8.5	<8.5	<8.5
2.	EC (ds/m)	>4.0	<4.0	>4.0
3.	SAR	<13	>13	>13
4.	ESP	<15	>15	>15
5.	Soluble Solt%	>1	<1	>1

अधिकता के कारण एक या एक से अधिक तत्वों के अवशोषण से पौधो में जमाव विषैले स्तर तक हो सकता है। जैसे सोडियम की अधिकता, क्लोराइड की अधिकता आदि। इसके अलावा एक तत्व की वृद्धि होने से दूसरे आवश्यक तत्वों के अवशोषण पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है। विनिमय योग्य सोडियम प्रतिशतता या बढ़ते पी.एच. मान के फलस्वरूप मृदा में हवा व पानी का आवागमन अवरूद्ध हो जाता है। तथा फसलों की बढ़वार प्रभावित होती है।

लवणीय मृदाओं का सुधार : लवणीय मृदाओं के सुधार के लिए यांत्रिक विधियों को अपनाकर इन मृदाओं के भौतिक गुणों को सुधारा जा सकता है। इस प्रकार की मृदाओं के सुधार के लिए रासायनिक विधियों का प्रयोग नही करते है। लवणीय मृदाओं के सुधार के लिए निम्न यांत्रिक विधियों को अपनाया जाता है।

1. मृदा की सतह को खुरचकर : मृदा की उपरी 15 सेमी. सतह पर सफेद परत के रूप में उपस्थित लवणों को खुरचकर हटाते है।

2. निक्षालन : इस क्रिया द्वारा लवणों को जल में विलेय करके पादप जड़ से नीचे ले जाया जाता है। ताकि पौधो पर लवणों का बुरा प्रभाव न हो सके। यह विधि उन मृदाओं में अपनायी जानी चाहिए जिसमें भूमि जल स्तर नीचा हो । ग्रीष्म ऋतु निक्षालन हेतु अति उत्तम होती है। इस विधि से खेत के छोटे–छोटे टुकड़ों में बांट कर मेंड़ बन्दी कर देते है। जिसमें खेत में पानी पर्याप्त मात्रा में रूक सके।

3. खाई खोदकर : इस विधि से थोड़ी–थोड़ी दूरी पर खाईयाँ खोदते है। खेत के एक किनारे पर पहली खाई खोदते है। जिसकी मिट्टी को खेत से बाहर डालते है। इसके उपरान्त कुछ दूरी पर दूसरी खाई खोदते है। इसकी मिट्टी को प्रथम खाई में इस प्रकार भरते है कि उपरी लवण तथा क्षारयुक्त मिट्टी नीचे तथा नीचे वाली मिट्टी उपर हो जाये।

4. विलेय लवणों को उपरी सतह से बहाना : खेत में पर्याप्त मात्रा में पानी भर दिया जाता है। जिससे उपरी सतह के लवण पानी में घुल जाते है। इसके बाद पानी को खेत से बाहर बहा देने पर लवणों को अधिकांश पानी के साथ बहकर बाहर निकल जाती है। और मृदा की उपरी सतह पर लवणों की मात्रा कम हो जाती है।

5. जल निकास : फसल की आवश्यकता से अधिक पृष्ठीय या भूमिगत फालतू जल को भूमि से बाहर निकाल देना जल निकास कहलाता है। जहां भूमि जल स्तर ऊँचा या भूमि में कुछ गहराई पर कड़ी परत हो वहा पर लवणों को खेत से बाहर निकालने के लिए जल निकास होना अति आवश्यक होता है।

अधोभूमि की कठोर परतों को तोड़ना : जिस भूमि में कम गहराई पर सख्त परतें हो उसे आधुनिक कृषि यंत्रो जैसे डिस्क प्लो व सब सोंयलर की मदद से तोड़कर लवणीय भूमि को प्रसंस्करण कर खेती योग्य बनाया जा सकता है। यह कार्य मई के महीने में करना उत्तम होता है।

तालिका : 2. लवणीय मृदा एवं उगाई जाने वाली फसलें

क्र.सं.	विद्युत चालकता डेसी साइमन्स / मी.	सहिष्णुता	फसल
1.	4 से कम	न्यून	चना, मूंग, उर्द, अलसी, मटर, तिल आदि
2.	4 से 8 तक	मध्यम	ज्वार, मक्का, जई, गेंहूँ, बाजरा, सरसों अरण्डी, आलू, टमाटर आदि।
3.	8 से 12 तक	उच्च	अमरूद, खजूर, चुकन्दर, शलजम एवं पालक आदि।

क्षारीय मृदाओं का सुधार : क्षारीय मृदाओं में प्राकृतिक रूप से अघुलनशील सोडियम कार्बोनेट और बाई कार्बोनेट की अत्यधिक एकाग्रता होती है । इस लवणों को मृदा के विनिमय परिसर में प्रतिस्थापित करने के लिए उन्हें कैल्शियम से बदलने की जरूरत होती है । खनिज, जिप्सम, पाइराइट, प्रेसमड, चीनी मिल के उत्पाद द्वारा गोबर की सड़ी खाद, गंधक अम्ल की तरह कई संसाधनों द्वारा क्षारीय मृदा का सुधार संभव है। दक्षता लागत और आसान उपलब्धता को देखते हुए इन भूमियों को सुधारने के लिए जिप्सम का प्रयोग सर्वश्रेष्ठ पाया जाता है। राजस्थान में इसके विशाल भंडार होने के कारण ओर सुगम है। जिप्सम मिट्टी परिक्षण के आधार पर ही डाले। जिप्सम का बारीक चूर्ण (0.6 सेमी.) एक समान बिखेर कर ऊपर की 5–7 से.मी. भूमि में मिला देना चाहिए। फिर 10 से.मी. गहरी सिंचाई करें। जिन भूमियों में कैल्शियम क्लोराईड लवणों की अधिक मात्रा पाई जाती है वहां पर मृदा के सुधार हेतु पाइराडट का प्रयोग मृदा के पी.एच. मान एवं उसकी सघनता के अनुसार करना चाहिए। भूमि सुधार के आरम्भ मे केवल वही फसलें लगानी चाहिए जो रेह व क्षार के प्रति काफी सहनशील हो व खड़े पानी में भी वृद्धि कर सके। इन हालात के लिए चावल उत्तम है। गर्मी के मौसम में यदि पानी पर्याप्त हो तो अप्रैल के शुरू में हरि खाद के लिए ढ़ैंचा बोना चाहिए। दलहनी फसले 3–4 साल तक नही बोनी चाहिए। सब्जी में पालक और मैथी सहनशील है।

फसल प्रबंधन : उसर एवं लवणीय मृदा में लवण सहिष्णु किस्मों को उगाने से अधिक उपज मिलती है। केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित चावल की किस्मों में सी.एस. आर.–10, सी. एस.आर. 13, 23, 27, 30, 36 और सी.एस.आर. 43 लवण सहनशील है। इसी तरह गेहूँ की किस्मों KRL 1–4, KRL 10, 13 और KRL 19 उसर तथा लवणीय मृदा में खेती के लिए जारी की गयी है। सरसो की CS 52,54,56,58 और CS–60 किस्में तथा चना की करनाल चना–1 किस्म भी लवण सहिष्णु किस्म है।

जैविक सुधार : लवणीय एवं उसर मृदा में लवण सहिष्णु जीवाणु से बीज उपचार कर फसल लगाने से मृदा सुधार के साथ–साथ पौधे की वृद्धि होती है। इन लवण सहिष्णु जीवाणु को मृदा को उपचार हेतू गोबर की खाद में मिलाकर खेत में भी बिखेरा जा सकता है। CSSRI के द्वारा हलो–अजो तथा हलो पी.सी.बी. नामक तरल जीवाणु बायोफार्मूलेशन बनाये जा रहे है जिनके उसर मृदा वाले खेतों में इस्तेमाल से नाइट्रोजन तथा फास्फोरस भी मृदा में कम इस्तेमाल करना पड़ता है। और अधिक उपज के साथ मृदा स्वास्थ्य को भी सुधारता है। इस प्रकार किसान भाई लवणीय एवं क्षारीय मृदाओं का वैज्ञानिक तरीके से अच्छा प्रबन्धन एवं खारे पानी का उपयोग करके फसलों की अधिक उपज ले सकते है।

उधमीयता विकास में विपणन दक्षता

के.सी. मीना एवं लोकेश कुमार मीना
कृषि विज्ञान केन्द्र अन्ता एवं कृषि महाविद्यालय, उम्मेदगंज, कोटा

विपणन एक सतत प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत मार्केटिंग मिक्स (उत्पाद, मूल्य, स्थान, प्रोत्साहन जिन्हें प्रायः 4P कहा जाता है) की योजना बनाई जाती है एवं कार्यान्वयन किया जाता है। यह प्रक्रिया व्यक्तियों और संगठनों के बीच उत्पादों, सेवाओं या विचारों के विनिमय हेतु की जाती है। विपणन को एक रचनात्मक उद्योग के रूप में देखा जाता है, जिसमे शामिल विज्ञापन, वितरण और बिक्री, इसका सम्बन्ध ग्राहकों की भावी आवश्यकताओं और आकांक्षाओं का पूर्व विचार करने से भी है, जो प्रायः बाजार शोध के माध्यम से पता लगाई जाती हैं। मूलतः विपणन किसी संगठन को बनाने या निर्देशित करने की प्रक्रिया है, ताकि लोगों को सफलतापूर्वक वह उत्पाद या सेवा बेची जा सके जिसकी न केवल उन्हें जरूरत है बल्कि वे उसे खरीदने के इच्छुक भी हैं। इसलिए विपणन की व्यवस्था इस काबिल होना चाहिए कि वह उपभोक्ताओं हेतु एक ''प्रस्ताव'' या लाभों का सेट बना सके, ताकि उत्पादों या सेवाओं के माध्यम से ग्राहक को उसके पैसे का मूल्य अदा किया जा सके।

उत्पादन मात्र से उद्यमी का लक्ष्य पूर्ण नहीं होता, उत्पादन के पश्चात उस उत्पाद को निर्धारित समय में बाजार में प्रस्तुत करना भी आवश्यक है। जिसकी योजना उद्यमी पूर्व में ही तैयार करता है जिससे की वह उत्पाद समय पर बाजार में पहुंच जाय एंव समय पर उपभोक्ताओं द्वारा उसका उपभोग किया जा सके। तथा उद्यमी को हानि का सामना न करना पड़े। उक्त समस्त कार्य को समय सीमा में पूर्ण करने हेतु विपणन के मूल तत्वों को समझना आवश्यक है जो कि निम्नानुसार है।

विपणन का 4 P सिद्धांत

विपणन योजना की सफलता के लिए 4Ps का मिश्रण उपभोक्ताओं या लक्षित बाजार की मांगों व जरूरतों में प्रतिबिंबित होना चाहिए। विपणक, औपचारिक और अनौपचारिक दोनों तरह के विपणन अनुसंधान से प्राप्त जानकारी पर निर्भर करते हैं और यह तय करते हैं कि ग्राहक क्या चाहता है और उसके लिए कितना भुगतान करने का इच्छुक है। विपणक आशा करते हैं की इस प्रक्रिया से उन्हें एक सतत् प्रतियोगी लाभ हासिल होगा. विपणन प्रबंधन इस प्रक्रिया हेतु व्यावहारिक अनुप्रयोग है।

विपणन का 4Ps का सिद्धांत

प्रमोशन (प्रचार प्रसार) : प्रमोशन अर्थात प्रचार प्रचार या विज्ञापन। उत्पाद की बिक्री में विज्ञापन का महत्वपर्ण योगदान होता है क्योंकि विज्ञापन जितना अधिक प्रभावशाली होगा ग्राहक उतना ही उस उत्पाद के प्रति आकर्षित होगा और उसे खरीदेगा। यही कारण है कि बड़े बड़े व्यवसायी अपने उत्पाद का विज्ञापन मशहूर हस्तियों, फिल्मी कलाकारों, खिलाड़ियों आदि से करवाते हैं जिसे हम टी.वी. में या अपने आस–पास के एरिया में लगे होर्डिंग्स पर देखते हैं तो उसेखरीदने की इच्छा उत्पन्न होती है। यही प्रभाव है विज्ञापन का। इसलिए विज्ञापन का चयन करते समय निम्न बातों का ज्ञान होना आवश्यक है–

- **विज्ञापन का प्रकार :** जैसे पोस्टर लगवाकर, पम्प्लेट्स के जरिए, रेडियो टेलीविजन आदि पर।
- **विज्ञापन की लागत :** विज्ञापन की लागत कम से कम रखने की कोशिश की जाय जिससे की उत्पाद के मल्यू में अधिक वृद्धि न हो क्योंकि विज्ञापन हतु किये गये व्यय भी अप्रत्यक्ष व्ययों के रूप में उत्पाद की लागत में सम्मलित किये जाते हैं।
- **विज्ञापन का क्षेत्र :** केवल स्थानीय तौर पर अपने उत्पाद का विज्ञापन करेगें या बाह्य क्षेत्रों में भी।

प्रोडक्ट (उत्पाद) : उत्पाद को बाजार में उचित रूप में प्रस्तुत करना व्यवसाय का पहला एवंमहत्वपर्ण कदम है। इसलिए उत्पाद संबंधी विचारों कोकई माध्यमों/स्त्रोतों से प्राप्त किया जा सकता है। इसका सबसे सरल तरीका बाजार सर्वेक्षण है जिससे उत्पाद के फायदे एवं नुकसान के बारे में शोध कर उत्पाद में आवश्यकतानुसार परिवर्तन एवं उसकी गुणवत्ता मे बढ़ोत्तरी की जा सकती है। इसके लिये निम्न जानकारियां होना आवश्यक है।

- उत्पाद की गुणवत्ता
- उत्पाद का रंग।
- उत्पाद का आकार।
- उत्पाद की पकैजिंग।
- ग्राहकों की मांग।
- उत्पाद मे आवश्यक परिवर्तन।

विपणन का उत्पाद संबन्धी पहलू वास्तविक माल या सेवाओं के ब्यौरे के बारे में की यह कैसे अन्तिम–उपयोगकर्ता की जरूरतों एवं मांगों से सम्बंधित है। एक उत्पाद के दायरे में कुछ सहयोगी तत्व भी आते हैं जैसे वारंटी, गारंटी और सपोर्ट।

प्राइज (मूल्य) : उत्पाद का मल्यू निर्धारण करना उतना आसान नहीं जितना हम सोचते हैं क्योंकि बाजार में समान वस्तु के अनेक प्रतिस्पर्धी होते हैं ऐसी स्थिति में उत्पाद निर्माण में होने वाले व्ययों को जाड़ेते हुए एक निश्चित मार्जिन रखकर उचित मूल्य रखा जाना आवश्यक होता है। जिससे उपभोक्ता उचित मूल्य में उच्च गुणवत्ता वाली वस्तु खरीदने की आरे आकर्षित हो। इसके लिये उद्यमी को निम्न जानकारियां होना आवश्यक है

- उत्पाद की अनुमानित लागत
- उत्पाद हेतु लक्षित वर्ग
- उत्पाद हेतु बाजार में उपभोक्ता
- उत्पाद हेतु प्रतिस्पर्धियों का मूल्य
- स्वयं द्वारा निर्धारित मूल्य
- इस मूल्य के चयन का कारण

- आवश्यक हो तो कितनी छूट दी जा सकेगी
- छूट देने का कारण।
- किन क्रेता/ विक्रेताओं को उधार माल दिया जा सकेगा।
- उधार देने का कारण।

मूल्य निर्धारण का आशय किसी उत्पाद का एक मूल्य निर्धारित करने से है, जिसमें छूट भी शामिल होती है। जरूरी नही की मूल्य, मुद्राओं में ही हो – यह उस उत्पाद या सेवा के बदले में दी जा सकने वाली कोई चीज हो सकती है जैसे समय, ऊर्जा, मनोविज्ञान या ध्यान।

प्लेस (स्थान) : स्थान से अभिप्राय बाजार से है जहां उद्यमी अपने उत्पाद को विक्रय हेतु प्रस्तुत करेगा। उद्यमी के लिये यह आवश्यक है कि वह व्यवसाय शुरू करने से पहले अपने उत्पाद हेतु ऐसे बाजार का चयन करे जहां उसके उत्पाद हेतु पर्याप्त वितरणकर्ता उपलब्ध हो। जिसके लिए निम्न जानकारियों का होना आवश्यक है।

- उद्यम हेतु स्थान।
- उस स्थान कोचयन करने का कारण।
- उपलब्ध ससांधन।
- वितरण कर्ताओं की जानकारी जैसे – ग्राहक, थोक विक्रेता, फुटकर विक्रेता या अन्य।
- उपभोक्ताओं की संख्या।

नियोजन या वितरण से तात्पर्य है की उत्पाद किस तरह उपभोक्ता तक पहुंचेगा,किस चेनल के जरिये एक उत्पाद या सेवाओं को बेचा जाएगा (जैसे ऑनलाइन बनाम खुदरा), कौन से भौगोलिक क्षैत्र में, किस खंड को (युवा, व्यस्क, परिवार, व्यवसायी लोग) आदि इसके अलावा यह भी की जिस वातावरण में उत्पाद बेचा जाएगा, वह कैसे बिक्री को प्रभावित कर सकता है। ये चार तत्व विपणन मिश्रण, के तौर पर जाने जाते हैं जिनका उपयोग एक विक्रेता विपणन योजना बनाने के लिए करता है। कम कीमत के उपभोक्ता उत्पाद के विपणन में चार P का मॉडल सबसे अधिक काम आता है। औद्योगिक उत्पादों, सेवाओं, उच्च मूल्य के उपभोक्ता उत्पादों के मामले में इस मॉडल में समायोजन करना पड़ता है।

विपणन के दो स्तर

1. रणनीतिक विपणन : यह निर्धारित करने का प्रयास की एक संगठन बाजार में अपने प्रतिद्वंदियों से कैसे मुकाबला करे। विशेष रूप से, इसका उद्देश्य अपने प्रतियोगियों के सापेक्ष एक लाभदायक बढ़त लेना है।

2. परिचालन संबन्धी विपणन : ग्राहकों को आकर्षित करना व उन्हें बनाये रखना है और उनके लिए अधिक से अधिक उपयोगी होना है। साथ ही तत्पर सेवाओं द्वारा ग्राहक को संतुष्ट करना और उसकी अपेक्षाओं पर खरा उतरना है।

बाजार सर्वेक्षण – आवश्यकता एवं महत्व : बाजार सर्वेक्षण व्यवसाय के विभिन्न कार्यो में से ही एक है। समय समय पर बाजार सर्वेक्षण उद्यमी को बाजार की वास्तविक स्थिति से अवगत कराते हैं। अर्थात् बाजार मे समान उत्पाद बनाने वाले कितने और उत्पादक हैं वे कितना माल बनाते हैं, बाजार में किस तरह की वस्तुओं की मांग है, उनकी खपत, पूर्ति की स्थिति, प्रतिस्पर्धात्मक दरों की जानकारी आदि। इसके साथ साथ बाजार सर्वेक्षण करने के अन्य लाभ भी हैं जिसे निम्नानुसार देखा जा सकता है

- बाजार सर्वेक्षण में उद्यमी विभिन्न सभांवित क्रेताओं/ विक्रेताओं से मिलता है तो इससे उनके व्यापारिक संबधों का निर्माण होता है। भविष्य में यही विक्रेता उद्यमी के साझेदार होते हैं जो उत्पाद का विक्रय करते हैं।
- बाजार सर्वेक्षण से उद्यमी को उत्पाद की वास्तविक आवश्यकता एवं रूप का पता चलता है जिससे वह यदि चाहे तो स्वयं द्वारा चयनित उत्पाद को परिवर्तित भी कर सकता है। उदाहरण के लिये यदि कोई उद्यमी प्लास्टिक बैग बनाने की इकाई डालना चाहता है। बाजार सर्वेक्षण करने पर उसे पता चलता है कि प्लास्टिक बैग की बजाए यदि पेपर बैग बनाये जाये तो उसकी ज्यादा मांग होगी ऐसी स्थिति में वह अपने उत्पाद में परिवर्तन करता है।
- बाजार सर्वेक्षण से उद्यमी को यह आभास होता है कि जो उत्पाद वह बनाने जा रहा है उसकी बाजार में कितनी मांग है जिससे उसके आत्मविश्वास एंव उत्साह में बढोत्तरी होती है।
- बाजार सर्वेक्षण में उद्यमी को विभिन्न व्यक्तियों से संस्मरण सुनने को मिलते हैं जिससे की उद्यमी उनके द्वारा की गयी गलतियों से सीख लेता है एवं उसका मागर्दर्शन होता है।
- बाजार सर्वेक्षण के जरिए एकत्रित आकंड़ों को वित्तीय संस्थाओं के समक्ष प्रस्तुत कर उद्यमी उन्हें प्रभावित कर सकता है।
- बाजार सर्वेक्षण से उद्यमी को उसके द्वारा चयनित उत्पाद के उपभोक्ताओं की संख्या का अनुमान होता है।
- एक उद्यमी बाजार सर्वेक्षण के माध्यम से अपने लक्षित वर्ग का निर्धारण करता है कि वह किस आयु वर्ग के उपभोक्ताओं को लक्षित कर रहा है।
- समय समय पर बाजार सर्वेक्षण उद्यमी को उसके उत्पाद की गुणवत्ता में वृद्धि/सुधार हतु प्रेरित करते हैं।

उपभोक्ता व्यवहार/प्रवृत्ति : उपभोक्ता व्यवहार से आशय उपभोक्ताओं के विचारों, मनोवृत्ति, प्रेरणा, उद्देश्यों, निर्णय व क्रय प्रक्रिया आदि के अध्ययन से है जिससे प्रभावित होकर उपभोक्ता किसी वस्तु विशेष को खरीदने के लिए विवश होता है। अर्थात् उपभोक्ता द्वारा वस्तु को खरीदने हेतु अपनाई जा रही प्रक्रिया को ही उपभोक्ता व्यवहार कहा जाता है। उदाहरण के लिये यदि हम साबुन की ही बात करें तो कुछ ग्राहक साबुन उसकी खुशबू के आधार पर खरीदते हैं। कुछ उसकी पेकैजिंग से आकर्षित होते हैं एवं कुछ ग्राहक मल्यू की ओर ध्यान देते हैं। इसलिए उद्यमी को उपभोक्ता व्यवहार का अध्ययन करना आवश्यक होता है जिससे वह इन समस्त गुणों का उपयोग कर अपने उत्पाद का निर्माण उच्च गुणवत्ता के साथ आकर्षक रूप में कर सके।

वर्ग विभाजन एवं लक्ष्य निर्धारण : वर्ग विभाजन भी व्यवसाय हेतु आवश्यक कार्यो में से एक है। वर्ग विभाजन में उद्यमी द्वारा यह निर्धारित किया जाता है कि वह जो उत्पाद बना रहा है वह किस आयु वर्ग हेतु है अर्थात् बच्चों के लिये है, युवाओं हेतु है, बुजुर्ग व्यक्तियों के लिये हैं अथवा किसी कार्य विशेष पर आधारित है जैसे– विद्यार्थियों हेतु। ये लागे किस वर्ग के हैं उच्च, मध्यम, निम्न वर्गीय अथवा गरीबी रेखा से नीचे वाले। क्योकि ये वर्ग विभाजन ही उद्यमी को अपने उत्पाद एंव उसके मूल्य निधार्रण में सहायता करते हैं। उदाहरण के लिए उद्यमी बच्चों हेतु उत्पाद का निर्माण करना चाहता है तो उसे यह निर्धारित करना होगा कि वह किस उम्र के बच्चों को लक्षित कर रहा है यदि 5 वर्ष से कम उम्र वाले बच्चों को लक्षित कर रहा है तो वह खिलौने, कपड़े आदि का निर्माण कर सकता है, 5वर्ष से अधिक उम्र के बच्चों हेतु आर्कषक किताबों स्कूल की सामग्री आदि का निर्माण कर सकता है। लक्षित वर्ग जिस श्रेणी का होगा अर्थात उच्च वर्ग, मध्यम वर्ग, निम्न वर्ग या गरीबी रेखा से नीचे उसके अनुसार ही

उद्यमी को अपने उत्पाद का मूल्य निर्धारित करना होगा।

गुणवत्ता : गुणवत्ता किसी भी उत्पाद का एक अभिन्न अंग है क्योंकि आपका उत्पाद चाहे कितना ही आकर्षित हो या कितनी ही कम कीमत का क्यों न हो यदि वह उच्च गुणवत्ता का नहीं है तो उपभोक्ता एक बार के पश्चात उसे पुनः खरीदना पसंद नहीं करेगें इसलिए उत्पाद की गुणवत्ता पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है एवं समय समय पर उपभोक्ताओं की मांग के आधार पर उसमें सुधार भी करते रहना चाहिए।

ब्रांड्स : ब्रांड एक नाम, शब्द, डिजाइन, प्रतीक या कोई अन्य विशेषता है जो किसी उत्पाद या सेवा को प्रतिस्पर्धी के प्रस्ताव से अलग करता है। एक ब्रांड किसी संगठन, उत्पाद या सेवा के प्रति उपभोक्ता के अनुभव का प्रतिनिधित्व करता है। ब्रांड को एक पहचाने जाने योग्य सत्ता के रूप में भी परिभाषित किया जाता है जो एक विशिष्ट मूल्य का वादा करती हैं।

विपणन के दो प्रमुख घटक हैं : नए ग्राहकों को शामिल करना जिसे हम अधिग्रहण कहते है तथा मौजूदा ग्राहकों को बनाए एवं उनके साथ संबंधों का विस्तार करना जिसे हम आधार प्रबंधन कहते है। एक बार जब विक्रेता आने वाले खरीदार को अपना ग्राहक बना लेता है तो आधार प्रबंधन शुरू हो जाता है। आधार प्रबंधन के तहत जो प्रक्रिया आरम्भ होती है उसमें विक्रेता अपने ग्राहक के साथ रिश्ते विकसित करता है, संबंधों को पोषण देता है, दिए जा रहे फायदों में ईजाफा करता है और अपने उत्पाद/सेवा को निरंतर बेहतर बनाता है ताकि उसका व्यापार प्रतिस्पर्धियों से सुरक्षित रहे।

विपणन के चैनल

- **उत्पादक से उपभोक्ता :** इसे हम प्रत्यक्ष ओर डाइरैक्ट विपणन भी कहते है। इस चैनल में उत्पादक को उपभोक्ता द्वारा चुकाया गया मूल्य का 100 प्रतिशत मिलता हे क्योकि इसमे बीचोलिए जैसे की एजेंट, थोक व्यापारी, खुदरा व्यापारी नहीं होते है।
- **उत्पादक से एजेंट को और उससे ग्राहक को :** इस चैनल के अंतर्गत उत्पादक और ग्राहक के बीच केवल एक बिछोलिया जो की एजेंट होता है। इसलिए इस चैनल में उत्पादक को उपभोक्ता द्वारा चुकाया गया मूल्य का हिस्सा प्रथम चैनल से कम मिलता हे।
- **उत्पादक से थोक व्यापारी को, उससे खुदरा व्यापारी को और उससे ग्राहक को :** यह विपणन का पारम्परिक तरीका है जिसके अंतर्गत थोक व्यापारी और खुदरा व्यापारी बीचोलिए की तरह काम करते है और यह लोग उपभोक्ता द्वारा चुकाया गयेउत्पाद के मूल्य से अपना मार्जिन निकालते है। इसलिए इस चैनल में उत्पादक को उपभोक्ता द्वारा चुकाया गया मूल्य का बहुत कम मिल पाता है। इसमें पहले थोक व्यापारी उत्पादक से उत्पाद खरीदता है फिर थोक व्यापारी से यह उत्पाद खुदरा व्यापारी खरीदता और खुदरा व्यापारी इस उत्पादको अंत मे ग्राहक को बेचता है।
- **उत्पादक से एजेंट को, उससे खुदरा व्यापारी और फिर ग्राहक :** यह विपणन का वर्तमान तरीका है जिसके अंतर्गत एजेंट और खुदरा व्यापारी बीचोलिए की तरह काम करते है और यह लोग उपभोक्ता द्वारा चुकाया गया मूल्य से अपना मार्जिन निकालते है। इसलिए इस चैनल मे उपभोक्ता को उत्पाद ज्यादा मूल्य पर पर मिलता है और साथ ही साथ उपभोक्ता के मूल्य में उत्पादक का हिस्सा भी घट जाता है।
- **उत्पादक से एजेंट को, उससे थोक व्यापारी को, उससे खुदरा व्यापारी और फिर ग्राहक को :** इस चैनल के अंतर्गत एजेंट, थोक और खुदरा व्यापारी बीचोलिए होते है और यह लोग उपभोक्ता द्वारा चुकाया गया मूल्य से अपना मार्जिन निकालते है। इसलिए इस चैनल में उपभोक्ता को उत्पाद ज्यादा मूल्य पर मिलता है और साथ ही साथ उपभोक्ता के मूल्य में उत्पादक का हिस्सा भी घट जाता है। क्योकि इस चैनल में पहले एजेंट उत्पादक से उत्पाद खरीदता है फिर थोक व्यापारी इस उत्पादको एजेंट से खरीदता है फिर यह उत्पाद खुदरा व्यापारी खरीदता और खुदरा व्यापारी इस उत्पाद को अंत में ग्राहक को बेचता है। इसलिए यहां इस उत्पाद के लिए ग्राहक को ज्यादा कीमत देनी पड़ती है।

उत्पाद डिजाइन का क्रम

- उत्पाद विचारों की रचना एवं विकास।
- उत्पाद विचारों के द्वारा चुनाव एवं छानना।
- उत्पाद कांसेप्ट की रचना और परीक्षण।
- उत्पाद कांसेप्ट के बजाय बिजनस का विश्लेषण करना।
- भावनात्मक उत्पाद की रचना और परीक्षण।

अच्छी पैकेजिंग की जरूरतें

- कार्यात्मक – सामग्री की प्रभावी ढंग से संभाल व सुरक्षा
- वितरण, बिक्री, खोलने, उपयोग, पुनः प्रयोग आदि के दौरान सुविधा प्रदान करे
- पर्यावरण की दृष्टि से जिम्मेदार हो
- किफायती हो.
- लक्षित बाजार हेतु ठीक से डिजाईन किया गया हो
- नजरों पर छा जाने वाला हो (खासकर रिटेल/कंज्यूमर सेल में)
- उत्पाद तथा पैकेज की विशेषताओं को सूचित और उनके इस्तेमाल की सिफारिश करें
- खुदरा विक्रेताओं की आवश्यकताओं के मुताबिक हो
- उद्यम की छवि को बढ़ावा दे
- प्रतियोगियों के उत्पादों से अलग नजर आए
- उत्पाद व पैकेजिंग की कानूनी शर्तो का पालन करे
- सेवा और उत्पाद आपूर्ति में अन्तर बिन्दु
- आदर्श उत्पाद, आदर्श रंग के लिए.

ट्रेडमार्क का महत्व

- एक कंपनी के माल को दूसरी कंपनी के माल से अलग करता है
- गुणवत्ता के लिए विज्ञापन का काम करता है
- उपभोक्ताओं और निर्माताओं दोनों को सुरक्षित रखता है
- प्रदर्शन और विज्ञापन अभियानों में प्रयुक्त होती है
- नए उत्पादों को बाजार में उतारने के लिए काम आती है।

राजस्थान के झालावाड़ जिले में सागौन की खेती/रोपण दोगुनी आय का स्त्रोत

रवि यादव एवं एस.बी.एस. पांडेय
उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालरापाटन, झालावाड़ (राजस्थान)

भारत में कृषि प्रधानता होने के बाद भी किसानों की आय दोगुनी होने के स्थान पर स्थिर या कम हो रही है, जिसके कारण किसान को मुनाफा कमाना कठिन साबित हो रहा है एवं साथ ही बढ़ते प्रदूषण के कारण जलवायु परिर्वतन के दुष्प्रभाव से फसलों की गुणवत्ता कम होती जा रही है। इन सभी समस्याओं के समाधान हेतु कृषि वानिकी एक अच्छा और बेहतर विकल्प है। जिसमें फसलो के साथ–साथ बहुवर्षीय वृक्षो रोपण कर अधिक लाभ अर्जित किया जा सकता है। जिसके माध्यम से किसान कि आय दोगुनी और जलवायु परिर्वतन से होने वाले दुष्प्रभाव को कम किया जा सकता है। वर्तमान स्थिति में कृषि वानिकी को बढ़ावा देने के लिए वर्ष 2014 में राष्ट्रीय कृषि वानिकी नीति को लागू किया गया। इस निति के अर्न्तगत देश के प्रमुख 25 वृक्षो के रोपण को बढ़ावा दिया गया। इन्हीं वृक्षों में सागौन एकमात्र सबसे मूल्यवान और उच्च गुणवत्ता वाली लकड़ी का प्रमुख स्त्रोत है। वर्तमान स्थिति के अनुसार सागौन का सबसे ज्यादा क्षेत्र भारत के जंगलो व कृषि क्षेत्रों में होने के बावजूद इसकी लकड़ी को आयात किया जाता है। इसी कारण यदि सागौन की रोपण व खेती वैज्ञानिक ढंग से की जाए तो आयात को कम करने के साथ–साथ किसानों की आय को दोगुना किया जा सकता है।

सागौन की खेती/रोपण हेतु मुख्य बिन्दु

परिचय : सागौन टीक नाम से सर्व परिचित है। जिसका वैज्ञानिक नाम टेक्टोना ग्राँडिस एल.एम. *(Tectona grardis L.F.)* है। यह एक लम्बा पर्णपाती उष्ण कटिबंधीय वृक्ष है। जिसकी लम्बाई 30–40 मी. तथा गोलाई (काफलर व्यास) 1–2 मी. की होती है। भारत में सागौन कि वैज्ञानिकी खेती पहली बार 1842 में निलंबूर (केरल) में की गयी, जिसका श्रैय कर्नल कोलोनी और छोटू मेनन को जाता है। इसी के कारण, निलंबूर सागौन को वर्ष 2017 में बेहतरीन लकड़ी के लिए भौगोलिक पहचान दी गयी। आज कि स्थिति मे सागौन विश्व के 60 से अधिक देशो में लगभग 29.04 मिलियन क्षेत्रफल पर उगाया जाता है। भारत में यह व्यवसायिक तौर पर 25 लाख हैक्टेयर में उगाया जाता है।

उपयोग : सागौन की लकड़ी अपने उच्च गुणो के कारण विश्व के श्रेष्ठ लकड़ियों में स्थान प्राप्त है, इसके उच्च कोटी के गुण जैसे कि मजबती, टिकाऊपन, लकड़ी के आकार में स्थिरता और लकड़ी से फर्नीचर बनाने में सरलता, लकड़ी पर लौहे का उपयोग करने जंग न लगने के गुणो के कारण इसे 'किंग ऑफ वुड' कहा जाता है। सागौन की लकड़ी का प्रमुख उपयोग फर्मीचर, प्लाई, जहांज, संगीत सामान व घर निर्माण में किया जाता है। और काँट–छाँट लकड़ी का उपयोग ईधन व बीजो का तेल साबुन बानने में उपयोग करते है।

जलवायु : यह हिमालय क्षेत्र को छोड़कर देश की हर तरह की जलवायु में उगाया जा सकता है। यह 10-45^0 तापमान तथा 600-2500 मि.मी.वर्षा वाले क्षेत्रो में अच्छी बढ़वार होती है। कम वर्षा क्षेत्रों जैसे अधिकांश राजस्थान का क्षेत्र में भी इसकी सफलतापूर्वक खेती की जा सकती है। कम वर्षा और अधिक तापमान में धीमी वृद्धि होती है। पर उच्च गुणवत्ता की लकड़ी का उत्पादन होता है।

मिट्टी : सागौन की सबसे अच्छी पैदावार के लिए जलोद मिट्टी जिसका पी. एच. 6.7 से 7.5 होना चाहिए, इसके साथ काली, लाल, पथरीली मृदा में भी अच्छी वृद्धि होती है। परन्तु जलभराव वाली मृदा में यह गल जाता है।

पौध तैयार करना : सागौन के पौधे उगाने हेतु हल्की दाल युक्त, जल निकासी और अच्छे कार्बनिक पदार्थ के साथ बलुई मिट्टी वाला क्षेत्र होना चाहिए। सड़ी हुई गोबर की खाद व कृमि खाद व कुछ मात्रा में रेत का मिश्रण बनाकर प्लास्टिक की थैलियों में 6 इंच ऊपर से जगह छोड़कर पूरा भर दिया जाता है। उसके बाद बीज को 4–6 इंच गहराई मृदा में रोप/गाड़ दिया जाता है। इसके अलावा सागौन की पौध स्टम्प व ऊतक सर्वधन विधि से भी उगाया जाता है।

सागौन की प्रजातियाँ : मुख्य रूप से निम्नलिखित सागौन की प्रजापतियाँ है।

(1) निलंबूर (2) अल्लापली
(3) सिवनी बस्तर (4) गेदावरी वैली

प्रर्वधन तकनीक

बीजो के माध्यम से : सागौन के फल कठोर होते है। तथा इसके बीजो में अकुरंण मे वृद्धि के लिए बीजो को गर्म पानी, वैकल्पिक गीला और कई दिनों (10–15 दिन) अकुरंण प्राप्त करने के लिए अपक्षय और एसिड (H_2SO_4) से उपचारित किया जाता है। इसके अलवा सागौन के बीजो को गोबर के घोल में 5–6 दिन तक भिगोया जाता है। इन बीच उपचार प्रद्धतियों से अकुरंण ज्यादा प्राप्त किया जा सकता है। जिससे अकुरंण 60–70 प्रतिशत तक पाया जाता है। बुवाई में 14 मि.मी. व्यास से अधिक बड़े बीजो का उपयोग बेहतर अकुरंण देता है। बीजो को प्लास्टिक थैली अथवा क्यारी में (10 मी. लम्बी, 1 मी. चौड़ी और 0.5 मी. ऊँची) बोया जाता है। सागौन में लगभग 40 दिनों के बाद अकुरंण शुरू होता है।

जिससे 50–60 प्रतिशत अकुरंण प्राप्त होता है। तथा आजकल 2.2 ट्रेनर मे बीजो को बोया जाता है। जिससे रूट क्वाइलिंग (जड़ो का गुच्छा) समस्या से निदान पाया जाता है। इसी विधि में 6–7 माह के अंदर उच्च गुणवत्ता वाले रोपड़ी पौधो को तैयार करके वृक्षारोपण क्षेत्र में रोपित किया जाता है।

स्टम्प द्वारा : 2.2 शूट या स्टम्प मुख्य रूप से सागौन के बागानो में रोपण सामग्री के रूप में उपयोग किया जाता है। एक साल पुराना पौधा नर्सरी बड़े से उखाड़कर तने (शूट) का 2.5 से.मी. पर हिस्सा और 20–30 से.मी. जड़ का भाग लेकर स्टम्प बनाया जाता है। स्टम्प के कारण सागौन की तेजी से और लम्बवत वृद्धि होने की वजह से इस तकनीकी को सर्वश्रेष्ठ माना गया है।

पौध रोपण तकनीकी : पौधे का रोपण करने के लिए भूमि को अच्छी तरह जोतना चाहिए और 45 से.मी. x 45 से.मी. x45 से.मी. आकार के गड़ढ़ो को गर्मी के जून के मध्य में तैयार करना चाहिए। सघन पद्धति/वृक्षारोपण में सागौन के पौधे को 2 मी. x 2 मी. या 3मी. x 3 मी. पर लगा सकते है। जबकि कृषि वानिकी पद्धति में 4×2 मी., 6× 2 मी. या 5×4 मी., 5×5 मी., 5×6 मी. पंक्ति से पक्ति और पौधे से पौधे की दूरी रखनी चाहिए। वृक्षारोपण से पहले गढढ़ो में कृमि खाद, रेत व गोबर की सड़ी खाद प्रथम वर्ष 1–2 किग्रा/गड़ढ़ा और दुसरे वर्ष 3–4 किग्रा/गड़ढ़ा में 2 : 1 : 2 के क्रम में डालनी चाहिए। अम्लीय मिट्टी होने पर बुझा चूना 150–250 ग्राम/पौधा उपयोग करे जिससे पी.एच.में सुधार होता है।

सागौन की देखभाल : सागौन वृक्षारोपण क्षेत्र में सामान्यत जूलाई –अगस्त, अक्टूम्बर–नवम्बर और जनवरी–फरवरी माह में खरपतवार को निकालना चाहिए और थालो का निमार्ण करना चाहिए। जब पौधे की लम्बाई 3–4 मीटर हो जाये तो शाखाओ को कॉट–छॉट (प्रोनिंग) प्रथम बार करनी चाहिए, और पुनः यह कार्य 6–7 मीटर पौधो की लम्बाई होने पर हो जानी चाहिए। जिससे उच्च गुणवत्ता की ईमारती लकड़ी प्राप्त की जाये। जिससे पौधे के तने गोलाई (कॉलर व्यास) की वृद्धि की जा सके। यह क्रिया कृषि–वानिकी प्रद्धति में बहुत आवश्यक होती है।

पौध संरक्षण : सफेद सुड़ी (व्हाइट ग्रब) नर्सरी में जड़ो को अपना भोजन बनाते है। और इसके प्रबंधन के लिए क्लोरो पाईरीफॉस (20 ई.सी.) 2 मिली./लीटर पीनी का उपयोग करे। संवहनी (मुरझाने का रोग) नर्सरी और चूना वृक्षा रोपण में पाया जाता है। इस रोग के निवारण के लिए उचित

Teak nursery view

Nursery teak showing by stumps

जल निकासी करे। नर्सरी और युवा वृक्षारोपण में पत्ति धब्बा रोग (फोमोपसिस स्पसीज और क्लेक्टोरिकम ग्लोरपोरियोड) को मेन्कोजेब 0.05 प्रतिशत एवं इमक्टाजिन बेनजाइंट 0.05 प्रतिशत का प्रयोग द्वारा प्रबंधन किया जा सकता है। युवा पौधो में गुलाबी रोग के लिए बोरडैक्स का मिश्रण का प्रयोग किया जाता है।

पर्णनाशी कीट (हिब्लिया पुरिया) और ककांल कीट से सागौन का उत्पाद 44 प्रतिशत तक कम होता है। पर्णनाशी कीट के लिए प्रकाश जाल तथा नीम तेल 5 प्रतिशत छिड़काव करना चाहिए इसके अलावा पर्णककाल कीट का क्युनालफॉस का 2 मिली/लीटर का छिड़काव करना चाहिए।

उपयुक्त कृषि वानिकी प्रद्धति : सागौन किसानो के लिए अच्छी वृक्षारोपण प्रजातियो में से एक है। भारत में विविध अनुसंधान संस्थानो में विभिन्न कृषि वानिकी पद्धतियाँ विकसित की गइ है। जैसे :– कृषि –वन प्रद्धति (सागौन के साथ में फसल मक्का, कपास, हल्दी, टमाटर और मिर्ची), कृषि–वन–फलवृक्ष प्रद्धति (सागौन नीबू/अमरूद के साथ में कृषि फसलों) और पेड़–फल वृक्ष प्रद्धति में (सागौन –अमरूद, सीताफल) सिचित भूमि के लिए वन–चारा प्रद्धतियाँ विकसित की गई है। जिसमें सागौन के साथ नेपियर और पामारोजा घास के घटक के रूप में लगाया जाता है।

सारांश : राजस्थान के झालावाड़ जिले में सागौन के युवा वृक्षारोपण में अध्ययन के दौरान वर्ष 2019 से 2020 तक यह देखा गया कि यदि सागौन के युवा वृक्षारोपण मे उचित दूरी, सिंचाई व जैविक खाद, प्रबंधन पर ध्यान दिया जाए तो एक वर्ष सामान्य कि तुलना में 1 मीटर अधिक पौधों की वृद्धि प्राप्त कि जा सकती है। और इस अध्ययन के अनुसार से सागौन का वृक्ष कटाई चक्रण 25 वर्ष 20–22 वर्ष तक किया जा सकता है। और प्रबंधन के अन्तर्गत सागौन के युवा पौधे के जैवभाव वन क्षेत्र के युवा सागौन से अधिक है। और उचित गुणवत्ता प्राप्त की जा सकती है। अनुसंधान क्षेत्र, झालावाड़ में 360 युवा वृक्षारोपण और उपयुक्त प्रबंधन करके अच्छी बढ़वार प्रथम वर्ष में प्राप्त की गई। आमतौर पर झालावाड़ जैसी जलवायु में सागौन की वृद्धि बहुत धीमी है। आज कि स्थिति में यदि किसान के पास सागौन का 20–25 वर्ष आयु का पेड़ है। तो प्रति पेड़ सामान्य रूप से 12–15 घनफुट की लकड़ी प्राप्त की जा सकती है। जिसकी बाजार में कीमत 25,000–30,000 हो सकती है। उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, झालावाड़ के प्रक्षैत्र में सागौन के युवा वृक्षारोपण में कृषि–वानिकी उद्देश्य से रोपण में वृक्षों की प्रथम वर्ष में औसत ऊँचाई 120 से.मी. –150 से.मी. व तने की गोलाई 15–20 मि.मी. और प्रति पौधा सागौन की आर्थिक लागत 130–160 रूपये प्रथम वर्ष पाई गई।

औषधीय पौधों की खेती : किसानो की आमदनी बढ़ाने का एक तरीका

चन्द्र प्रकाश मीना, रमेशी मीना एवं के.सी. मीना
कृषि विज्ञान केन्द्र पोकरण, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय करौली एवं कृषि विज्ञान केन्द्र, अंता–बारां

किसान अपने परिवार का अच्छी तरह से पालन पोषण करने के लिए दिन रात कड़ी मेहनत करता है। ताकि ज्यादा पैसा और मुनाफा ले सके। इसलिए किसान को हर नई कृषि तकनीक और खेती को अपनाना पड़ेगा जिससे उसकी आय बढ़ सके। कम खर्च में अधिक मुनाफा कमाने के लिए भारत में कुछ वर्षो से औषधीय फसलो की तरफ किसानों का रुझान बढ़ा है। और इस तरह की खेती कर कई सारे किसान माला माल भी हुए है। और इन औषधीय पोधों की खेती के कारण बेकार पड़ी बंजर और पहाड़ी इलाकों में भी खेती करना सम्भव हो पाया है। इस लेख में कुछ ऐसे ही औषधियों पोधों के बारे में जानकारी दी जा रही है जिनकी खेती से किसान अच्छी आमदनी कमा कर अपनी आय बढ़ा सकते हैं।

एलोवेरा की खेती : ग्वारपाठा, घृतकुमारी या एलोवेरा जिसका वानस्पतिक नाम एलोवेरा बारबन्डसिस हैं तथा लिलिऐसी परिवार का सदस्य है। इसकी उत्पत्ति स्थान उत्तरी अफ्रीका माना जाता है। एलोवेरा को विभिन्न भाषाओं में अलग–अलग नाम से पुकारा जाता है, हिन्दी में ग्वारपाठा, घृतकुमारी, घीकुंवार, संस्त में कुमारी, अंग्रेजी में एलोय कहा जाता है। एलोवेरा में कई औषधीय गुण पाये जाते हैं, जो विभिन्न प्रकार की बीमारियों के उपचार में आयुर्वेदिक एंव युनानी पद्धति में प्रयोग किया जाता है जैसे पेट के कीड़ों, पेट दर्द, वात विकार, चर्म रोग, जलने पर, नेत्र रोग, चेहरे की चमक बढ़ाने वाली त्वचा क्रीम, शेम्पू एवं सौन्दर्य प्रसाधन तथा सामान्य शक्तिवर्धक टॉनिक के रूप में उपयोगी है। इसके औषधीय गुणों के कारण इसे बगीचों में तथा घर के आस पास लगाया जाता है। पहले इस पौधे का उत्पादन व्यावसायिक रूप से नहीं किया जाता था तथा यह खेतों की मेढ़ में नदी किनारे अपने आप ही उग जाता है। परन्तु अब इसकी बढ़ती मांग के कारण कृषक व्यावसायिक रूप से इसकी खेती को अपना रहे हैं, तथा समुचित लाभ प्राप्त कर रहे हैं। एलोवेरा के पौधे की सामान्य उंचाई 60–90 सेमी. होती है। इसके पत्तों की लंबाई 30–45 से.मी. तथा चौड़ाई 2.5 से 7.5 से.मी. और मोटाई 1.25 से.मी. के लगभग होती है। एलोवेरा में जड़ के ऊपर जो तना होता है उसके उपर से पत्ते निकलते हैं, शुरूआत में पत्ते सफेद रंग के होते हैं। एलोवेरा के पत्ते आगे से नुकीले एवं किनारों पर कटीले होते हैं। पौधे के बीचो बीच एक दण्ड पर लाल पुष्प लगते हैं। हमारे देश में कई स्थानों पर एलोवेरा की अलग– अलग प्रजातियां पाई जाती हैं। जिसका उपयोग कई प्रकार के रोगों के उपचार के लिये किया जाता है।

स्टेविया की खेती : स्टीविया एक लोकप्रिय और लाभदायक औषधीय पौधा है। यह पौधा अपनी पत्तियों की मिठास के कारण जाना जाता है। इतना मीठा होने के बाद भी इसमें शर्करा की मात्रा नही होती है। यह एक शून्य कैलोरी उत्पाद है। यह मुख्य रूप से दक्षिण अमेरिका में अधिक पाया जाता है। यह मधुमेह वाले रोगियों के लिए काफी लाभदायक माना जाता है। यह रोगी के शरीर में इंसुलिन बनाने में मदद करता है। इसकी बढ़ती माँग को देखकर विश्व के कई देशों जैसे जापान, अमेरिका, ताइवान, कोरिया आदि देशों में इसकी व्यावसायिक तौर पर खेती की जा रही है। भारत में भी मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, झारखंड आदि राज्यों में इसकी खेती की शुरुआत हो चुकी है। स्टीविया की खेती के लिए अर्द्ध आर्द्र और अर्द्ध उष्ण जलवायु उपयुक्त रहती है। भारत में इसकी खेती पूरे साल में कभी भी कर सकते है। बस जिस क्षेत्र का तापमान शून्य डिग्री से नीचे जाता हो वहाँ इसकी खेती नही करना चाहिए। इसकी अच्छी पैदावार के लिए दोमट जमीन जो 6–7 पी.एच. के अंदर होनी चाहिए एवं उचित जल निकास वाली होना चाहिए। यह फसल सूखा सहन नही कर सकती इसलिए इसकी सिंचाई 10 दिनों के अंतराल में करना चाहिए। साल भर में इसकी 3 से 4 कटाई होती है उस कटाई में 60 से 90 क्विंटल तक सूखे पत्ते प्राप्त किये जा सकते है। यदि हम इनके अन्तर्राष्ट्रीय भाव की बात करे तो 300 से 400 रूपये प्रति किलो ग्राम है। लेकिन भारत में उचित बाजार नही होने पर हमें इसका भाव लगभग 80 रूपये किलो तक मिल जाता है। प्रति एकड़ लगभग 60 क्विंटल उत्पादन होने पर 4 से 5 लाख रूपये तक की आय हो जाती है।

आर्टीमीशिया की खेती : आर्टीमीशिया एक बहुत गुणकारी औषधीय पौधा है। इसका उपयोग मलेरिया की दवाई इंजेक्शन और टेबलेट्स बनाने में होता है। इसकी खेती चीन, तंजानिया, केन्या आदि देशों में बड़े पैमाने पर की जा रही है। इसकी बढ़ती मांग को देखकर भारत में इसकी खेती की शुरूआत हो चुकी है। इसकी खेती करने के लिए नम्बर–दिसम्बर में नर्सरी तैयार करना पड़ती है। और फरवरी के माह में इसको खेत में लगाना पड़ता है। इस फसल को बहुत कम खाद्य पानी की जरूरत पढ़ती है। इससे वर्ष में 3 बार उपज प्राप्त कर सकते है। प्रति बीघे में ढाई से साढे तीन क्विंटल पत्तियां निकलती है। इन पत्तियों को कंपनी 30 से 35 रूपये किलो तक खरीदते है। जिससे किसान को प्रति

बीघा 90000 से 100000 तक का फायदा होता है। और अगर हम इसकी लागत को देखे तो मात्र 15 से 20 हजार प्रति एकड़ के हिसाब से आती है।

लेमन ग्रास की खेती : गर्म जलवायु वाले देश सिंगापुर, इंडोनेशिया, अर्जेंटीना, चाइना, ताइवान, भारत, श्रीलंका में उगाया जाने वाला हर्बल पौधा है। इसकी पत्तियों का उपयोग लेमन टी बनाने में होता है। इससे निकलने वाले तेल का उपयोग कई तरीके के सौदर्य प्रसाधन एवं खाद्य में निम्बू की खुशबू (फ्लेवर) लाने के लिए होता है। भारत में इसकी खेती का क्षेत्रफल बढ़ रहा है। इसकी खेती करने के लिए पहाड़ी क्षेत्र उपयुक्त रहता है। जैसे की राजस्थान के बांसवाड़ा, डूंगरपुर, प्रतापगढ़ आदि लैमन ग्रास

का पौधा साल भर में तीन बार उपज देता है। हर कटाई करने के बाद इसकी सिंचाई करने से उत्पादन में बढ़ोतरी होती है। लेमन ग्रास की खेती करने के लिए सर्व प्रथम अप्रैल मई माह में इसकी नर्सरी तैयार की जाती है। प्रति हेक्टेयर 10 किलो बीज काफी होता है। जुलाई अगस्त में पौधे खेत में लगाने के लायक हो जाते है। इसके पोधों को क्यारी में 45 से 60 सेमी की दूरी पर लगाए जाते है। प्रति एकड़ में लगभग 2000 पौधे लगाए जा सकते है। इस फसल को बहुत ही कम सिंचाई की जरूरत होती है। कम वर्षा होने पर इसकी सिंचाई आवश्यकता अनुसार कर सकते है। लेमन ग्रास की पहली कटाई 120 दिनों के बाद शुरू हो जाती है। उसके बाद दूसरी और तीसरी कटाई 50 से 70 दिनों के अंतराल में होती है। लेमन ग्रास के छोटे छोटे टुकड़े कर आसवन विधि से तेल निकाला जाता है। प्रति एकड़ में लगभग 100 किलो ग्राम तेल का उत्पादन होता है। जिसकी बाजार में कीमत 700 रूपये किलो से लेकर 900 रूपये किलो ग्राम है।

शतावर की खेती : शतावरी को कई नामो से जाना जाता है जैसे शतावरी सतसुता लेकिन इसका वैज्ञानिक नाम एस्पेरेगस रेसीमोसा है। इस औषधि का उपयोग शक्ति बढ़ाने, दूध बढ़ाने, दर्द निवारण एवं पथरी संबंधित रोगों के इलाज के लिए किया जाता है। सतावर की खेती करने के लिए 10 से 50 डिग्री सेल्सियस उत्तम माना जाता है। इसके लिए खेत को जुलाई अगस्त माह में 2–3 बार अच्छी जुताई कर लेना चाहिए। अंतिम जुताई (अगस्त) के समय 10 टन सड़ी हुई गोबर की खाद्य प्रति एकड़ मिला लेना चाहिए। फिर 10 मीटर की क्यारी बना कर बीजो की बुआई करना चाहिए। बुआई के लिए प्रति एकड़ 5 किलो बीज की आवश्यकता होती है। बाजार में सतावर के बीज का मूल्य 1000 किलो ग्राम तक रहता है। बीज को बोने के एक सप्ताह बाद हलकी सिंचाई करें। दूसरी सिंचाई जब पौधे बड़े हो जाये उसके बाद करना चाहिए। सतावर को बहुत ही सिंचाई की जरूरत होती है। जब पौधे के पत्ते पिले पड़ जाये

तो इसकी खुदाई कर के रसदार जड़ों को निकाल ले। गीली जड़ों का उत्पादन प्रति एकड़ 300 से 350 क्विंटल तक होता है। खेत से निकली जड़ों को अच्छे से सफाई कर के तेज धूप में रखना होती है। जब जड़े सुख जाती है तो उनका वजन घटकर 40 से 50 क्विंटल तक रह जाता है। बाजार में इन जड़ों की कीमत 250 से 300 प्रति किलो तक रहता है।

तुलसी की खेती : तुलसी का पौधा प्राचीन समय से ही हर घर में लगया जाता रहा है। तुलसी का पौधा जितना पूजनीय है उससे कई ज्यादा उसमे औषधीय गुण होते है। तुलसी की खेती अब व्यावसायिक रूप में होने लगी है। तुलसी के पत्ते, तेल और बीज को बेचा जाता है। तुलसी कम पानी और कम लागत में ज्यादा फायदा देने वाली औषधीय फसल है। भारत में कुछ राज्य सरकारें तुलसी की खेती करने पर अनुदान भी उपलब्ध करवा रही है।

❋❋❋

सरंक्षण खेती किसान के लिए वरदान

सत्यनारायण रेगर एवं मोनिका मीना
कृषि महाविद्यालय, उम्मेदगंज, कोटा

सरंक्षण कृषि वो पद्धति है जिसके अंतर्गत संसाधन, सरंक्षण तकनीकी की सहायता से टिकाऊ उत्पादन स्तर के साथ–साथ पर्यावण संरक्षण को ध्यान में रखते हुए फसल उत्पादन लिया जाता है। इसमें कृषि क्रियाओं उदाहरणार्थ –शून्य कर्षण या अति न्यून कर्षण के साथ कृषि रसायनों एवं अकार्बनिक व कार्बनिक स्त्रोतों का संतुलित व समुचित प्रयोग होता है ताकि कृषि की विभिन्न जैव क्रियाओं पर विपरीत प्रभाव न हो।

भारत विविध प्राक्रतिक संसाधनों से संपन्न देश है लेकिन पिछले कुछ दशको में बढ़ती आबादी की खाद्यान जरूरतों को पूरा करने के कारण हमारे संसाधनों का बेपनाह दोहन हुआ है आज आवश्यकता इस बात की है की हम प्राकृतिक संसाधनों को सरंक्षित करने वाली कृषि पद्धतियो, यंत्रो एवं तकनीकी का प्रयोग करके उत्पादकता लाभ के साथ – साथ कृषि को उत्पादक बनाये और वातावरण को सुरक्षित रखे। संरक्षण खेती की तकनीक को अमेरिका, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया, अर्जेटीना, ब्राजील इत्यादि ने बड़े स्तर पर अपनी परिस्थितियों एवं क्षमताओं के अनुसार अपनाया है। संरक्षण खेती विश्व में कुल कृषि योग्य भूमि के लगभग 8.5 प्रतिशत क्षेत्रफल में होती है जो लगभग 12.4 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र है। इसका 90 प्रतिशत क्षेत्र अर्जेटीना, अश्वस्ट्रेलिया, ब्राजील, कनाडा व अमेरिका में है।

भारत में सरंक्षण खेती का विकास

भारत में संरक्षित खेती का प्रारंभ 90 के दशक में जी.बी पंत कृषि विश्वविद्यालय, पंतनगर द्वारा विकसित जीरो टिल सीड ड्रिल के साथ हुआ। उस समय इसे शून्य कर्षण कहते थे। पिछले कुछ वर्षो में जीरो जुताई और सरंक्षित खेती को अपनाने से लगभग 1.5 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र का विस्तार हुआ है। भारत में राज्य कृषि विश्वविद्यालयो और भारतीय कृषि अनुसंधान परिसद के संयुक्त प्रयासों से संरक्षण खेती के विकास एंव प्रसार करने का प्रयास किया गया है। इसके द्वारा गंगा के मैदानी क्षेत्रों में धान–गेहूं फसल प्रणाली पर शोध एवं प्रयोग किए गए तथा अनुकूल परिणाम प्राप्त हुए। किसानों में इसका प्रचलन मुख्यतः समय से बुआई तथा लागत मे कमी के कारण हुआ। सामान्यतः किसान खेत को तैयार करने के लिए 7 से 8 बार तक जुताई करता है। जुताई के लिए उसे फसल अवशेष को आग लगाना पड़ता है। भूपरिष्करण यंत्र जैसे हैरो, कल्टीवेटर, रोटावेटर इत्यादी मृदा की भौतिक रासायनिक एवं जैविक गुणों मे परिवर्तन लाते हैं जिससे मृदा क्षरण को बढ़ावा मिलता है। इस खेती के सिद्धांतों को पूर्ण रूप से लागू करने के लिए कई संसाधन संरक्षण तकनीकें अपनाई जाती हैं जैसे लेजर लेवलर, बैड प्लान्टर, हैप्पी सीडर एटर्बो सीडर से शून्य जुताई, बूंद–बूंद सिंचाई आदि जिससे फसल संसाधनों का प्रबंधन सुचारू रूप से किया जा सके। ये सभी तकनीकें संसाधनों की कुशलता बढ़ाती हैं।

सरंक्षण कृषि वास्तविक रूप से टिकाऊ उत्पादन प्रणाली प्रदान करने की रूप रेखा है सरंक्षण खेती प्रणाली में उपलब्ध संसाधनों का उचित प्रयोग एवं सरंक्षण करते हुए किसी स्थान कि भोतिक ,सामाजिक , आर्थिक स्थिति के अनुसार टिकाऊ फसल उत्पादन प्राप्त करने के लिए नये नये तरीके अपनाये जाते है।

सरंक्षण खेती मुख्यत : तीन सिद्धांतों पर आधारित है

- मृदा का दीर्घ काल तक अति सीमित कृषण एवं न्यूनतम जुताई
- भूमि कार्बनिक सत्रोतो से ढके रहना
- फसल विविधिकरण और सघनीकरण

संरक्षित खेती में न्यूनतम जुताई एवं जीरो टिलेज किया जाता है जिससे फसल अवशेष मृदा की सतह पर बने रहते हैं। इससे मृदा क्षरण बहुत कम हो जाता है। सामान्यतः 30 प्रतिशत तक फसल अवशेषों द्वारा मृदा का ढंका रहना आवश्यक है। संरक्षित खेती में फसल विविधीकरण एवं फसल चक्र अपनाना अति आवश्यक है। सामान्यतः किसान एक ही प्रकार की फसल चक्र कई वर्षो तक अपनाते हैं। उदाहरण के लिए धान–गेहूं फसल प्रणाली वर्षो से किसान एक ही खेत में लगा रहे हैं जिससे मिट्टी की उर्वरा शक्ति पर सीधा असर पड़ता है। फसल विविधीकरण मिट्टी की उर्वरता बनाए रखता है तथा फसल संबंधित कीटों एवं रोग व्याधि को भी कम करता है। फसल अवशेष को जलना नहीं चाहिए क्योकि मृदा में उपस्थित पदार्थ उड़ता है और मृदा की उर्वरा शक्ति भी कम होती है फसलों के अवशेषों को मृदा में 2–3 वर्ष तक मिलते रहने से पैदावार में बढोतरी होती है।

सरंक्षण खेती के सिद्धान्तो के आधार पर कृषि की प्रमुख यांत्रिक और शस्य विधिया

न्यूनतम जुताई : न्यूनतम जुताई विधि में खेती की जुताई इतनी कम की जाती है की बीज के अंकुरण होने के लिए व अच्छी पैदावार के लिए उचित माध्यम तैयार हो और साथ में लागत व ऊर्जा का व्यय भी कम हो परम्परागत बुवाई की तुलना में 7–8 प्रतिशत समय, मजदूर, डीजल, लागत और ऊर्जा की बचत तथा 5 प्रतिशत पैदावार में और 10 प्रतिशत शुद्ध लाभ में वृद्धि होती है। जहां तवेदार हैरो 2–3 बार चलानी पड़ती थी लेकिन शून्य कर्षण मशीन खेत में सिर्फ एक बार चलाने से जुताई व बुवाई सभी काम आसानी से पूर्ण हो जाते है जिससे किसान की समय की बचत के साथ–साथ जुताई बुवाई लागत में भी कमी आती है। शून्य कर्षण में जुताई मशीन जिसके चाकूनुमा फाली से खेत में चिरानुमा कुंड बनाती है और बीज व खाद अलग–अलग गहराई पर डालती है, इस मशीन से प्रति एकड़ बचत लगभग 1800–2000 रुपये होने की वजह से 10–15 एकड़ में इसे प्रयोग करने मात्र से ही मानो मशीन की लागत वसूल हो जाती है।

धान की सीधी बुवाई : खेत की पडलिंग करके धान की रोपाई की तुलना में धान की सीधी बुवाई कम श्रम के साथ अधिक लाभ देती है अगर धान की सीधी बुवाई के साथ हम फव्वारा विधि का उपयोग करे तो हम

न्यूनतम जुताई

1500–3000 लीटर लगभग (50 प्रतिशत) पानी की बचत होती है साथ ही मशीन से धान की रोपाई करने से 10 प्रतिशत शुद्ध लाभ में बढोतरी होती है।

लेजर मशीन द्वारा भू–समतलीकरण करना : भूमि समतलीकरण अच्छे मृदा स्वास्थ्य एवं अधिक फसल पैदावार के लिए अति आवश्यक है। लेजर लेवलिंग भूमि समतलीकरण की आधुनिक विधि है। लेजर लैंड लेवलिंग भूमि को एक निश्चित डिग्री एवं उपयुक्त भूमि ढलान में लेजर बीम सहायता से समतल करता है। लेजर लेवलर यंत्र में प्रमुख अवयव लेजर ट्रांस मीटर, लेजर रिसीवर, इलेक्ट्रिक मेनुअल मास्ट कंट्रोल बॉक्स एवं ड्रेम स्केपर रहते हैं जिनकी सहायता से भूमि को समतल करते हैं तथा इसमें मेड़ व नाली नहीं बनानी पड़ती है और साथ ही पुरे खेत में पानी बराबर मात्र में लगता है। खेत के समतल होने पर पानी की मात्रा की भी बचत होती है और फसल भी अभिवृद्धि करेगी।

फसल अवशेष प्रबंधन : धान की कम्बाइन मशीन से कटाई करने के उपरांत टर्बो सीडर मशीन द्वारा गेहू की सीधी बुवाई की जाती है और फसल अवशेष सड़कर मिट्टी की उर्वरा शक्ति, मृदा सरंचना में सुधार तथा सिंचाई जल उपयोग क्षमता में वृद्धि होती है। कम से कम जुताई करनी चाहिए और ज्यादा समय तक भूमि को फसल अवशेष से ढककर रखना चाहिए ,जिसे मृदा में उपस्थित कार्बनिक पदार्थ का नुकसान भी कम हो। जो भी हम खेत में खाद उर्वरक व पानी देते है जिनकी कम मात्रा में भी ज्यादा पैदावार व लाभ हो सके ।

न्यूनतम जुताई

बहु फसली प्लान्टर (मल्टीक्रॉप प्लांटर)

बहुफसली प्लान्टर (मल्टीक्रॉप प्लांटर) : बहुफसली प्लान्टर से मक्का, अरहर, सोयाबीन, चना आदि की कतारों में बुवाई की जाती है। इसमें अलग– अलग बुवाई के लिए अलग आकार की डिस्क लगाई जा सकती है जिससे पंक्ति से पंक्ति एवं पौधे से पौधे की दूरी निश्चित रखी जा सकती है। इसमें रिजर लगा होता है जिससे खेत में बोनी के साथ– साथ नालियां भी बनती हैं। अधिक वर्षा की स्थिति में नालियों से पानी की निकासी हो जाती है जिससे फसलों की जड़ों को नुकसान नहीं होता। इस यंत्र से बुवाई करने पर बीज, खाद तथा पानी में 25, 20 तथा 30 प्रतिशत की बचत होती है। साथ ही उत्पादन में 15 से 20 प्रतिशत तक वृद्धि होती है।

सुगरकेन रेकर एवं बेलर : गन्ना कटाई के उपरान्त खेत में फैली गन्ने की पत्ती एवं डंठल के प्रबंधन हेतु गन्ना रेकर एवं बेलन मशीन का उपयोग किया जाता है। रेकर ट्रैक्टर की पीटीओ से चलने वाला यंत्र है। इससे खेत में बिखरी पत्तियों को कतारबद्ध किया जाता है। ट्रैक्टर पीटीओ चालित बेलर मशीन द्वारा कतारबद्ध पत्तियों को एकत्र कर, बारीक एवं कम्प्रेस कर गट्ठे बनाए जाते हैं। इस मशीन द्वारा इन गट्ठों को बांध दिया जाता है। प्रत्येक बेल का वजन 30 से 40 किलोग्राम होता है। गन्ना उत्पादन का लगभग 25 प्रतिशत बायोमास के रूप में प्राप्त होता है जिसे कृषकों द्वारा प्रायः जलाकर नष्ट किया जाता है। बेलर मशीन का उपयोग कर ईधन के रूप में व अन्य औद्योगिक जरूरत के रूप इन बेल का उपयोग कर अतिरिक्त आमदनी आ सकती है। पत्तियां जलाने से होने वाले प्रदूषण भी रोका जा सकता है।

पैडी राउंड बेलर : धान की कटाई के उपरान्त खेत में खड़ी नरवाई को हटाने में बेलर मशीन का उपयोग किया जाता है। ट्रैक्टर के पीटीओ से इस मशीन से सतह से नरवाई की काटकर 2 फिट डायमीटर का गोलाकार बेल बनाया जाता है। प्रत्येक बेल का वजन 25 से 35 किलो के बीच होता है। कृषकों द्वारा प्रायः जलाकर नष्ट किए जाने वाले इस बायोमॉस (नरवाई) को बेल बनाकर ईधन के रूप में व अन्य औद्योगिक जरूरत के रूप में उपयोग कर अतिरिक्त लाभ कमाया जा सकता है। मशीन के उपयोग से नरवाई से होने वाले प्रदूषण को रोका जा सकता है।

पैडी राउंड बेलर

स्ट्रारीपर (गेहूं कटाई के पश्चात भूसा बनाने की मशीन) : इस यंत्र के द्वारा कम्बाइन हार्वेस्टर से फसल कटाई के उपरान्त खेत से नरवाई को एकत्र कर भूसा बनाया जाता है। ट्रैक्टर पीटीओ से चालित इस यंत्र में खड़ी नरवाई को कटरवार से काटकर थ्रेसिंग यूनिट में भेजा जाता है। मशीन की औसत कार्य क्षमता 1 एकड़ प्रति घंटा है। इस यंत्र के द्वारा औसतन 5 से 7 किवंटल प्रति एकड़ भूसा बनाया जा सकता है। स्ट्रारीपर के उपयोग में नरवाई जलाने से बचा जा सकता है। कटाई के दौरान खेत में बिखरी हुई गेहूं की बाली को इस यंत्र द्वारा लगभग 3 से 5 प्रतिशत अनाज भी एकत्रित किया जा सकता है। इस मशीन के उपयोग से बहुमूल्य पशु आहर एकत्र कर अतिरिक्त लाभ कमाया जा सकता है। सरकार द्वारा विभिन्न योजनाओं के तहत स्ट्रारीपर पर वर्गवार अनुदान दिया जा रहा है।

स्ट्रारी पर (गेहूं कटाई के पश्चात भूसा बनाने की मशीन)

सरंक्षण खेती में किसान जो कर रहे है और उनको क्या करने की जरुरत है। सरंक्षण खेती को लागु करने के लिए इससे मिलने वाले लाभों के प्रति जागरूकता बढ़ानी होगी, आज कल सरंक्षण खेती पर काम तीव्र गति से चल रहा है, जिससे आने वाले समय में इसके क्षेत्र में बढ़ोतरी होने की अपार सम्भावनाये नजर आती है। संरक्षण खेती के सभी सिद्धान्तों को अपनाकर हम आने वाले समय में विकराल रूप में कड़ी समस्या से कुछ सीमा तक निजात पाने में सक्षम हो सकते है । भारतीय किसान भी इस बात को धीरे – धीरे समझ रहे की सरंक्षण खेती भाविष्य की खेती है और यही खेती की प्रणाली है जिसे अपनाकर हम अपने संसाधनों को बचा सकते है और अधिक पैदावार ले सकते है। कुल मिलाकर कहा जा

फसल अवशेष प्रबंधन

सकता है कि पर्यावरण के अनुकूल और टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देना है तो संरक्षित खेती को अपनाना ही होगा।

सरंक्षण खेती क्यों है किसान के लिए फायदेमन्द : सरंक्षण खेती को अपनाने से भूमि की उत्पादकता में वृद्धि के साथ – साथ पानी , ऊर्जा और भूमि की उर्वरता का भी पूरा सरंक्षण करती है। सरंक्षण खेती करने से लागत में 20–30 प्रतिशत तक कमी एवं प्रति हेक्टयर लगभग 2500 रुपये की बचत भी होती है। सबसे बड़ी अहम बात यह है की यह पर्यावण के लिए भी अच्छा है और साथ ही ग्लोबल वार्मिंग और पर्यावण में आ रहे बदलावों को भी रोक सकता है । अगर इस नई खेती की तकनीकी को बड़े स्तर पर अपनाया जाये तो यह कार्बन डाईऑक्साईड की मात्रा को कम करने में मदद मिल सकती है क्योकि बिना जुते खेत कार्बन डाईऑक्साईड की मात्रा को सोख लेते है ,जिससे ग्लोबल वार्मिंग को कम करने में मदद मिलती है।

बायोचार से मृदा एवं पर्यावरण स्वास्थय

विनोद कुमार यादव, आर. के. यादव, चिराग गौतम एवं यामिनी टॉक
कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

बायोचार उच्च कार्बन युक्त ठोस पदार्थ हैं। यह उच्च तापमान पर ऑक्सीजन अनुपस्थित या कम मात्रा में तैयार किया जाता है। यह कहा जा सकता हैं कि यह एक आंशिक अवायवीय प्रकिया है। जिसमे किसी भी कार्बनिक ठोस पदार्थ को भिन्न भिन्न तापमान पर रख कर बायोचार को तैयार किया जाता है। बायोचार एक बहुत ही प्रभावशाली उर्वरक है जो कि अवशिष्ट कार्बनिक पदार्थो की पायरोलिसिस प्रकिया द्वारा तैयार किया जाता है।

यह एक उभरती हुई तकनीक है।, जो कि आधुनिक कृषि उत्पादन के लिए अतिआवश्यक है। बायोचार मृदा उर्वरक शक्ति बढाने के साथ–साथ फसल कि उत्पादकता को भी बढाता है। यह किसानों के लिए एक बहुत ही किफायती और बहुपयोगी तकनीक साबित हो चुकी है। बायोचार कृषि के साथ–साथ पर्यावरणीय दृष्टि से भी उपयोगी साबित हुआ है। क्योंकि इसके अनेक पर्यावरणीय महत्व हैं।

बायोचार की कृषि के क्षेत्र में उपयोगिता

मृदा उर्वरता बढ़ाने में

मृदा की उर्वरा शक्ति बायोचार के द्वारा अलग अलग प्रकार से बढती है। जैसे कि मृदा की नमी को रोकने की क्षमता बढ़ना, मृदा घनत्व कम हो जाना, मृदा कि भौतिक–रासायनिक एवं जैविक गुणो का बढ़ जाना इत्यादि मापदंडो पर सकारात्मक प्रभाव होता है। और साथ ही साथ इसके द्वारा उपचारित मृदा की उर्वरा शक्ति अन्य उर्वरक की तुलना में अधिक मापी गयी है। यह फसल की उच्च उत्पादन क्षमता को दर्शाता है।

बायोचार की उर्वरा शक्ति उसके तापमान पर आधारित है। समान्यतया बायोचार 300, 400, 500, 600, 700, 800, 900 और 1000 डिग्री सेंटिग्रेड पर तैयार किया जाता है। परन्तु विभिन्न प्रकार के अनुसंधानों से पता चलता है कि 500 व 600 डिग्री सेंटिग्रेड तापमान पर तैयार किया गया बायोचार मृदा की उर्वरा शक्ति के लिए ज्यादा प्रभावशाली होता है। क्योंकि इस तापमान पर बायोचार के पोषक तत्व खत्म नहीं होते है। बायोचार के पोषक तत्व उसके आंतरिक गुणों पर भी निर्भर करते है। परन्तु जब उसको उच्च तापमान पर तैयार किया जाता है तो उसके पोषक तत्वों में कमी आ जाती है। इसलिए 500 व 600 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान पर तैयार किया गया बायोचार कृषि उपयोग के लिए उच्च कोटि का माना जाता है।

सूक्ष्मजीवो का वास स्थान

बयोचार का उपयोग मृदा में मृदा उपयोगी सूक्ष्मजीवो की संख्या को बढाने में बहुत ही मददगार साबित हो चुका है क्योकि इसकी छिद्रयुक्त आंतरिक संरचना सूक्ष्मजीवो के वास स्थान और जनन के लिए बहुत ही उपयोगी होती है मृदा में उपस्थित अनेक प्रकार के जीव जैसे कि निमेटोड, प्रोटोजोवा और अन्य मृदा जीव उन सभी कृषि उपयोगी सूक्ष्मजीवो को अपनी खाद्य श्रृंखला का हिस्सा बना लेते है जिससे कि मृदा कि उर्वरक शक्ति प्रभावित होती है जिसके फलस्वरूप फसल उत्पादन कम हो जाता है और साथ ही साथ मृदा में सूक्ष्मजैव विविधता भी घट जाती है

फसल उत्पादन क्षमता

अनेक प्रकार के अनुसंधानों से पता चला है कि बायोचार एक बहुपयोगी उर्वरक है। जो उत्पादन बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जिससे कि किसानों की आय बढ़ती है और साथ ही साथ पर्यावरण भी सुरक्षित रहता है। यह मृदा सूक्ष्मजीवों के लिए एक सुरक्षा कवच प्रदान करता है। फसल कि कायिक अवस्था से लेकर उसके परिपक्व होने तक महत्वपूर्ण योगदान देता है। फसल को मौसम के अनुकूल बनाता है तथा फसल अपनी कायिक अवस्था में ही उच्च स्तरीय वृद्धि को दर्शाती है। जिसमें कि पौधे की जड़ से लेकर तना, स्तंभ तक सकारात्मक प्रभाव देखा गया है। फसल रोपाई के बाद वृद्धि को अलग–अलग अवस्थाओं में मापा भी जा चुका है।

मृदा पोषक तत्वों के ह्रास में सुधार

मृदा में बायोचार का उपयोग करने से मृदा बनावट, छिद्रण, कण आकार, वितरण और घनत्व प्रभावित होता है। बायोचार का उपयोग मृदा की अम्लता को कम करता है। इसके अलावा मृदा कि विद्युत चालकता और धनायन विनिमय क्षमता को बढाता है। मृदा कि अम्लता के बढ़ने से बायोचार की उपयोगिता मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता को पूरा करता है। यह मृदा में पोषक तत्वों की कमी को दूर करता है। बायोचार मृदा कणों से बंधे रहते हैं, इस प्रकार मृदा में बायोचार 100–1000 वर्ष तक उपस्थित रह सकता है, जोकि मृदा कि उच्च उर्वरा शक्ति को दर्शाता है।

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि बायोचार 100 – 1000 वर्षो तक पोषक तत्वों को अपने अंदर समाहित कर सकता है एवं मृदा को एक लम्बे समय तक उपजाऊ बना सकता है।

बायोचार के रूप में कृषि अवशिष्ट का उपयोग

विश्व में प्रत्येक वर्ष मिलियन टन के हिसाब से कृषि अवशिष्ट निकलता है जिसको की ज्यादातर देशो में आग के द्वारा जला दिया जाता है। यह बाद में एक अनावश्यक उत्पाद के रूप में प्राप्त होता है, क्योकि इसके ज्यादातर पोषक तत्व वाष्पिकृत हो जाते है। और कुछ मात्रा में कार्बन एवम् अन्य तत्व शेष बचते है।

बायोचार आधारित कृषि पर्यावरणीय स्वच्छ तकनीकी पर आधारित है, लेकिन भारत में इस तकनीकी के अभाव में किसान कृषि अवशिष्ट को जला देता है, जिसके द्वारा पर्यावरण भी प्राभावित होता है। वह जिस अवशिष्ट को जानकारी के आभाव में जलाया जाता है, उसको बायोचार के रूप में अच्छी फसल उत्पादन लेने के लिए कृषि में प्रयोग किया जा सकता है। इसके प्रयोग से विभिन्न प्रकार के रसायनिक उर्वरकों के प्रयोग से बचा जा सकता है जो कि वह कृषि मृदा के लिए बहुत हानिकारक होते है इस प्रकार से अच्छी फसल प्राप्त करके अच्छी आय प्राप्त की जा सकती है। दिन प्रति दिन रसायनिक उर्वरकों के इस्तेमाल से मृदा के भौतिक–रासायनिक और साथ साथ जैविक गुणों पर भी नकारात्मक प्रभाव होता है जिससे कि मृदा कि उर्वरक्ता आंशिक अथवा पूर्ण रूप से प्रभावित होती है। जिससे कि फसल का उत्पादन कम को जाता है इसीलिए किसानों की आय भी प्राभावित होती है।

यदि वर्तमान में कृषि फसल उत्पादन को देखते है तो 15 वर्ष पहले की उत्पादन दर याद आती है जो कि वर्तमान दर से लगभग दोगुना ज्यादा होती थी इसीलिए किसान का जीवन भी खुशहाल था परन्तु वर्तमान में दिन प्रतिदिन अच्छे उत्पादन की लालसा ने किसानों को विभिन्न प्रकार के रसायनिक उर्वरकों का उपयोग करने के लिए मजबूर कर दिया है, जिसके दुष्परिणाम आज हमारे सामने है।

इस तरह देखा जाए तो मृदा कई भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों को बचाना बेहद जरूरी है क्योंकि मृदा की उर्वरा शक्ति के क्षीण होने का नुकसान किसी न किसी रूप में समूचे राष्ट्र को चुकाना पड़ता है। यदि फसलों की वृद्धि के लिए आवश्यक नाइट्रोजन, फास्फोरस, मैग्नीशियम, कैल्शियम, गंधक, पोटाश सहित अन्य तत्वों को बचाकर उनका समुचित उपयोग पौधे को ताकतवर बनाने में किया जाए तो एक तरफ हमारी आर्थिक स्थिति में सुधार होगा और दूसरी तरफ मृदा संरक्षण की दिशा में भी एक महत्वपूर्ण पहल होगी।

मृदा में कार्बनिक पदार्थ और सूक्ष्म जीवों का महत्व

केशव प्रसाद कुर्मी, प्रवेश सिंह चौहान, एन. आर. मीणा एवं एस. एन. राहुल
संगम विश्वविद्यालय, भीलवाडा, (राज.) नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)
एवं महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर, राज.)

प्रस्तावना

मृदा में उपस्थित जन्तु एवं वनस्पति के अवशेष पूर्ण रूप से मृदा में मिल जाते है कार्बनिक पदार्थ कहलाते हैं। मृदा में मिलाये जाने वानस्पतिक व जन्तु अवशेष, सूक्ष्मजीव, कीड़े, मकोड़े, अन्य जन्तुओं के मृत शरीर, एव जीवो और वनस्पतियो द्वारा प्राप्य खाद जैसे गोबर की खाद, वर्मी कम्पोस्ट, हरी खाद, आदि मृदा कार्बनिक पदार्थ कहलाते हैं। ह्यूमस मृदा कार्बनिक पदार्थो के विच्छेदन व संश्लेषण प्रतिक्रियाओं द्वारा मृदा में रह जाता है। मृदा में ह्यूमस एवं कार्बनिक पदार्थ की उपस्थिति से मृदा स्वास्थ्य में सुधार एवं बदलते जलवायु परिदृश्य में मृदा की उर्वरता बनाये रखता है। ताजे एवं बिना विच्छेदन के पौध अवशेष जैसे भूसा, ताजा गोबर एवं अन्य पदार्थो का पूर्ण रूप से विच्छेदन होने के बाद ही मृदा कार्बनिक पदार्थ की श्रेणी में आते हैं। जिन जीवो द्वारा मृदा में कार्बनिक पदार्थो का विच्छेदन होता है उन्हे मृदा जीव कहते है विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म जीवों की वृद्धि हेतु मिट्टी अत्यंत अनुकूल संवर्धन माध्यम होता है, जिसमें बैक्टीरिया, कवक, शैवाल, प्रोटोजोआ एवं निमेटोड्स आदि सूक्ष्म जीव उपस्थित रहते हैं ।सामान्यतः मिट्टी के 6 से 12 इंच ऊपरी स्तर पर सूक्ष्म जीवों की संख्या अधिकता में पायी जाती है जो कि गहरा बढ़ने के साथ ही कम होती जाती है।

मृदा कार्बनिक पदार्थ

मृदा कार्बनिक पदार्थ एक जैविक घटक है, जिसमें पौधों के अवशेष, जीवित जीव (10–40 प्रतिशत) विघटित कार्बनिक पदार्थ, कार्बनिक पदार्थ (40–60 प्रतिशत) तथा पौधों की जड़ों के अवशेष शमिल हैं। मृदा कार्बनिक पदार्थ सूक्ष्म जीवों के लिए ऊर्जा का मुख्य स्रोत है। मृदा में कार्बनिक पदार्थ का प्रमुख स्रोत पौधे होते हैं, जिनका ऊपरी भाग एवं जड़ें विघटित होकर मृदा में मिल जाती हैं। पौधों की जड़ों से श्वसन क्रिया द्वारा तथा अन्य भागों से रसायन उत्पन्न करके कार्बन पृथक्करण क्रिया को तीव्र कर देते हैं। कृषि में ऑर्गेनिक कार्बन की मात्रा भूमि प्रबंधन पर निर्भर करती है। इसके अतिरिक्त इसमें मृदा कारक, जलवायु, पौधों की सघनता एवं गुणवत्ता, सूक्ष्मजीवों की संख्या आदि का भी प्रभाव पड़ता है। आधुनिक खेती में कार्बन की हानि को कम करने के लिए अधिक कार्बनिक वृद्धि वाली फसलों से अधिक कार्बन की मात्रा को मृदा में फिर से बढ़ाया जा सकता है। मृदा कार्बनिक पदार्थ की मात्रा स्थान के तापमान, मृदा गठन और उस क्षेत्र के जल निकास को नियंत्रण करता है। मृदा कार्बनिक पदार्थ मे लगभग 58 प्रतिशत मृदा कार्बनिक कार्बन होता है। अधिकतर मृदा में 2–10 प्रतिशत कार्बनिक पदार्थ होता है।

मृदा कार्बनिक पदार्थ का प्रभाव

मृदा कार्बनिक पदार्थ मृदा के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों को प्रभावित करता है। मृदा कार्बनिक पदार्थ के प्रभाव निम्नलिखित हैं।

मृदा के रासायनिक गुणो पर प्रभाव: मृदा कार्बनिक पदार्थ पौधों के आवश्यक पोषक तत्व जैसे नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश अन्य सूक्ष्म तत्व के भण्डार होते हैं जिनके अपघटन की क्रिया से आवश्यक पोषक तत्व पौधों को आसानी से उपलब्ध होते हैं। यह अनेक प्रकार के खनिज एवं विटामिन प्रदान करते हैं जो कि पौधे की वृद्धि के लिए आवश्यक होते है। मृदा कार्बनिक पदार्थ अपघटन से कई प्रकार के कार्बनिक अम्ल प्राप्त होते हैं। इससे मृदा की प्रतिरोधी क्षमता बढ़ती है जो कि मृदा की क्षारीयता को कम करती है। यह मृदा में उपस्थित ऐसे पदार्थों को उदासीन करते हैं, जो कि पौधों पर विषैला प्रभाव छोड़ते हैं अर्थात् मृदा की विधुत चालकता एवं पीएच मान को नियंत्रित करते हैं।

मृदा के भौतिक गुणो पर प्रभाव: मृदा कार्बनिक पदार्थ मृदा की संरचना, मृदा कणाकार, मृदा रंग एवं जल धारण क्षमता को प्रभावित करते है जल धारण क्षमता बढ़ने से वर्षा का पानी आसानी से मृदा के अन्दर रिस जाता है। अतः जल बहाव कम होने के कारण मृदा कटाव कम हो जाता है। मृदा कार्बनिक पदार्थ से मृदा कणो का संगठन होने के कारण वायु द्वारा मृदा कटाव कम हो जाता है। सरफेस मृदा कठोर नही होती जिससे मृदा मे जुताई आसानी से हो जाती है। अतः मृदा का संरक्षण होता है।

जैविक गुणो पर प्रभाव: मृदा में उपस्थित जीव एवं सूक्ष्म जीव मृदा में होने वाली विभिन्न प्रक्रियाओं में सक्रिय रुप से शमिल होकर मृदा मे पोषक तत्व की उपलब्धता के साथ–साथ मृदा में वायु संचार भी बढ़ाता है। जल मे कार्बनिक पदार्थो का प्रभाव मानव एवं पशुओ का मल–मूत्र जल को दूषित करता है जिसमें कार्बनिक पदार्थ बड़ी मात्रा में उपस्थित होते हैं, स्वच्छ जलस्रोतों में मिलकर उनका बीओडी (बायोलॉजिक ऑक्सीजन डिमांड) भार बढ़ा देते हैं अर्थात कार्बनिक पदार्थ सूक्ष्म जीवो द्वारा विघटित होते हैं, जो जलस्रोतों में मिलने से सूक्ष्म जीवाणुओं की क्रियाशीलता से जल में घुलित ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है। जिससे हानिकारक बैक्टीरिया सिंचाई जल के साथ–साथ पेयजल में भी बढ़ जाते है जो मानव एवं पौधो को हानिकारक होता है ।

मृदा कार्बनिक पदार्थ के ह्रास के कारण

मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा का निर्धारण वर्षा, तापमान, भूमि का प्रकार, भूमि पर उपस्थित वनस्पति की सघनता एवं उपलब्धता आदि कारकों के कारण होता है। फसल उत्पादन के लिये प्रयुक्त की जाने वाली

मृदाओ में 10 सेमी. सतह पर कार्बनिक पदार्थ का ह्रास अधिक होता है। मृदा में कार्बनिक पदार्थ ह्रास होने के प्रमुख कारण निम्न लिखित हैं।

सघन कृषि एवं द्विफसल चक्र: देश में खाद्यान्नों की मांग लगातार बढ़ने से एक वर्ष में दो से तीन फसलें ली जा रही हैं जिससे भूमि में पोषक तत्वों की कमी हो रही है इसलिये भूमि में पोषक तत्वों के असंतुलन की स्थिति भी आती जा रही है। इस कारण कार्बनिक पदार्थ का स्तर घट रहा है। खाद्यान्न पूर्ति एवं अधिक उत्पादन के लिये वन चारागाह भूमी पर खेती की जा रही हैं, जिससे कि कार्बनिक पदार्थ के प्राकृतिक भण्डार कम हो रहे हैं उत्तर भारत में अधिक उत्पादन के लिये धान–गेहूँ फसल चक्र अपनाया जा रहा है जिससे देश को 31 प्रतिशत खाद्यान्न प्राप्त होता है। एक ही कुल की लगातार फसल लेने से भूमि से भारी मात्रा में पोषक तत्वों का ह्रास होता है। जिसका मृदा पर नकारात्मक प्रभाव पडता है। इस कारण मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा शीघ्रता से घटने लगती है।

फसल अवशेषों को जलाना: फसल काटने के पस्चात शेष बचे हुए फसल अवशेषों को कृषक खेत की सफाई के लिये खेत में ही जला देते हैं। अवशेष जलने से मृदा की सतह की गर्मी बढ़ती है जिस कारण हॉनिकारक जीवो के साथ–साथ लाभदायक सूक्ष्मजीव भी नष्ट जाते है और जो अवशेष जल जाते हैं वे कार्बन के उत्तम स्रोत होते हैं खेत में अवशेष जलाने से पर्यावरण प्रदूषित होता है जो कि मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है। अवशेषों को जलाने से हरित प्रभाव गैस में विशेष रूप से कार्बन डाई ऑक्साइड उत्सर्जित होती है जिससे अत्यधिक तापमान में वृद्धि होती है। इस कारण मृदा कार्बनिक पदार्थ का स्तर घट जाता है।

जलवायु परिवर्तन: विश्व में ग्रीन हाउस गैसों के प्रभाव के कारण वातावरण के तापमान में सांद्रण वृद्धि हो रही है। इस कारण वर्षा का वितरण भी अनियमित हो गया है। कुछ क्षेत्रों में कई वर्षों से कम वर्षा हो रही है, मानसून का देर से आना, वर्षा–काल में कई दिन तक सूखा रहना, एक ही दिन अत्यधिक वर्षा होना, मानसून का शीघ्र अंत होना व असमय वर्षा होना, मौसम में अत्यधिक परिवर्तन होना जैसे पाला पड़ना, फसल वृद्धि के दौरान नमी के कमी कारण सूक्ष्म जीवों की वृद्धि नहीं हो पाती है तथा उनकी क्रियाशीलता भी कम हो जाती है, जिससे कार्बनिक पदार्थों की विघटन की क्रिया मंद पड़ जाती है। इससे मृदा कार्बनिक पदार्थ कम हो जाती है। भूमी में नमी कम होने के कारण अधिक ऑक्सीकरण होने से भूमि से कार्बनिक पदार्थ का ह्रास होता है और मृदा में कार्बनिक पदार्थ कम होने लगता है।

अनियमित कर्षण क्रियाएँ एवं मृदा क्षरण: आवश्यकता से अधिक जुताई करने से जैव पदार्थों का अपघटन शीघ्र होकर कार्बनिक पदार्थ का ह्वास होता है तथा मृदा की संरचना बिगड़ जाती है। मृदा क्षरण से कार्बनिक पदार्थ भूमि से स्थानांतरित हो जाते हैं। मृदा में कार्बनिक पदार्थ का विघटन होने से द्वितीयक लवणीकरण या क्षारीयकरण बढ़ता है। तथा मृदा में जड़ों का विकास ठीक ढंग से नहीं हो पाता है जिससे मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा क्षीण हो जाती है।

कार्बनिक खादों का कम एवं असंतुलित उर्वरको का अधिक उपयोग: पादप अवशेष, पशु व मानव अपशिष्ट पदार्थों से बनी खादों को कार्बनिक खाद कहते हैं। शहरीकरण, कृषि मशीनीकरण ,खरपतवार नियंत्रण के लिए खरपतवारनाशी का उपयोग करना ,चारागाह नष्ट हो जाना तथा पर्याप्त मात्रा में पशुओं को चारा प्राप्त न होने के कारण पशुपालन भी कम हो गया है। भूमी का वानस्पतिक आवरण भी कम होता जा रहा है इस कारण कार्बनिक खादों की उपलब्धता कम होती जा रही है। कृषि क्षेत्रों में पोषक तत्वों का क्षरण असंतुलित उर्वरको के उपयोग से हो रहा है जिससे मृदा उर्वरता घट रही है, इसलिए मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा भी कम हो रही है।

सूक्ष्म जीव : वे जीव जिन्हें मनुष्य नंगी आंखों से नही देख सकता तथा जिन्हें देखने के लिए सूक्ष्मदर्शी यंत्र की आवश्यकता पड़ती है, उन्हें सूक्ष्मजीव (माइक्रो ऑर्गेनिज्म) कहते हैं सूक्ष्मजीवों के अन्तर्गत सभी जीवाणु (बैक्टीरिया) आर्किया तथा लगभग सभी प्रोटोजोआ के अलावा कुछ कवक (फंगी), शैवाल (एल्गी), और चक्रधर (रॉटिफर) आदि जीव आते हैं। यह मृदा, जल, वायु, हमारे शरीर के अंदर तथा अन्य प्रकार के प्राणियों तथा पादपों में पाए जाते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में सूक्ष्मजीव द्वारा उत्पन्न बायोगैस का उपयोग ऊर्जा के रूप में (खाना पकाने, प्रकाश, डीजल पम्प चलाने आदि) किया जाता है। सूक्ष्मजीवों का प्रयोग जैवनियंत्रण विधि द्वारा हानिप्रद पीड़कों (पेस्ट्स) को मारने के लिए भी किया जाता है। जैवनियंत्रण मापन से विषैले पीड़कनाशियों (पेस्टिसाइड्स) के प्रयोग कम हो गये है। आधुनिक समय के अनुसार रासायनिक उवर्रकों के स्थान पर जैव उर्वरकों का प्रयोग किया जाना चाहिए।

मृदा सूक्ष्म जीव : मृदा विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म जीवों की वृद्धि के लिये अनुकूल संवर्धन माध्यम होता है, जिसमें कवक, शैवाल, बैक्टीरिया, प्रोटोजोआ एवं वाइरस जैसे सूक्ष्म जीवों के साथ ही बहुत से निमेटोड तथा कीट आदि उपस्थित रहते हैं । सामान्यतः मृदा में 6 से 12 इंच की सतह पर सूक्ष्म जीवों की संख्या अधिक पायी जाती है जो गहरा बढ़ने पर कम हो जाती है। मृदा सूक्ष्म जीवों की संख्या एवं प्रकार मृदा की प्रकृति गहरा, जलवायु, कार्बनिक पदार्थों, ताप, नमी, मृदा वायु आदि पर निर्भर करता है।

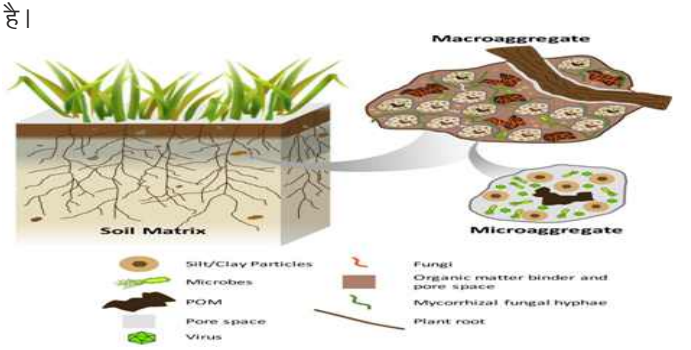

मृदा में मुख्यत : निम्न प्रकार के सूक्ष्म जीव पाए जाते हैं

1. बैक्टीरिया : मृदा में पाए जाने वाले अधिकांश बैक्टीरिया हेटेरो ट्राफिक होते हैं। जोकि कार्बनिक पदार्थों का अधिकता से उपयोग करते हैं। ये बैक्टीरिया भूमि में महत्वपूर्ण नाइट्रोजन स्थरीकरण का कार्य करते हैं, इनमें क्लोस्टीडियम, एजेटोबैक्टर, राइजोबियम, नाइट्रोसोमोनास, नाइट्रोबेक्टर आदि प्रमुख हैं। कुछ सल्फर, बैक्टीरिया (थियो बैसीलास) सल्फर युक्त गैसों को ऑक्सीकृत कर उन्हें सल्फेट्स में परिवर्तित करते हैं जिसका उपयोग पौधे करते है या वर्षा जल द्वारा भूमि से अलग हो जाती है। इस प्रक्रिया में सल्फ्यूरिक अम्ल का भी निर्माण होता है, जो अघुलनशील मृदा कणों (जैसे कैल्शियम, फोस्फेट, मैंग्नीशियम, कार्बोनेट, ट्राइकैल्शियम फास्फेट) को घुलनशील बनाकर उन्हें पौधों के उपयोग हेतु उपलब्ध रुप में परिवर्तित हो जाते हैं ।

2. कवक : मृदा में कवकों का विकास मुख्य रूप से अम्लीय माध्यम एवं सतह पर वायुवीय परिस्थितियों पर निर्भर करता है । मोल्डस एवं बड़े मांसल कवक जैसे मशरूम हैं। मृदा में कवक माईसेलियम एवं स्पोर्स दोनों अवस्थाओं में पौधों के ऊतकों में उपस्थित सेल्यूलोज एवं लिग्नीन के अपघटन में सक्रिय रहते हैं। मोल्ड माइसीलियम मृदा को भेदकर एक नेटवर्क बनाते हैं जिसमें मिट्टी के कणों के साथ ही संचित जल संरचना वन जाती है। कवक मृदा की भौतिक अवस्था को विकसित करते हैं। इसके अतिरिक्त शर्करा कवक, ह्यूमस कवक, मृदा में निवास करने वाली परजीवी कवक, परभक्षी कवक, डंक कवक, हैं। कुछ यीस्ट जैसे केन्डीडा, क्रिप्टो कॉकस, टोरुला आदि कवक भूमि में जटिल कार्बनिक पदार्थों का सरल पदार्थों में अपघटन करते हैं। जिससे मृदा की उर्वरकता में वृद्धि होती है। प्रोटीन युक्त पदार्थ भी कवक द्वारा अपघटित होते हैं जिससे मृदा में अमोनिया तथा सरल नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ती है। कवक मृदा में ह्यूमस निर्माण में सहायक होती हैं।

3. शैवाल : शैवाल सामान्यतः नम भूमि की सतह पर पाए जाते हैं । जहाँ पर उनके फोटोसिन्थेटिक क्रियाओं हेतु समुचित प्रकाश उपस्थित होता है। मिट्टी में अधिकांशतः हरे शैवाल अत्यधिक संख्या में पाए जाते हैं। परिस्थितियों के अनुसार हरे शैवाल की अधिक संख्या बढ़ने के कारण मरूभूमि में लाभप्रद परिवर्तन हो जाते हैं। और ये धान के खेतों में मृदा नाइट्रोजन स्थिरीकरण करते हैं। कुछ शैवाल जैसे जैन्थोफाइटा समूह की शैवाल सतह से कुछ अधिक गहराई में जा सकती हैं सतही शैवाल वर्षा के जल में बह जाती है। बैसीलीरियो फाइटा तथा क्लोरोफाइटा मृदा सतह की गहराई में परपोषित होती हैं। एक ग्राम मृदा में शैवालों की कुल संख्या पचास हजार से एक लाख तक हो सकती है। खेतों में कभी–कभी क्लोरोफाइटा (हरी शैवाल) ऊपरी सतह पर रहती है, जिससे कृषकों को अच्छी फसल की प्राप्ति होती है । हरी शैवाल प्रचुर मात्रा में कार्बोहाइड्रेट का संश्लेषण करती है। साइनो बैक्टीरिया (नीली हरी शैवाल) मृदा में व्यापक रूप से पाये जाते हैं, क्योंकि ये वातावरण की नाइट्रोजन को स्थरीकरण कर उसे उपजाऊ बनाते हैं ।

4. प्रोटोजोआ : मृदा में सिलिएट्स की अपेक्षा फ्लैजिलेट्स एवं अमीबा अधिक संख्या में पाए जाते हैं। इनकी संख्या कुछ सौ से लेकर कई हजार तक हो सकती है। ये कार्बनिक पदार्थों का अपघटन करते हैं तथा भोजन हेतु उसका उपयोग करते हैं मृदा में उपस्थित प्रोटोजोआ कुछ मात्रा में मृत एवं जीवित बैक्टीरिया का भी भक्षण करते हैं तथा मृदा में उपस्थित बैक्टीरियल फ्लोरा में संतुलन बनाए रखते हैं। कुछ प्रोटोजोआ जैसे– ओइकोमोनासटर्मो सारकोमोनास, कोल पोडा, कुकुलस, हाइलाइना आदि ये सामान्यतः मृदा की ऊपरी सतह पर पाये जाते हैं तथा मृदा आद्रर्ता के प्रति संवेदनशील होते हैं ।मृदा में इनकी उपस्थिति घातक होती है, क्योंकि ये मृदा में बैक्टीरिया पर जीवित रहते हैं ।

5. विषाणु : वे सूक्ष्म जीव जो केवल न्यूक्लिक एसिड एवं प्रोटीन के बने होते हैं, वायरस कहलाते हैं। मृदा में कुछ पादप एवं जन्तु वाइरस भी उपस्थित रहते हैं तथा अधिकांशतःजीवों के लिए रोगकारक भी होते हैं। पॉली हाइड्रोसिस वायरस प्राकृतिक रूप से मौजूद सूक्ष्म जैविक है। यह कीट की प्रजाति विशेष के लिए कारगर होता है। ग्रेनुलोसिस सूक्ष्मजैविक वायरस का प्रयोग सूखे मेवे के भण्डार, कीटों, गन्ने की अगेती तना छेदक, इटंरनोड़ बोरर और गोभी की सुंडी से बचने के लिए किया जाता है।

6. माइकोराइजा : कवक के कुछ सदस्य जडों के साहचर्य में रहते हैं, जिन्हें माइकोराइजा कहते हैं। ये जड़ की सतह पर बाह्यपोषी माइकोराइजा या अन्तः पोषी माइकोराइजा निवास कर सकते हैं। बाह्यपोषी माइकोराइजा के प्रमुख सदस्य बेलीटस, लेक्टेरियम, ऐमेनीटा आदि हैं। जबकि अन्तः पोषी माइकोराइजा के सदस्य पोमा, राइजक्टोनिया, आर्मी लेरिया आदि हैं।

मृदा में सूक्ष्म जीव बढाने के उपाय

मृदा में सुक्ष्म जीव बढाने के लिये खेतों में धान व गेहु की पराली के उपयोग से जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होती है। और फसल उत्पादन अपने आप बढ़ जाता है धान का पैरा, उड़द, सोयाबीन, चना के कचरे को नही जलाना चाहिए। ट्राइकोडर्मा से एक महीने में ही ये खाद बन जाता हैं। गोबर की खाद मृदा में मिलाने से वायु व पानी को अवशोषित करने की क्षमता में वृद्धि हो जाती है। कम्पोस्ट एव हरी खाद के उपयोग से मिट्टी के स्वास्थ्य में काफी सुधार होता रहता है। जो मृदा में सूक्ष्म जीवाणु बढाने मे सहायता करते हैं।

मृदा में कार्बनिक पदार्थ बढ़ाने के उपाय

भूमि में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ाने के लिए मृदा, जल तथा पोषक तत्वों का प्रबंधन एवं कृषि संरक्षण विधियों को अपनाकर मृदा में कार्बनिक पदार्थ का स्तर बढ़ाया जा सकता है। कुछ महत्वपूर्ण सुझाव निम्न प्रकार है।

हरी खाद एवं कम्पोस्ट : मृदा में कार्बनिक पदार्थ बढ़ाने के लिए हर तीसरे वर्ष 10 टन प्रति हेक्टेयर की दर से गोबर की कम्पोस्ट खाद या केंचुआ खाद डालना चाहिए। कृषक हरी खाद जैसे सनई, ढैंचा, चवला आदि जल्दी वृद्धि करने वाली फसलों को उगाकर एवं उन्हे मृदा में दबाकर भी कार्बनिक पदार्थ बढ़ा सकते हैं। किसान एक महत्वपूर्ण उपाय हरी खाद का प्रयोग कर, मृदा के गुणों में सुधार कर फसलोत्पादन भी अधिक बढा सकता है, और कृषक इसे आसानी से उगा भी सकते है। हरी पत्तियों की खाद जंगलों के पास पेड़–पौधों, मेड़ों व बेकार पड़ी जमीनों पर उगे पेड़–पौधों या झाड़ियों की हरी पत्तियों तथा मुलायम शाखाओं को इकट्ठा करके किसी अन्य खेत (जिसमें कि हरी खाद को डालना होता है) में जाकर मिट्टी में मिला दिया जाता है। इसके लिए करंज सिस्बेनिया, स्पेशिओसा, ग्लिरिसिडिया माकुलाटा आदि पौधे मुख्य रूप से उपयोग में लाए जाते हैं। इस विधि का उपयोग साधारणतया पूर्व तथा मध्य भारत में किया जाता है।

मृदा जल एवं नमी संरक्षण: मृदा कार्बनिक पदार्थ एवं सूक्ष्मजीवों की संख्या अच्छे गुणवत्ता वाले सिंचाई जल का प्रयोग करने से बढ़ता है। मृदा कार्बनिक पदार्थ मृदा में स्थित जल को समुच्चयन के रूप में अधिक समय तक बांधे रखते है। वर्षा के जल को टैंकों में अथवा पुनर्भरण द्वारा भूमि में संचित कर पानी की उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है। ऊंची मेड़ें बनाकर, साधारण जुताई करके तथा प्राकृतिक या कृत्रिम आवरण से भूमि को ढ़ककर खेत में नमी संरक्षित की जा सकती है। इसके अतिरिक्त वैज्ञानिक सस्य क्रियाएं जैसे सूखा सहनशील प्रजातियां, प्रति इकाई भूमि में उचित पादप संख्या, सही समय पर बुआई, संतुलित उर्वरक तथा असमतल भूमि में ड्रिप अथवा स्प्रिंकलर विधि से संचित करके भी भूमि में कार्बनिक पदार्थ को संचित किया जा सकता है।

समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन: रासायनिक उर्वरकों के साथ, गोबर की खाद, हरी खाद आदि जैव उर्वरक जैसे एजोस्पाइरिलम, राइजोबियम, नील हरित शैवाल, फॉस्फोरस घुलनकारी सूक्ष्मजीव तथा वैस्कुलर आरबस्कुलर माइकोराइजा, फंफूद आदि को प्रयोग करने को समेकित पोषक तत्व प्रबंधन कहते है, समेकित पोषक तत्व प्रबंधन के लिए फसल चक्र अपनाना बहुत आवश्यक है। वानस्पतिक आवरण भूमि में जैव कार्बन बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। इससे मृदा में कार्बनिक पदार्थो का घनत्व बढ़ जाता है।

संरक्षित खेती : संरक्षण कृषि के लिए जो भूमि जिस लायक हो वैसे ही उसका उपयोग करना चाहिए अधिक जुताई से मृदा की संरचना बिगड़ जाती है। संरक्षण कृषि अपनाकर मृदा व जल क्षरण को रोका जा सकता है, इसके लिए कुल फसल अवशेष का 30 प्रतिशत भाग को मृदा में पुनः लौटा देना चाहिए जिससे मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ती है। संरक्षण कृषि द्वारा ऑर्गेनिक पदार्थ तथा पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ाकर मृदा की भौतिक स्थिति को सुधारकर जल धारण क्षमता को बढ़ाया जा सकता है। संरक्षण कृषि में उथली जुताई कल्टीवेटर यंत्र से करनी चाहिए जुताई 15 से.मी. से अधिक गहरी नहीं होनी चाहिए ।

कृषि वानिकी एवं लेगयुमिनेशी कुल की फसले उगाना: कृषि वानिकी जिसमें खेती, वृक्ष, फल–फूल का उत्पादन तथा पशुपालन सम्मिलित है। कृषि वानिकी घटती भूमि उपलब्धता तथा प्रति व्यक्ति खाद्य पदार्थ, चारा तथा ईंधन की पूर्ति करने का एक उत्तम विकल्प है। पर्यावरण सरंक्षण, नमी व पोषक तत्वों की उपयोग क्षमता को बढ़ाने हेतु कृषि वानिकी करना बहुत महत्वपूर्ण है इस को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इस प्रकार मृदा वानस्पतिक आवरण से ढ़के रहने के कारण कार्बनिक पदार्थ में लगातार वृद्धि होती रहती है। किसानो को अपने खेत मे वर्ष में एक बार दलहनी कुल की फसल अवश्य लेनी चाहिए। दलहनी फसलों की जड़ों में ग्रन्थियां होती हैं उनमें बैक्टीरिया वायुमंडल से तत्वों का स्थरीकरण करते है मृदा में दलहनी फसलो की पत्तियां गिरने से कार्बनिक पदार्थ में वृद्धि होती हैं।

उपसंहार

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारत की मृदाओ में कार्बनिक पदार्थ एवं सूक्ष्म जीवो की कमी प्रमुख समस्या बनती जा रही है। मृदा कार्बनिक पदार्थ मृदा स्वास्थ्य में सुधार एवं बदलते जलवायु परिदृश्य में मृदा की उर्वरता बनाये रखते है। कार्बनिक पदार्थ से भूमि का पीएच मान सामान्य रहता है। मृदा कार्बनिक पदार्थ अपघटन से कई प्रकार के कार्बनिक अम्ल प्राप्त होते हैं। इससे मृदा में प्रतिरोधी क्षमता बढ़ती है जो कि मृदा की क्षारीयता को कम करती है। भारत में प्राचीन समय में काफी समय तक प्राकृतिक कृषि एवं ऑर्गनिक कृषि की जाती रही है। इससे मृदा स्वास्थ्य के साथ–साथ कार्बनिक पदार्थ में भी वृद्धि होती है। अतः इस प्रकार की कृषि प्रणाली अपनाने वाले कृषकों के तरीकों को अनुसंधान एवं कृषि विभाग का हिस्सा बनाया जाना चाहिए। खेतों में रासायनिक उर्वरकों के उपयोग से मिट्टी की उर्वराशक्ति, भौतिक दशा तथा रासायनिक गुणों एवं मृदा सूक्ष्मजीवो की वृद्धि में कमी आ रही है। मिट्टी की गुणवत्ता और पर्यावरण संतुलन को बनाए रखने के लिए रासायनिक उर्वरकों का संतुलित एवं कार्बनिक खादो का उपयोग किया जाना आवश्यक है भारत के अलग–अलग क्षेत्रों में जलवायु की विभिन्नता के कारण कृषि को परम्पारिक बनाये रखने के लिये मृदा में सूक्ष्म जीव और कार्बनिक पदार्थ बढ़ाने के लिए अलग चुनौतियां हैं। इसके लिए कृषकों के प्रयासों पर कृषि वैज्ञानिक एवं सरकार को गौर करने की आवश्यकता है।

अधिक चारा उत्पादन हेतु चारा फसलों का फसल चक्र प्रबन्धन

भैरु लाल कुम्हार, विजय बहादूर सिंह, कृति स्वर्णकार, नरेन्द्र नटवाडीया एवं विजय कुमार
कृषि अनुसंधान केन्द्र, कोटा, श्री करण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर– जयपुर, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविधालय, रायपुर (छ.ग.)
एवं जवाहरलाल नेहरु कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भारत जैसे विकासशील देशो में कृषि एंव पशुपालन ग्रामीण जीवन का एक अभिन्न हिस्सा है जिससे देश मिश्रित खेती की ओर अग्रसर है। अपौष्टिक चारा व अच्छे चारा संसाधनो की कमी के कारण पशुधन की कम उत्पादकता चिन्ता का विषय है। वर्तमान में बोये गये क्षेत्रो एंव चराई के द्वारा हरे चारे की उपलबधता देश में 1012.7 लाख टन की मांग के विपरीत 826 लाख टन होने का अनुमान है। वर्तमान में भारत में कुल खेती योग्य भूमि के अतिरिक्त चारा फसलो के अन्तर्गत 8.4 मिलियन हेक्टर के आस पास है। जनसंख्या दबाव के कारण भोजन एंव चारा की मांग दिन प्रतिदिन बढती ही जा रही है और देश में खेती योग्य भूमि के उपयोग करने की विभिन्न प्रकारो/माध्यमो के बीच बढती स्पर्धा के कारण अब चारा फसलो के लिए क्षेत्रफल बढाना संभव नही है। पशुओं के लिये आवश्यक मात्रा में चारा देना तभी संभव हो सकता है जब प्रति इकाई भूमि में उत्पादकता बढायी जाये और यह मौजूदा फसल प्रणाली में चारा फसलों के एककीरण द्वारा भी हो सकता है। फसल चक्र या फसल अनुक्रम मिट्टी पानी ओर वातावरण से सम्बन्धित समास्याओं (लम्बी या छोटी अवधि के दृष्टिकोण से) के समाधान में बहुत कारगर साबित हो रहा है। वे उत्पादक जो अपनी फसल प्रणाली व प्रबन्धन के विविध कारण नीति के जागरूक है, अधिक फसल उपजायेगें, उन उत्पादको की अपेक्षा जो फसल प्रणाली व विविधिकरण के जागरूक नही है।

फसल चक्र बहुफसली प्रणाली में प्रयोग की जाने वाली वैकल्पिक रणनीतियां है। इसका अर्थ है फसल उगाने के मौसम का भरपूर उपयोग एंव वातावरणीय संसाधानो का इष्टतम उपयोग करना इस प्रकार प्रति इकाई भूमि में फसल उत्पादन बढाना है। मौजूदा फसल चक्र में चारा फसलों मुख्यतया घास –दलहन का समावेश फसल चक्र की स्थिरता को बढा सकते हैं। ये फसलें भूमि की गहरी परतों से पोषक तत्वों एंव पानी का उपयोग कर सकती है तथा भूमि को क्षरण एंव पोषक तत्वो के ह्रास से सरंक्षित/रक्षा कर सकती है। चारा फसलो के भाग हरी खाद का माल्च के रूप में भी प्रयोग किये जा सकते है। चारा फसलें जैसे ज्वार नेपियर घांस C4 पौधे होने की वजह से इनकी उत्पादक क्षमता दलहनी फसलो से अधिक है। सघन कृषि के कारण मृदा स्वास्थ में भी दिन प्रतिदिन कमी आ रही है। अकार्बनिक उर्वरकों का प्रयोग कम करके ओर अन्तःफसल व फसल चक्र क्रिया में मृदा के सुधार के लिए दलहनो को सम्मिलित करके इन क्रियाओं को बढ़ावा दे सकता है। दलहनो में सहजीवी द्वारा वायुमण्डलीय नाइट्रोजन स्थिर करने की क्षमता होती है। पोषक तत्वो व जल के इष्टतम उपयोग, भूमि कटाव को रोककर, रोग एंव नाशीजीव का जैविक नियन्त्रण एंव मृदा गुणवत्ता में सुधार आदि के सकारात्मक प्रभाव के कारण फसलचक्र, अन्तः फसल मिश्रित फसल ओर स्ट्रिप फसल के द्वारा जैव विविधता को बढाया जा सकता है।

फसल चक्र या शस्य चक्र

भूमि के एक टुकडे पर विभिन्न प्रकार की फसलो को पहले से योजना बनाकर उगाना ही फसल चक्र या शस्य चक्र कहलाता है। इसका सीधा सा अर्थ है कि भूमि के एक ही खेत में विशिष्ट फसलो के क्रम की योजना इसका यह भी अर्थ है कि आने वाली फसल का कुल/परिवार पहली फसल के कुल से भिन्न होगा। योजनाबद्ध फसल चक्र 2–3 वर्ष या इससे अधिक का होता है। फसल चक्र को काफी हद तक एक पुरानी खेती क्रिया माना जाता है।

फसल चक्र का मुख्य उद्देश्य लाभकारी ओर टिकाऊ उत्पादन में योगदान, मिट्टी की उर्वरता व स्वास्थय को बनाये रखना है। फसल चक्र में दलहनी फसलों जैसे लोबिया, ग्वार, राइसबीन, बरसीम व लूसर्न आदि को धान्य फसलों जैसे ज्वार, मक्का, बाजरा, जई व गेहूँ आदि को उगाया जाता है। इन दलहनी फसलो को एकान्तर क्रम में (हेर–फेर कर) अदलहनी फसलों के साथ उगाया जाता है जिसमें भूमि की उर्वरा शक्ति बनी रहती है। सिचिंत परिस्थितियों के अन्तर्गत सघन चारा फसलों के फसल चक्र या अन्तः शस्यन प्रणाली को उच्च चारा गुणवत्ता, उर्वरकों की बचत, संसाधनों के इष्टतम उपयोग के लिए उचित है। कुछ फसलचक्र प्रणाली इस प्रकार है जैसे मिलैट्स आधारित ज्वार् गेहूँ, लोबिया् गेहूँ। धान आधारितः धान–बरसीम, धान–जई। वार्षिक घास आाधारितः नेपियर बाजरा हाईब्रिड/गिनी घास् (लोबिया–बरसीम)।

मौसमी और बहुवर्षीय चारा फसलों को समावेशित करके वर्ष भर हरा चारा प्रदान करने की क्षमता वाले संभावित गहन फसल चक्र विकसित किये गये है। जैसे गिनी घास व संकर नेपियर बाजरा को खरीफ व जायद में लोबिया के साथ व रबी में बरसीम के साथ उगाकर वर्ष भर हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है।

तालिका : 1 भारत के अर्द्धशुष्क क्षेत्रों के लिये सिंचाई पर आधारित चारा फसलों के सघन फसल चक्र

फसल चक्र	हरा चारा उपज (टन/हे. /वर्ष)	शुष्क पदार्थ उपज (टन/हे. /वर्ष)	लाभ लागत अनुपात
नेपियर बाजरा हाइब्रिड़ (लोबिया–बरसीम–सरसों)	273.1	44.3	2.41
ज्वार (बहुकट) – शलजम–जई	190.1	37.4	1.48
ज्वार / लोबिया–बरसीम / सरसों – मक्का / लोबिया	180.5	33.3	1.67
ज्वार (बहुकट) लोबिया–बरसीम / सरसों	172.0	32.3	1.94

(स्रोतः सुनील कुमार व साथी, 2012)

तालिका : 2 भारत के विभिन्न कृषि जलवायु क्षेत्रों के लिए सघन चारा फसल चक्र

फसल चक्र/जलवायु और मृदा	हरे चारे की उपज टन/हे./वर्ष
पहाडी ओर उत्तरी क्षेत्र	
उप–शीतोष्ण,नम, लाल मिट्टी,	
1 . मक्का / लोबिया– लूसर्न / जई–सरसों	85
2 . एन.बी. हाइब्रिड / वालवेटबीन–बरसीम / सरसों	23
तराई, लाल ओर पीली मिट्टी	
1 . मक्का / लोबिया–तोरिया–जई	177
2 . एन.बी. हाइब्रिड़ / बरसीम–लोबिया	121
अर्द्धशुष्क,रेतीली दोमट मृदा	
1 . एन. बी. हाइब्रिड–बरसीम	212
2 . एन. बी. हाइब्रिड–लूर्सन	176
मध्य और पश्चिमी भाग	
अर्द्ध शुष्क लाल मृदा	
1 . एन.बी. हाइब्रिड/लोबिया–बरसीम / सरसों	255
2 ज्वार / लोबिया–बरसीम/ सरसों–मक्का /लोबिया	176
उप–आर्द्र,काली मिट्टी	
1 . एन.बी. हाइब्रिड/ लोबिया–बरसीम	176
2 ज्वार /लोबिया–बरसीम/ सरसों–ज्वार /लोबिया	169
अर्द्धशुष्क काली मिट्टी	
1 . एन.बी. हाइब्रिड /लोबिया–लूसर्न	253
पूर्वी क्षेत्र	
उप आर्द्र, लाला अम्लीय मृदा	
1 . बाजरा /लोबिया–मक्का /लोबिया–जई	103
2 मक्का /लोबिया–ज्वार /लोबिया–बरसीम /सरसों	96
उप–आर्द्र, एल्यूवियल मृदा	
1 . मक्का /लोबिया–दीनानाथ घास–जई	131
2 मक्का /राइसबीन–बरसीम /सरसों	112
आर्द्र, अम्लीय मृदा	
1 . एन.बी. हाइब्रिड (बहुवार्षिक)	106
2 मक्का /लोबिया–मक्का/ लोबिया–मक्का /लोबिया	85
दक्षिण भाग उप–आर्द्र,काली मिट्टी	
1 . एन.बी. हाइब्रिड /लूसर्न	225
2 ज्वार /लोबिया–मक्का /लोबिया–मक्का /लोबिया	111
आर्द्र, लाल मिट्टी	
1 . नारियल बागानों में गिनी घास	135
2 नारियल बागानों में कोगों सिगनल घास	75

(स्रोतः सुनील कुमार व साथी, 2012)

फसल चक्र के लाभ : मृदा उर्वरता में सुधार लगातार खेत में एक फसल उगाने से भूमि में पोषक तत्वों की कमी हो जाती है। फसल चक्र में विभिन्न पोषक तत्वों की आवश्यकता वाली फसलों को हेर–फेर कर बौने से मृदा उर्वरता में सुधार होता है इससे किसी एक विशेष तत्व की कमी को रोका जा सकेगा। दलहनी पौधे जिनमें कि वायुमण्डलीय नाईट्रोजन राजोवियम के सहचर्य से स्थिरिकरण करने की योग्यता होती है मृदा उर्वरता को सुधारते है।

मृदा गुणवत्ता में सुधार : फसल चक्र से मृदा गुणवत्ता में भी सुधार होता है (उथली या गहरी जड़े, जड़ स्राव) मृदा प्रोफाईल में पोषक तत्वों को उचित वितरण/फैलाव (गहरी जड़े वाली फसले गहराई से पोषक तत्वों को उपरी परत में ले आती है) और जैविक क्रियाओं को बढाती है।

मृदा संरचना व कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में सुधार : गहरी व उथली जड़ों वाली फसलों को हेर–फेर कर बोने से मृदा को विभक्त करता है ओर यह फ्लो पान के प्रभावकों कम करता है। अरहर सोयाबीन व दूसरी दलहनी फसलों के उगाने से उनके अवशेष उचित मात्रा में मिट्टी में मिल जाते हैं क्योंकि इनकी पत्तियाँ भूमि पर झड़ती हैं व पौधों के कुछ भाग भी मृदा में रह जाते हैं जिसकी हरी खाद से मृदा में उचित मात्रा में कार्बनिक पदार्थ मिल जाता है।

खरपतवारों का अच्छा नियन्त्रण : फसल चक्र के अपनाने से किसी खरपवार की जाति का विकास अवश्य होता है खरपतवारों की बढवार कम हो जाती है जब कवर फसल या हरी खाद वाली फसल को फसल चक्र के घटक के रूप में अपनाते हैं।

नाशीजीवों व रोगों का नियन्त्रण : फसल चक्र कीड़े मकोड़ों व रोगों को नियंत्रित करने का बहुत प्रभावी माध्यम होता है जब नाशीजीव फसल बोने से पहले उपस्थित हो व परपोशी फसल की अधिकता न हो, जब ये केवल वार्षिक/द्विवार्षिक फसलों पर ही आक्रमण करते हों ओर उनमें एक खेत से दूसरे खेत में उड़कर पहुँचने की क्षमता न हो। यद्यपि फसल चक्र में विभिन्न फसलों से सामान्यतः कीटों व नाशीजीवों के नियन्त्रण करने के अच्छे परिणाम मिलते हैं तथापि यह भी सम्भव है कि एक ही कि प्रजातियों जिनमें अलग अलग कीटों व रोगों की प्रतिरोधी क्षमता विभिन्न होती है, को भी फसल चक्र में एक उचित अन्तराल के बाद अपनाते रहना चाहिए।

उत्पादन व प्रक्षेत्र में बढोत्तरी : एकल फसल प्रणाली की अपेक्षा फसल चक्र अपनाने से उत्पादन व लाभ में बढोत्तरी होती है।

श्रमिकों का समान वितरण : फसल चक्र अपनाने से श्रमिकों का पूरे वर्ष समान वितरण बना रहता है क्योंकि फसल चक्र में बोयी गयी विभिन्न फसलों की बुवाई, कटाई व कर्षण क्रियाएं इत्यादि अलग अलग समय पर होती है।

निष्कर्ष : वर्तमान में चल रही खाद्य व चारा फसलों पर आधारित फसल प्रणाली जो कि सिंचित व वर्षा आधारित क्षेत्रों में चल रही है, मे चारा फसलों का समावेश फसल चक्र के रूप में इष्टतम लागत प्रबंधन करके किया जा सकता है, इसीलिये प्रति यूनिट भू क्षेत्र से गुणवत्तायुक्त चारे का उत्पादन बढाने, मृदा गुणवत्ता बढाने और किसानों को लाभ पहुँचाने के लिये अच्छी विचारधारा/रणनीति है।

फसल उत्पादन के लिए मृदा सूक्ष्मजीव समुदायों की संरचना एवं विविधता का आंकलन

डूंगर आर. चौधरी, अविनाश मिश्रा एवं मंगल सिंह राठौड़
केंद्रीय नमक व समुद्री रसायन अनुसंधान संस्थान, भावनगर 364 002 (गुजरात)

मृदा की माइक्रोबियल विशेषताओं का मूल्यांकन मृदा स्वास्थ्य के संवेदनशील संकेतकों के रूप में किया जाता है, क्योंकि माइक्रोबियल विविधता का संबध मृदा और पौधों की गुणवत्ता और पारिस्थितिक स्थिरता तंत्र के साथ हैं। मृदा के स्वास्थ्य में योगदान करने वाले कारकों के ज्ञान को आगे बढ़ाने के लिए जैवभार, सूक्ष्म जीव गतिविधि और विविधता जैसे गुणों की समझ वैज्ञानिकों के लिए महत्वपूर्ण है, इस तरह के विश्लेषण मृदा की गुणवत्ता के व्यावहारिक उपायों को विकसित करने में कर्मियों और किसानों के लिए उपयोगी हो सकते हैं। मृदा के माइक्रोबियल गुणों का अध्ययन आमतौर पर प्रक्रिया स्तर पर किया गया है, जहां बायोमास, श्वसन दर और एंजाइम गतिविधियों की जांच की जाती है। मृदा के गुणों या प्रबंधन में परिवर्तन के लिए सामुदायिक स्तर या जीव–स्तर की प्रतिक्रियाओं पर कम ध्यान दिया गया है। हालांकि ये प्रक्रियाये सकल माइक्रोबियल प्रक्रियाओं और मृदा के स्वास्थ्य में उनकी संभावित भूमिका में एक महत्वपूर्ण समझ प्रदान करते हैं। मृदा जीवाणु और कवक विभिन्न जैव रासायनिक चक्रों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और कार्बनिक यौगिकों के चक्रण के लिए जिम्मेदार होते हैं। मृदा के सूक्ष्मजीव, पौधों के पोषण, पौधों के स्वास्थ्य, मृदा की संरचना और मृदा की उर्वरता में योगदान देकर जमीन के ऊपर के परिस्थिति की तंत्र को भी प्रभावित करते हैं। जबकि कई मानव जनित गतिविधियाँ, जैसे शहर का विकास, कृषि, कीटनाशकों का उपयोग और प्रदूषण संभावित रूप से मृदा में माइक्रोबियल विविधता को प्रभावित कर सकते हैं। माइक्रोबियल विविधता में परिवर्तन जमीन के नीचे व ऊपर की परिस्थिति की तंत्र को कैसे प्रभावित कर सकता है,इसकी क्रिया विधि अभी तक अपूर्ण रूप से ज्ञात है।

विभिन्न वातावरणों में मौजूद अधिकांश सूक्ष्मजीवों को वर्तमान तकनीकों द्वारा आसानी से संवर्धित नहीं की जा सकता है, इसलिए उनको अधिकांश विश्लेषणों में शामिल नहीं किया जाता है। वर्तमान अनुमानों से पता चलता है कि विभिन्न वातावरणों में मौजूद 1% से भी कम सूक्ष्मजीव आसानी से संवर्धित होते हैं, इस प्रकार के परिणाम यह दर्शाते है कि प्रयोगशाला संवर्धन पर आधारित कई तकनीकें काफी पक्षपाती हो सकती हैं। प्रयोगशाला में सूक्ष्मजीव संवर्धन से जुड़ी कई कठिनाइयों और सीमाओं को दूर करने के लिए, विभिन्न तकनीकों का विकास किया गया है जो सूक्ष्म जीव संवर्धन के अतिरिक्त हैं और पर्यावरण के नमूनों से न्यूक्लिक एसिड या फैटी एसिड जैसे संकेतक अणुओं के प्रत्यक्ष निष्कर्षण पर आधारित हैं।

मृदा के सूक्ष्मजीव समुदायों की संरचना में मात्रात्मक और गुणात्मक परिवर्तन, मृदा के स्वास्थ्य में छोटे और दीर्घकालिक परिवर्तन दोनों के मूल्यांकन में महत्वपूर्ण और संवेदनशील संकेतक के रूप में कार्य कर सकते हैं। मृदा माइक्रोबियल समुदायों के विश्लेषण में न केवल माइक्रोबियल बायोमास और विविधता के निर्धारण शामिल हैं, बल्कि माइक्रोबियल विकास, वितरण, फंक्शन और यदि संभव हो तो, प्रजातियों के बीच बातचीत की प्रकृति का निर्धारण भी शामिल होना चाहिए।

मृदा के सूक्ष्मजीव समुदायों का विश्लेषण करने का दृष्टिकोण प्रभावशाली रूप से बदल गया है। कई नए तरीके और दृष्टिकोण अब उपलब्ध हैं, जिससे मृदा के सूक्ष्म–जीव वैज्ञानिक मृदा में रहने वाले सूक्ष्म जीवों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त कर सकते हैं और माइक्रोबियल विविधता का बेहतर आंकलन कर सकते हैं। इस समीक्षा में, हम मृदा के सूक्ष्मजीव समुदायों के अध्ययन के लिए कुछ और महत्वपूर्ण दृष्टिकोणों पर संक्षेप में चर्चा करेंगे।

मृदा में सूक्ष्मजीव समुदाय और विविधता का अध्ययन करने के तरीके

प्रजातियों की विविधता में प्रजातियों की समृद्धि होती है, प्रजातियों की कुल संख्या, प्रजातियों की समता और प्रजातियों का वितरण होता है। मृदा में सूक्ष्म–जीवविविधता को मापने के तरीकों को दो समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है। संवर्धन आधारित तरीके और आणविक– आधारित तकनीकों।

सूक्ष्म–जीव समुदाय विश्लेषण के संवर्धन–आधारित तरीके : नीचे वर्णित अधिकांश तरीकों का उपयोग बैक्टीरिया या कवक के लिए किया जा सकता है, हालांकि कुछ एक या दूसरे के लिए विशिष्ट भी होते हैं।

मंदन प्लेट संवर्धन के तरीक : परंपरागत रूप से मृदा के सूक्ष्मजीव समुदायों के विश्लेषण ने विभिन्न माइक्रोबियल प्रजातियों की वसूली को अधिकतम करने के लिए डिजाइन किए गए विभिन्न प्रकार के संवर्धन मीडिया का उपयोग करते हुए संवर्धित तकनीकों पर भरोसा किया है। ये विधियां तेज और सस्ती हैं और जनसंख्या के सक्रिय, विषम घटकों के बारे में जानकारी प्रदान कर सकती हैं। मृदा जीवाणुओं के स्पोर या बायोफिल्मों से बैक्टीरिया या जीवाणुओं को नष्ट करने में कठिनाई, मीडिया के चयन, वातावरण कारक (तापमान, पीएच, प्रकाश), वर्तमान तकनीकों के साथ बड़ी संख्या में बैक्टीरिया और कवक प्रजातियों की संवर्धन में असमर्थता ईत्यादि इस तरीके की सीमाएं है। इसके अलावा,

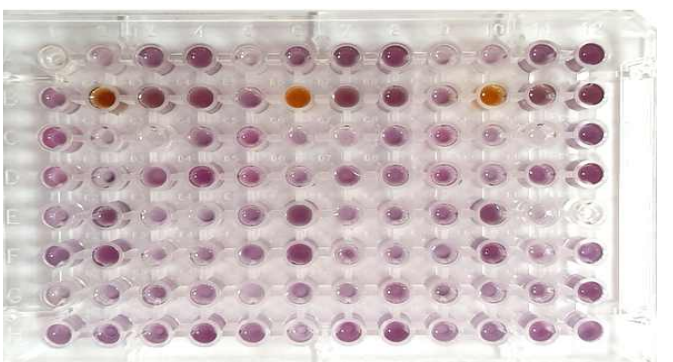

चित्र 1. विभिन्न कार्बन स्रोतों के साथ बायोलोग प्लेट।

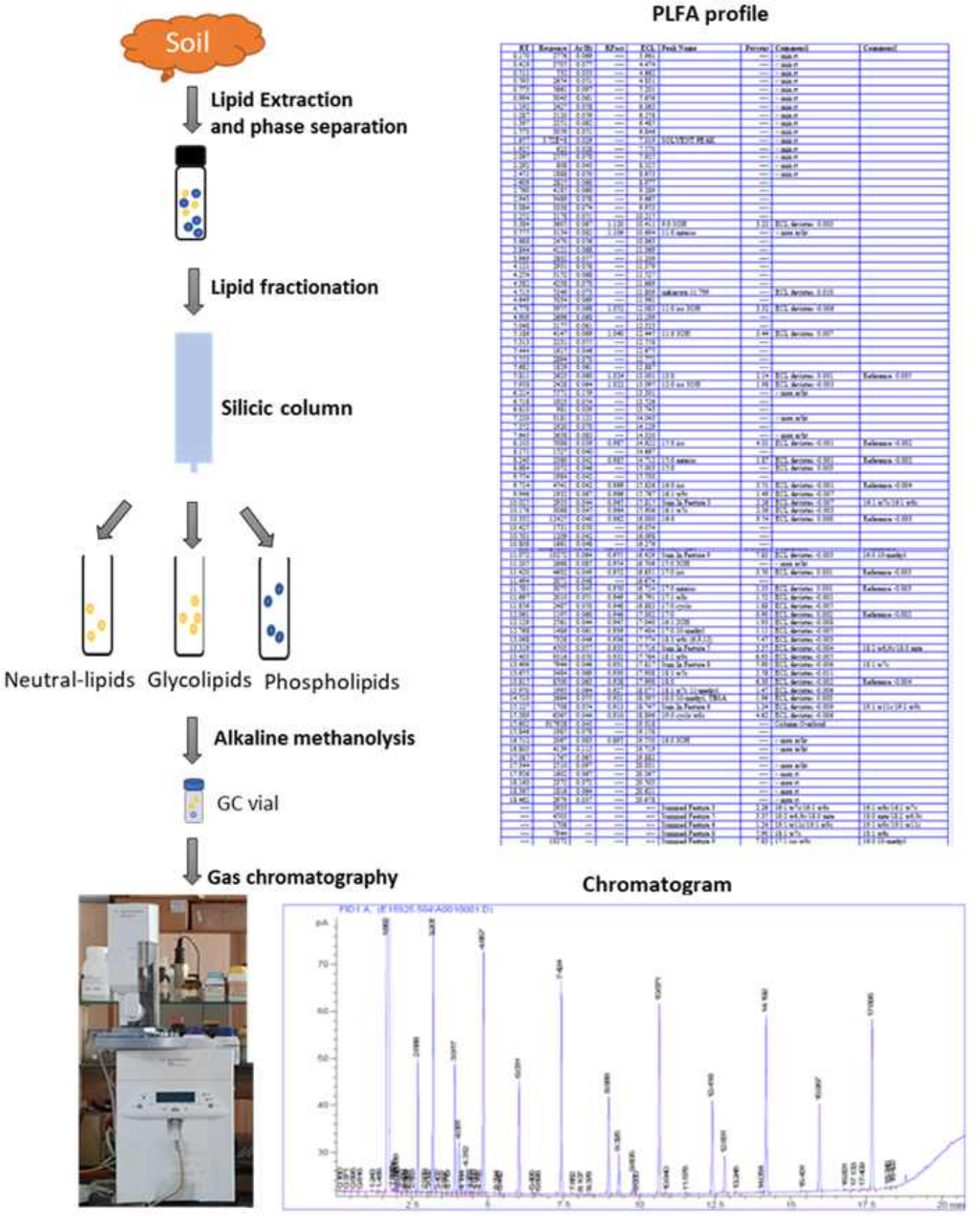

चित्र 2.मृदा में सूक्ष्मजीव समुदाय के फॉस्फोलिपिड फैटी एसिड विश्लेषण।

मंदन प्लेट तकनीक से अधिक विकास दर वाले जीवाणुओ के अनुकूल है जो बड़ी संख्या में बीजाणु पैदा करते हैं। ये सभी सीमाएँ माइक्रोबियल समुदाय की स्पष्ट विविधता को प्रभावित कर सकती।

एकमात्र कार्बन स्रोत उपयोग पैटर्न / सामुदायिक–स्तरीय शारीरिक प्रोफाइल : मृदा के सूक्ष्मजीव समुदायों के विश्लेषण के लिए अधिक व्यापक रूप से उपयोग किए जाने वाले संवर्धन–निर्भर तरीकों में से एक समुदाय–स्तरीय शारीरिक प्रोफाइल है। गारलैंड एंड मिल्स (1991) ने एक तकनीक विकसित की जिसमें एकमात्र स्रोत कार्बन उपयोग पैटर्न के माध्यम से बैक्टीरिया की आबादी की संभावित कार्यात्मक विविधता का आकलन करने के लिए व्यावसायिक रूप से उपलब्ध 96–कूप माइक्रो–टाइटर प्लेट का उपयोग किया जाता है। उपलब्ध बायोलोग की प्रत्येक प्लेट में विभिन्न कार्बन स्रोत होते हैं और एक कूप सब्सट्रेट के बिना होता है। इसके बाद, बायोलोग मे 31 अलग–अलग पर्यावरणीय प्रासंगिक कार्बन स्रोतों के 3 प्रतिकृति वाले होते है (चित्र 1)। इस विधि में टेट्राजोलियम लवण रंग बदलता है क्योंकि सब्सट्रेट को उपापचय किया जाता है। सब्सट्रेट का उपयोग करने की क्षमता और इन सबस्ट्रेट्स का उपयोग करने की गति के लिए समय–समय पर जीवाणुओ की आबादी पर नजर रखी जाती है। बहुभिन्नरूपी विश्लेषण multi variable analysis) किया जाता है और मृदा के कार्यात्मक विविधता के बीच सापेक्ष अंतर का आकलन किया जाता है। मृदा में माइक्रोबियल समुदायों की संभावित उपापचय विविधता का आकलन करने के लिए इस पद्धति का सफलतापूर्वक उपयोग किया गया है। समुदायों की विशेषताओं को दर्शाते हुए बड़ी मात्रा में आँकड़ो का उपयोग, प्रजनन और जीवाणुओं की कार्य पद्धति को जानने में किया जाता है। उपापचय प्रोफाइलिंग की सीमाएं हैं। प्रयोगात्मक स्थितियों में बढ़ने में सक्षम केवल संवर्धन सूक्ष्मजीवों के लिए तरीके, तेजी से बढ़ते सूक्ष्मजीवों के पक्ष में हैं, संवेदनशील इनोकुलम के लिए है, घनत्व और क्षमता को दर्शाता है और उपापचय की विविधता।

सामुदायिक विश्लेषण / आणविक–आधारित तकनीकों की संवर्धन स्वतंत्र विधियाँ : संवर्धन–आधारित विधियों की अंतर्निहित सीमाओं के कारण, मृदा के सूक्ष्म जीव वैज्ञानिक सामुदायिक विश्लेषण के संवर्धन–स्वतंत्र तरीकों की ओर तेजी से बढ़ रहे हैं। संवर्धन–स्वतंत्र तरीकों का उपयोग करते हुए, समुदायों की संरचना का आधार (1) मृदा से अणुओं की निकासी, मात्रा का ठहराव और पहचान की जा सकती है जो कुछ सूक्ष्मजीवों या सूक्ष्मजीव समूहों के लिए विशिष्ट हैं या (2) उन्नत प्रतिदीप्ति सूक्ष्मदर्शी तकनीक।

फैटी एसिड मिथाइल एस्टर (FAME) विश्लेषण / फॉस्फोलिपिड फैटी एसिड विश्लेषण : एक जैव रासायनिक विधि जो सूक्ष्मजीवों के संवर्धन पर निर्भर नहीं करती है, वह फैटी एसिड मिथाइल एस्टर (FAME) विश्लेषण (चित्र 2) है। फॉस्फोलिपिड फैटी एसिड सभी जीवित कोशिकाओं में उनकी उपस्थिति के कारण संभावित उपयोगी संकेतिक अणु हैं। सूक्ष्मजीवों में, फॉस्फोलिपिड विशेष रूप से कोशिका झिल्ली में पाए जाते हैं और भंडारण उत्पादों के रूप में कोशिका के अन्य भागों में नहीं होते हैं। यह महत्वपूर्ण है क्योंकि कोशिका झिल्ली का तेजी से क्षरण होता है और घटक फॉस्फोलिपिड फैटी एसिड कोशिका की मृत्यु के बाद तेजी से उपापचय होता है। नतीजन, फॉस्फोलिपिड सक्रिय माइक्रोबियल बायोमास के महत्वपूर्ण संकेतक के रूप में काम कर सकते हैं, जो कि मृत माइक्रोबियल बायोमास के विपरीत हैं। यह विधि फैटी एसिड के समूह के आधार पर माइक्रोबियल समुदाय संरचना के बारे में जानकारी प्रदान करती है। फैटी एसिड कोशिका बायोमास का एक अपेक्षाकृत निरंतर अनुपात बनाते हैं और संकेतक फैटी एसिड मौजूद होते हैं जो एक समुदाय के भीतर प्रमुख वर्गीकरण समूहों को अलग कर सकते हैं। इसलिए, फैटी एसिड प्रोफाइल में बदलाव माइक्रोबियल आबादी (जलेस, 1999) में बदलाव का प्रतिनिधित्व करेगा। फैटी एसिड को मृदा से सीधे निकाला जाता है, गैस क्रोमैटोग्राफी द्वारा मेथिलीकरण के बाद विश्लेषण किया जाता है। बहुभिन्नरूपी विश्लेषण का उपयोग करके विभिन्न मृदा के FAME प्रोफाइल की तुलना की जा सकती है। कवक के लिए संकेतक फैटी एसिडः 18: 2, 96, 9; ग्राम–नकारात्मक बैक्टीरियाः साइबर 17: 0] साइबर 19% É50,16: 1 ,7, 16: 1, 18: 1 :7, 17: 1ω9; ग्राम पॉजिटिव बैक्टीरियाः i15: 0, a15: 0, i16: 0, a16: 0, i17: 0, a17: 0; और एक्टिनोमाइसिटीज : 10M16: 0, 10Me17: 0, 10Me18: 0।

न्यूक्लिक एसिड तकनीक : आज तक सभी कोशिका घटक अणुओं में, न्यूक्लिक एसिड माइक्रोबियल समुदायों की संरचना की एक नई समझ प्रदान करने में सबसे उपयोगी रहे हैं। आणविक माइक्रोबियल विविधता का अध्ययन करने के लिए कई दृष्टिकोण विकसित किए गए हैं (चित्र 3)। इनमें डीएनए पुनर्संयोजन, डीएनए–डीएनए और mRNA: डीएनए संकरण, डीएनए क्लोनिंग और अनुक्रमण, और अन्य पीसीआर–आधारित विधियां जैसे कि ग्रेडिएंट जेल वैद्युतकणसंचलन (DGGE), तापमान ढाल जेल वैद्युतकणसंचलन (TGGE), राइबोसोमल इंटरजेनिक स्पेसर विश्लेषण (RISA) और स्वचालित राइबोसोमल इंटरजेनिक स्पेसर विश्लेषण (ARISA) शामिल हैं।

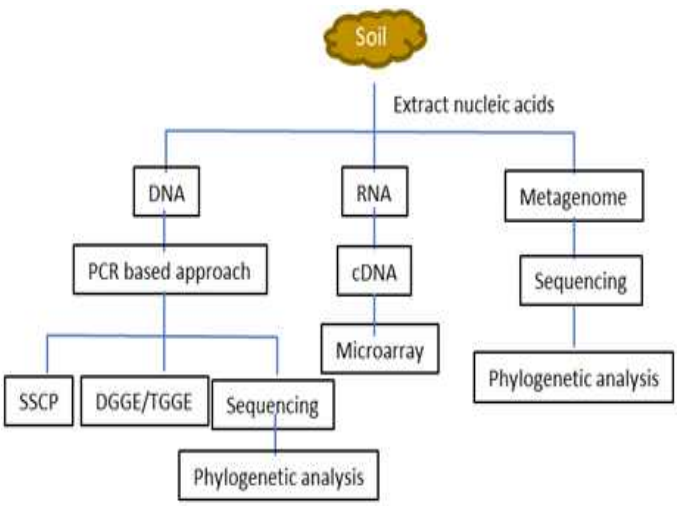

चित्र 3. न्यूक्लिक एसिड तकनीक द्वारा मृदा में सूक्ष्मजीव समुदाय का अध्ययन।

न्यूक्लिक एसिड पुनरू पृथक्करण और संकरण : डीएनए पुनर्संयोजन माइक्रोबियल समुदाय की आनुवंशिक जटिलता का एक उपाय है और इसका उपयोग विविधता का अनुमान लगाने के लिए किया गया है। कुल डीएनए को पर्यावरणीय नमूनों से निकाला जाता है, शुद्ध किया जाता है, विकृत किया जाता है और पुनर्संयोजन करने की अनुमति दी जाती है। संकरण की दर या पुनर्मूल्यांकन वर्तमान अनुक्रमों की समानता पर निर्भर करेगा। जैसे–जैसे डीएनए अनुक्रमों की जटिलता या विविधता बढ़ती जाती है, जिस दर पर डीएनए पुर्नजागरण में कमी आएगी। विशिष्ट परिस्थितियों में, डीएनए के आधे हिस्से को पुनःमूल्यांकन के लिए लगने वाले समय का उपयोग विविधता सूचकांक के रूप में किया जा सकता है, क्योंकि यह डीएनए पुनःमूल्यांकन की मात्रा और वितरण दोनों को ध्यान में रखता है। वैकल्पिक रूप से, संकरण काईनेटिक्स के माध्यम से डीएनए की समानता की डिग्री को मापकर दो अलग–अलग नमूनों के समुदायों के बीच समानता का अध्ययन किया जा सकता है।

विशिष्ट जांच का उपयोग करते हुए न्यूक्लिक एसिड संकरण आणविक–जीवाणु पारिस्थितिकी में एक महत्वपूर्ण गुणात्मक और मात्रात्मक विधि है। ये संकरण तकनीक डीएनए या आरएनए के रस, या इन–सीटू पर की जा सकती है। ओलिगोन्यूक्लियोटाइड या पॉली न्यूक्लियोटाइड जांच को डोमेन से प्रजातियों की विशिष्टता में ज्ञात अनुक्रमों से डिजाइन किया गया है, 5′–सिरे पर मार्करों के साथ टैग किया जा सकता है। आमतौर पर इस्तेमाल किए जाने वाले फ्लोरोसेंट मार्करों में फ्लोरेसिन या रोडामाइसीन के यौगिक शामिल हैं। मात्रात्मक डॉटब्लोट संकरण का उपयोग सूक्ष्मजीवों के एक निश्चित समूह के सापेक्ष बहुतायत को मापने के लिए किया जाता है।

डीएनए माइक्रोएरे : यह विधि बैक्टीरिया की विविधता के अध्ययन में मूल्यवान हो सकती है क्योंकि इसके द्वारा एक ही समय में उच्च विशिष्टता के साथ हजारों डीएनए अनुक्रमका विश्लेषण हो सकता है। माइक्रोएरे में कार्यात्मक विविधता की जानकारी प्रदान करने के लिए या तो विशिष्ट लक्ष्य जीन जैसे नाइट्रेट रिडक्टेस, नाइट्रोजनेज या नेफ्थलीन डाइओक्सीनेज का उपयोग कर सकते है या पर्यावरण के एक नमूने को उपयोग में ला सकते है।

पीसीआर–आधारित दृष्टिकोण : 16S rDNA) को लक्षित करने वाले पीसीआर का उपयोग प्रोकैरियोट विविधता का अध्ययन करने के लिए बड़े पैमाने पर किया गया है और प्रोकैरियोट्स की पहचान के साथ–साथ फाइलोनेटिक संबंधों की भविष्यवाणी की अनुमति देता है। 18S rDNA और आंतरिक संचरित स्पेसर (ITS) क्षेत्रों का उपयोग कवक समुदायों का अध्ययन करने के लिए किया जाता है। डीएनए को पर्यावरण के नमूने से निकाला जाता है और शुद्ध किया जाता है। लक्ष्य डीएनए (16S, 18S या ITS) को सार्वभौमिक या विशिष्ट प्राइमरों का उपयोग करके प्रवर्धित किया जाता है और परिणामी उत्पादों का अलग–अलग तरीकों से विश्लेषण किया जाता है।

डीनचरिंग ग्रैडिएंट जेल वैद्युतकण संचलन (DGGE)/तापमान ग्रैडिएंट जेल वैद्युतकण संचलन : सभी फिंगर प्रिंटिंग तकनीकों में, DGGE और TGGE संभवतः सबसे अधिक उपयोग किए जाते हैं, हालाँकि टर्मिनल प्रतिबंध लंबाई बहुरूपता (T&RFLP) भी एक लोकप्रिय तकनीक है। पहले बताई गई SSCP तकनीक, वर्तमान में कम लोकप्रिय है। DGGE / TGGE (टी–आरएफएलपी और एसएससीपी की तरह) डीएनए अलगाव और पीसीआर से पहले है, इन नमूनो के प्रसंस्करण चरणों में पेश किए गए पूर्वाग्रह को अंतिम विश्लेषण और बाद की व्याख्याओं में ध्यान में रखा जाना चाहिए। DGGE और TGGE में, पीसीआर द्वारा उत्पन्न समान आकार के एम्पलीकॉन को उनके न्यूक्लियोटाइड अनुक्रमों में अंतर के आधार पर अलग किया जाता है। इसके लिए, डीजीजीई और टीजीजीई के लिए एक डीनेट्रेटिंग या एक तापमान ढाल के साथ एक पॉलीक्रैलेमाइड जेल क्रमशः का उपयोग किया जाता है। तकनीक (TGGE) को मूल रूप से म्यूटेशन डिटेक्शन के लिए विकसित किया गया है। नब्बे के दशक के बाद से, DGGE और TGGE दोनों तकनीकों को बड़े पैमाने पर माइक्रोबियल समुदाय विश्लेषण के लिए उपयोग किया गया है। DGGE / TGGE फाइलोजेनेटिक मार्करों पर आधारित हो सकता है, जबकि 16S / 18S rRN। जीन या कार्यात्मक जीन मार्कर पर आधारित है।

सिंगल स्ट्रैंड कंन्फॉर्मेशन पॉलीमॉर्फिज्म : SSCP सिंगल–फंसे हुए डीएनए अणुओं (पीसीआर के माध्यम से उत्पन्न और बाद में पिघलने के बाद आंशिक रूप से रीइनलिंग) द्वारा अलग–अलग अनुरूपणों के पृथक्करण पर आधारित है, जो 16S rRN। जीन के अनुक्रम द्वारा निर्धारित होता है। टी–आरएफएलपी में, टुकड़ों का पृथक्करण टर्मिनल प्रतिबंध के टुकड़े की लंबाई पर आधारित होता है, जिसे जेल इलेक्ट्रोफोरेसिस के माध्यम से अलग किया जाता है और टुकड़े के 5′ या 3′ (या दोनों सिरे) पर एक फ्लोरोसेंट लेबल के माध्यम से पता लगाया जाता है। हाल के एक अध्ययन में, DGGE] T&RFLP और SSCP का उपयोग करके चार अलग–अलग मृदा के प्रकारों का विश्लेषण किया गया। दिलचस्प बात यह है कि भले ही तीन तकनीकों में से एक का उपयोग किया गया था, जिसके परिणामस्वरूप फिंगरप्रिंट मृदा के रसायनिक–भौतिक गुणों के साथ संबंधित थे। दूसरे शब्दों में, तीनों तकनीकें अलग–अलग मृदा को एक समान तरीके से अध्ययन करने में सक्षम थीं।

मेटाजीनोमिक्स और क्लोन लाइब्रेरी : फिंगर प्रिंटिंग तकनीकों पर आधारित विश्लेषण अक्सर क्लोन लाइब्रेरीज के आधार पर उन लोगों के साथ होते हैं या उनकी जगह लेते हैं। इनमें, 16S (या 18S) rRN। जीन विशिष्ट PCR को मृदा डीएनए पर चलाया जाता है, जिसके बाद समान आकार के PCR अंशों को एक वेक्टर प्लाज्मिड में जोड़ करके और बाद में उन्हें परिवर्तन द्वारा ई। कोलाई में लाकर अलग किया जाता है। एकल कॉलोनियों के संवर्धन के बाद, क्लोन पीसीआर टुकड़े को अनुक्रमित और उनका विश्लेषण किया जा सकता है। क्लोन पुस्तकालयों के विश्लेषण से प्राप्त अनुक्रमों को अक्सर डेंड्रॉग्राम (phylogenetic tree) का उपयोग करके दिखाया जाता है, जिसमें सभी अनुक्रमों के विकास की दूरी की गणना और कल्पना की जाती है। उपयोग किए गए प्राइमर सेट के आधार पर, फाइलोजेनेटिक ट्री में व्यापक रूप से प्रवर्धित आरएनए जीन या विशिष्ट उपसमूह के टुकड़े शामिल किए जाते हैं। इसके अलावा, कार्यात्मक जीनों के क्लोन पुस्तकालयों को फाइलोजेनेटिक ट्री में प्रस्तुत किया जा सकता है।

एसआईपी–स्थिर आइसोटोप जांच : मृदा में सूक्ष्मजीवों के चयापचय नेटवर्क को जोड़ने और एक विशिष्ट सब्सट्रेट का उपयोग करने वाले जीवों को चिह्नित करने के लिए एक दृष्टिकोण स्थिर आइसोटोप जांच (एसआईपी) है। स्थिर (भारी) समस्थानिक, आमतौर पर 13C को अणुओं में शामिल किया जाता है, जिसका प्रभाव मृदा के सूक्ष्मजीव समुदाय पर पड़ता है। उदाहरण के लिए, जब पौधे के यौगिकों को 13C के साथ लेबल किया जाता है, और लेबल मृदा या राइजोस्फीयर प्रक्रियाओं का पालन करता है, जो मृदा में पनपने वाले जीवाणु प्रजातियों के न्यूक्लिक एसिड में पाए जाते हैं, तो हमारे पास सबूत हैं कि संबंधित प्रजाति यौगिक का एक सक्रिय उपयोगकर्ता थी । भारी कार्बन परमाणुओं के गंतव्य को इस तरह डीएनए, आरएनए जैसे सेलुलर मैक्रोमॉलेक्यूल में ट्रैक किया जाता है। सक्रिय रोगाणुओं, जो विशेष रूप से भारी परमाणुओं को शामिल करते हैं, उनका विश्लेषण इस विधि द्वारा किया जा सकता है। स्थिर आइसोटोप (डीएनए / आरएनए) की ट्रैकिंग अंशांकन और पहचान तकनीकों की एक सीमा का उपयोग करती है। विशिष्ट जीनों (जैसे, 1 6एस आरएनएजीन) को पीसीआर, क्लोन और अनुक्रम द्वारा प्रवर्धित किया जा सकता है।

❋❋❋

जैविक खेती: स्वस्थ जीवन एवं टिकाऊ उत्पादन का आधार

पप्पू खटीक, सुभाष असवाल, सुनिल कुमार, डी.के. सिंह, टी.सी. वर्मा व के.सी. मीना

कृषि विज्ञान केन्द, अन्ता (बारां)

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जिसकी आधी से ज्यादा आबादी कृषि पर निर्भर हैं। हमारे देश की अर्थव्यवस्था में कृषि का विशेष योगदान है। लेकिन कृषि की बढ़ती लागत और घटते उत्पादन से कृषि आज तक लाभ का धंधा नही बन सकी हैं। यह तथ्य किसी से छिपा नही कि हरित क्रान्ति ने यद्यपि देश को खाद्यान की दिशा में आत्मनिर्भर बनया लेकिन इसके दूसरे पहलू पर यदि गौर करे तो यह भी वास्तविकता है कि खेती में अंधाधुध उर्वरकों के उपयोग से जल स्तर मे गिरावट के साथ–साथ मृदा की उर्वरा शक्ति भी प्रभावित हुई है और एक समय बाद खाद्यान उत्पादन न केवल स्थिर हो गया बल्कि प्रदूषण में भी बढ़ोतरी हुई है और स्वास्थ्य के लिए भी गंभीर खतरा पैदा हुआ हैं।

आधुनिक एवं सघन कृषि में संकर किस्मों, रासायनिक उर्वरको, नई तकनीकों व मशीनीकरण को प्रोत्साहित किया जा रहा हैं। रासायनिक उर्वरको जैसे यूरिया, डी.ए.पी., पेस्टीसाइड का अत्यधिक उपयोग करने से मिट्टी की स्वाभाविक उर्वरा शक्ति में कमी होती जा रही है। रासायनिक उर्वरको के असन्तुलित प्रयोग एवं जैविक खादों के नगण्य उपयोग के कारण भूमि में गौण एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी होने से न केवल फसलों की पैदावार में गिरावट आयी हैं। बल्कि विभिन्न कृषि उत्पादों की गुणवत्ता पर भी विपरीत प्रभाव पड़ा। इन रसायनों का दुष्प्रभाव मनुष्यों और पशुओ पर भी देखा जा रहा हैं। खाद्य पदार्थो में भारी तत्वों की मात्रा अनुपात से अधिक बढ़ गयी हैं। गांवो, कस्बो का जलाशय इन रसायनों द्वारा प्रदूषित हुआ जिससे पालतू जानवरों के साथ जलीय पौंधों एवं जीवों को प्रभावित करते हुये खाद्य श्रृंखला के माध्यम से मनुष्यों में पहुंच कर अनेक व्याधियों को जन्म दे रहा हैं। यह समस्या सब्जियों में और भी गंभीर है क्योंकि रासायनिक उर्वरको एवं कृषि रक्षा रसायनों के अंधाधुध प्रयोग से वातावरणीय प्रदूषण की समस्या बढ़ती जा रही हैं। इन परिस्थियों में जैविक खेती वह आधार हैं जहाँ कृषि में कम लागत से लगातार उत्पादन बढ़ाया जा सकता हैं तथा मृदा स्वास्थ्य एवं वातावरणीय प्रदूषण की समस्या को कम करके मनुष्य की पोषण सुरक्षा सुनिश्चित की जा सकती हैं।

जैविक खेती : जैविक खेती फसल उत्पादन की वह पद्धति हैं जिसमें रासायनिक उत्पाद जैसे रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक, फँफूदीनाशक, खरपतवारनाशी, वृद्धि नियामक आदि का प्रयोग न करके जैविक पदार्थ जैसे पशुओं की खाद, जैव उर्वरक, हरी खाद, जैविक कीटनाशक एवं फसल चक्र आदि के प्रयोग पर निर्भर रहते हैं। जैविक खेती का मुख्य उद्देश्य मृदा व मनुष्य के स्वास्थ्य एवं पर्यावरण को ध्यान में रखते हुये फसलों का टिकाऊ उत्पादन प्राप्त करना।

जैविक खेती की आवश्यकता: कृषि के वर्तमान परिपेक्ष में जैविक खेती की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से अधिक होती जा रही हैं–

- प्राकृतिक संसाधनों की गुणवत्ता एवं मात्रा में गिरावट।
- हमारे खाद्य और पानी में विषाक्त पदार्थो की मात्रा में वृद्धि से खाद्य सुरक्षा में कमी।
- जलवायु परिवर्तनः रासायनिक व सघन कृषि से ग्रीन हाऊस गैसों का उत्सर्जन।
- रासायनिक अवशेषों के कारण निर्यात खेप को रद्द करने के साथ–साथ व्यापार सुरक्षा के मामले।
- रासायनिक खेती में अधिक लागत के साथ–साथ जोखिम।

जैविक खेती के प्रमुख घटक

- **मृदा उर्वरता प्रबंधनः** जैविक खेती में पोषक तत्वों की आपूर्ति एवं भूमि की उर्वरा शक्ति को बनायें रखने के लिए रासायनिक उर्वरकों के स्थान पर विभिन्न प्रकार की जैविक खादों जैसे गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद, वर्मी–कम्पोस्ट, नाडेप कम्पोस्ट के अतिरिक्त हरी खाद तथा जैव उर्वरकों का उपयोग किया जाता हैं।

- **खरपतवार नियंत्रणः** जैविक खेती में खरपतवारों का समुचित प्रबंधन अत्यन्त आवश्यक हैं। इसके लिए रासायनिक खरपतवार नाशियों के स्थान पर यांत्रिक एवं सस्य क्रियाओं जैसे ग्रीष्म ऋतु में खेत की गहरी जुताई, भूमि का सौर्यकरण, निराई–गुड़ाई, उचित फसल चक्र, मल्चिंग, उचित सिंचाई प्रबंधन आदि विधियों का परिस्थिति के अनुसार प्रयोग करके खरपतवारों से होने वाली हानि से बचा जा सकता हैं।

- **कीट–व्याधि नियंत्रणः** जैविक खेती में रासायनिक कीटनाशकों, फफूँद नाशकों, का प्रयोग वर्जित हैं। इनके स्थान पर निम्नलिखित विधियो का उपयोग किया जाता हैं
  - ग्रीष्मकाल गहरी जुताई।
  - यांत्रिक विधिः प्रकाश पाश, फेरोमोन ट्रेप, अंडो व लार्वा को एकत्र करके नष्ट करना।
  - परजीवी एवं परभक्षीः ट्राइकोग्रामा, काक्सीनेला, क्राइसोपरला, सिरफिड, मिरिड बग, एपेन्टेलिस, टेट्रास्टीकस।
  - जैव–कीटनाशी/फफूँदनाशी एवं वानस्पतिक उत्पादों का प्रयोगः ट्राइकोडर्मा, एन.पी.वी., ब्यूबेरिया बेसियाना, नीम उत्पाद आदि।

जैविक खेती के उद्देश्य

प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षणः जैविक कृषि का मुख्य उद्देश्य उच्च गुणवत्तायुक्त पूर्ण उत्पादन के साथ–साथ प्राकृतिक संसाधन (मृदा, जल, वायु, जैव विविधता, एवं अनवीनीकरण उर्जा) का संरक्षण ताकि खेती में टिकाऊ उत्पादन ले सके। प्राकृतिक संसाधनों व उर्जा के अनवीनीकरण स्त्रोत के अधाधुंध उपयोग को कम करना तथा मृदा में उपस्थित सूक्ष्म

जीवों की कियाशीलता को कार्बनिक खादों के उपयोग से बढ़ाकर भूमि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाना हैं।

खेती की लागत को कम करना: जैविक खेती एक वातावरण अनुकूल उत्पादन प्रणाली जिसमे बाहरी कृषि आदानो पर निर्भरता नही होती है तथा पारिस्थि की सिद्धान्त उपयोग कर इष्टतम उपज प्राप्त की जाती है जिससे उत्पादन लागत में कमी आती है। यह पद्धति संसाधन विहिन किसान खासतौर से शुष्क व वर्षा आधरित क्षेत्र में खेती वाले के लिए महत्वपूर्ण हैं।

स्वच्छ भोजन: स्वच्छ भोजन से तात्पर्य हानिकारक कृषि रसायन व भारी तत्वों से मुक्त भोजन जो कि की स्वादिष्ट व पौष्टिक होता हैं। जैविक खेती का यह एक मुख्य उद्देश्य हैं और सभी संभव विधियों का उपयोग न केवल कृषि उत्पादों को प्रदूषित होने से बचाना बल्कि आसपास के पर्यावरण, वायु, मृदा व जल को भी संरक्षित करना। जैविक रुप से उत्पादित किये गए खाद्य पदार्थ स्वास्थ्य के लिए काफी लाभप्रद हैं। सामान्य खाद्य पदार्थो की अपेक्षा इनमें अधिक पोषक तत्व होते हैं क्योंकि इन्हे जिस मिट्टी में उगाया जाता है वह अधिक उपजाऊ होती हैं।

जैविक खाद्य पदार्थ शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं। साथ ही इनको लम्बे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता हैं। जैविक खेती द्वारा उगाए जानें वाले फलों एवं सब्जियों में ज्यादा एंटी–ऑक्सिडेंट्स होते हैं क्योकि इनमें पेस्टीसाइड अवशेष नही होता हैं। आधुनिक एवं सघन कृषि प्रणाली में खाद्य पदार्थ को खराब होने से बचाने के लिए एंटीबायोटिक दिये जाते हैं। जब हम ऐसे खाद्य पदार्थ को खाते हैं तो हमारा रोगप्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है। इसके अलावा जैविक तरीके से उत्पादित खाद्य में अधिक मात्रा मे खनिज, विटामिन्स एवं शुष्क पदार्थ पाये जाते है। साथ ही जैविक उत्पादों में नाइट्रेट की मात्रा कम होती है जो मानव स्वास्थ्य के लिए सुरक्षित होती हैं।

खेती सें आय को बढ़ाना: जैविक रुप से उत्पादित उत्पादों की राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में अधिक मांग हैं तथा इनसे मिलने वाली कीमत परम्परागत रुप उगाई कृषि उत्पादों की तुलना में कई गुना ज्यादा मिलती हैं। घरेलू क्षैत्र में भी जैविक उत्पादों की मांग जबरदस्त बढ़ रही है, यह मुख्यतया मध्यम एवं उच्च आय वर्ग के लोगो में जो पेस्टिसाइड व रासायनिक उर्वरकों के दुष्पभाव के प्रति सजग हैं।

मृदा स्वास्थ्य में सुधार: जैविक उत्पादन प्रणाली में मृदा स्वास्थ्य को कार्बनिक खादों के उपयोग से बेहतर किया जा सकता है क्योंकि इससे मृदा में सूक्ष्म जीवों की क्रियाशीलता को बढ़ावा मिलता हैं। इसके विपरीत रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों से इन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हैं। जैविक खेती के परिपेक्ष में मृदा स्वास्थ्य एवं पर्यावरण संरक्षण के सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण विशेषताऐं निम्नलिखित हैं

- जैविक रुप से प्रबन्धित भूमि, मृदा क्षरण के प्रति अवरोधी होती है तथा इसमें नमी व पोषक तत्वों का संरक्षण एवं उनकी उपलब्ध्ता बढ़ जाती हैं।
- जैविक खेती से मृदा उर्वरता को जीवांश पदार्थ, सूक्ष्म जीवों की क्रियाशीलता, फसल चक्र व अंतरासस्यन के सिद्धान्त पर लम्बे समय तक बनाये रखा जा सकता है।
- जैविक खेती में सभी पोषक तत्वों की पूर्ति सन्तुलित मात्रा में होती हैं जिससे पौधों का वृद्धि एवं विकास अच्छा होता हैं व मृदा की जैविक क्रियाशीलता में बढ़ोतरी होती हैं तथा पोषक तत्वों का ह्रास कम होता हैं जिससें पर्यावरण प्रदूषण कम होता हैं।
- जीवांश पदार्थ सूक्ष्म जीवों के लिए भोजन का कार्य करता है जिससे मृदा की संरचना को स्थिर रखा जा सकता हैं।
- जैविक खेती में दलहनी व आच्छादित फसलें, पलवार, अंतरासस्यन व कृषि वानिकी का मृदा क्षरण व विच्छेदन को कम करने में महत्वपूर्ण योगदान होता हैं।
- जैविक कृषि उत्पादन तकनीक, मृदा में जीवांश पदार्थ की मात्रा को बढ़ाती है जिससे मृदा समुच्चयन व जल धारण क्षमता में वृद्धि होती हैं।
- पशुओं की खाद, हरी खाद और कम्पोस्ट से पौधों के आवश्यक पोषक तत्वों की पूर्ति का पुनः भरण किया जा सकता हैं।
- दलहनी फसलें नत्रजन पोषक तत्व का महत्वपूर्ण स्त्रोत हैं। स्थानीय पोषक तत्वो के स्त्रोत जैसे कम्पोस्ट, पशुओं का गोबर आदि जीवकोर्पाजन व संसाधन विहीन कृषकों के लिए विशेषकर महत्वपूर्ण होते हैं।
- मृदा में अधिक जीवांश पदार्थ व आच्छादित फसलों के कारण मृदा की जल धारण क्षमता में वृद्धि होती है तथा इसके परिणामस्वरुप फसलों में सिंचाई जल की आवश्यकता कम हो जाती हैं।
- जैविक खेती जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करती है क्योंकि इससे ग्रीन हाऊस गैसों का उत्सर्जन कम होता हैं विशेषकर नाइट्रस ऑक्साइड क्योंकि नाइट्रोजन रासायनिक उर्वरकों का उपयोग नही किया जाता हैं तथा पोषक तत्वों का ह्रास कम हो जाता हैं।
- रासायनिक उर्वरक एवं पेस्टीसाइड का उपयोग नही करके उर्जा की 30–70 प्रतिशत प्रति इकाई भूमि की आवश्यकता को कम किया जा सकता हैं।
- फसल विविधता का संरक्षण किया जा सकता हैं जिससे प्राकृतिक चक्र को उत्पादन प्रणाली में बढ़ावा मिलता हैं।
- जैविक खेती, कृषि में लाभप्रद वनस्पति एवं जीवों को उनके प्राकृतिक आवास में बढ़ावा देती हैं।

पशुपालन से करें आय दौगुनी

घनश्याम मीना, राकेश कुमार बैरवा एवं कमला महाजनी
कृषि विज्ञान केन्द्र, बून्दी

किसानों की आय दुगनी करने में खेती के साथ–2 पशुपालन का महत्वपूर्ण योगदान है। गावों मे किसानों द्वारा उत्पादित दूध के बिचोलियों की वजह से अच्छे दाम नहीं मिल पाते हैं क्योंकि बिचोलिए दूध का असली मुनाफा खुद ही ले लेते हैं। यदि दूध को ग्रामीण स्तर पर ही प्रसंस्कृत किया जावे तो अच्छा मुनाफा कमाया जा सकता है। कृषि में स्वरोजगार की सम्भावनाओं को तलाशते हुए ग्रामीण क्षेत्र का एक बेरोजगार युवक श्री बंशीलाल सुमन जो कि गांव देवपुरा जिला बून्दी का रहने वाला है, श्री सुमन जी ने स्नातक की पढाई कला वर्ग में राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय बून्दी से पूरी करने के बाद सरकारी नौकरी के लिए तैयारी की। सरकारी नौकरी नही मिलने पर घरवालों के साथ खेती में हाथ बटाना शुरू कर दिया। एक दिन रोजगार की तलाश में कृषि विज्ञान केन्द्र बून्दी पर आया। केन्द्र के वैज्ञानिको नें समझाया कि आप रोजगार कि तलाश नहीं करे और खुद दूसरो को रोजगार देने कि सोच् रखे। कृषि विज्ञान केन्द्र बून्दी के वैज्ञानिको नें इन्हे कृषि से जुडे कई रोजगार सुझाऐ। सुमन जी की रुचि दूध से जुडे व्यवसाय में होने के कारण वैज्ञानिको नें सुझाया कि आप कृषि के साथ साथ पशुपालन भी करें, जिससे आपको अच्छा रोजगार मिलेगा और दूसरे लोगो को भी रोजगार दे सकेगें और अपने माता–पिता के साथ रह कर उनकी सेवा भी कर सकेगे। इसके बाद सुमन जी ने कृषि विज्ञान केन्द्र बून्दी से पशुपालन में प्रशिक्षण लिया और कृषि विज्ञान केन्द्र बून्दी के माध्यम से राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान करनाल में पॉच दिवसीय भ्रमण एवं प्रशिक्षण लिया। इसके बाद श्री सुमन जी ने वर्ष 2016–17 में कृषि विज्ञान केन्द्र बून्दी से दो गाय खरीद कर कृषि विज्ञान केन्द्र के तकनीकि सहयोग से अपना पशुपालन का कार्य शुरु किया। सबसे पहले 2 ली. दूध प्रतिदिन बेचना शुरू करने के बाद आज इनके पास 6 गायें है जिनमें से 4 दूध दे रही है और 2 ग्याभिन है जिनसे ये 70–80 लीटर गाय का दूध 40 से 50 रु लीटर प्रतिदिन बेच रहे हैं। श्री सुमन जी अपने फार्म का दूध सरकारी कॉलोनी में अधिकारियों के घर पर देते हैं। गाय के दूध का घी भी बनाते है जिसे ये 1500 रु प्रति किलो में बेचते हैं। इनके फार्म के दूध और घी की बहुत मांग रहती है। इनकी गायें और बछड़िया पशु मेलो में प्रदर्शनियो में इनाम जीतते है। सुमन जी अपने पशुओ के लिए पशु आहार घर पर ही बनाते हैं। पशुओ को समय समय पर टीकाकरण व परजीविनाशन करते हैं। नस्ल सुधार के लिए कृत्रिम गर्भाधान करवाते है। पशुओ को वर्ष भर हरा चारा उपलब्ध करवाते हैं। गाय के दूध प्रसंस्कृत कर अन्य पदार्थ भी बनाते है जैसे– क्रीम, घी व पनीर आदि और इन दूध एवं दुग्ध पदार्थो को थैलियो में पैक कर सप्लाई करते है। प्रशिक्षण लेने के बाद इन्होने अपने प्लांट पर घी व पनीर की पैकिंग कर बाजार मे बेचना शुरू किया। इससे इनका मुनाफा बढता गया। उन्नत पशुपालन से उत्पादित गोबर से ये वर्मीकम्पोस्ट भी बना रहे है जिसे ये अपने खेतो में फसल एवं चारा उत्पादन में काम में ले रहें है जिससे रासायनिक उर्वरको की कम आवश्यकता पड़ती है तथा रासायनिक उर्वरको की लागत की बचत होती है और जैविक फसल, चारा एवं दुध उत्पादन को बढावा मिलता है। कृषि विज्ञान केन्द्र के वैज्ञानिको ने व्हाट्सअप पर एक समूह बना रखा है जिससे ये नई नई जानकारी साझा करते रहते है। इसके अलावा भी ऐ कई समुहो से भी जुड़े है जहॉ से ये नई नई जानकारी लेते रहते है। ये अपने फार्म पर पर दो बेरोजगार युवको को भी रोजगार उपलब्ध करा रहे है जिन्हे ये 7 – 7 हजार रू प्रति माह नगद व रहने एवं खाने का खर्चा अलग से देते है। इससे इनका एक वर्ष का शुद्ध मुनाफा लगभग 1, 50, 000 रू हो रहा है।